सूद के जदीद मसाएल पर तहकीकी किताब

मसाएले सूद

बकलम

सुलतानुल असातज़ा शैखुल कुरान हज़रत अल्लामा

अब्दुल्लाह खान अज़ीज़ी

अलैहिर्रहमा-साबिक सद्रूल मुदर्रिसीन

दारूल उलूम अलीमिया, जमदा शाही

बस्ती, उ० प्र०

तखरीज, तसहीह

मुफ्ती कमाल अहमद अलीमी निज़ामी

दारूल उलूम अलीमिया, जमदा शाही

बस्ती, उ० प्र०

हिन्दी अनुवाद

मौलाना गुलाम सैयद अली अलीमी

दारूल उलूम मदीनतुल अरबिया, दोस्तपुर, सुल्तानपुर, उ० प्र०

हस्बे ख्वाहिश-हाजी वसीउद्दीन नूरानी व बेरादरान

नाशिर मुबल्लिग़-ए-इस्लाम रिसर्च सेन्टर, मुम्बई

तकसीमकार : मकतबा रज़्विया, जमदा शाही-बस्ती, उ०प्र०

विवरण

नाम किताब: मसाइले सूद
लेखक: शेखुल कुरआन अल्लामा अब्दुल्लाह खान अज़ीज़ी
संपादक: मुफ्ती कमाल अहमद अलीमी निज़ामी
हिन्दी अनुवाद: गुलाम सैयद अली अलीमी
इच्छानुसार: हाजी वसीउद्दीन नूरानी साहब व बिरादरान
कम्पोज़िंग: खान प्रिन्टर , बस्ती यू0 पी0
सन् प्रकाशन: 1446 हिजरी/ 2024 ई0
प्रकाशक: मुबल्लिग़-ए-इस्लाम रिसर्च सेन्टर, मुम्बई
वितरक: मकतबा रज़विया, जमदा शाही, बस्ती, उ0प्र0

Book's Name: **Masael-e-Sood**
Author: Shaikhul Quran Hazrat Allama **Abdullah Khan** Azizi Alaihir rahmah
Editor: Mufti **Kamal Ahmad** Alimi Nizami
Translator: **Ghulam Sayed Ali** Alimi
Publisher: Muballigh-e-Islam Research Centre, Mumbai.

मिलने के पते

- मकतबा रज़विया, जमदा शाही, बस्ती यू॰ पी॰
- अलीमी कुतुब खाना, जमदा शाही, बस्ती यू॰ पी॰
- मुबल्लिग-ए- इस्लाम रिसर्च सेंटर, मुस्तफा बाजार, मुम्बई

समर्पण

सुल्तानुल असातज़ा, शेखुल कुरआन हजरत अल्लामा **अब्दुल्लाह खान अज़ीज़ी** अलैहिर्रहमा को जिनकी कृपा दृष्टि से मुझ जैसा नाकारा इस काम के लायक़ हुआ।

और

वालिदैन करीमैन हाजी **वसीउद्दीन अहमद नूरानी साहब व बिरादरान** के नाम जिनकी माली कुर्बानी से इस किताब का प्रकाशन हुआ।

अल्लाह उन सबको बेहतरीन बदला दे।

कमाल अहमद अलीमी निज़ामी

दारुल उलूम अलीमिया,

जमदा शाही, जिला बस्ती

धन्यवाद

भेंट है मुईनुल मशायख़, शहज़ादा-ए- शहीदे राहे मदीना, ख़ानदाने अशरफिया की आंखों के नूर, हज़रत अल्लामा सैयद **मुईनुद्दीन अशरफ अशरफी जीलानी**, सज्जादा नशीन खानक़ाहे अशरफिया कछौछा शरीफ एवं अध्यक्ष आल इण्डिया सुन्नी जमीअतुल ओलमा (दामत बरकातुहुम) की बारगाहे अक़दस में जिनकी प्रेणना पर "मसाइले सूद" का हिन्दी संस्करण अस्तित्व में आया। अल्लाह तआला उन्हें लम्बी उम्र से नवाजे और उनकी बरकतें हमेंशा रखे।

कमाल अहमद अलीमी निज़ामी
दारुल उलूम अलीमिया,
जमदा शाही, जिला बस्ती

गुलाम सैयद अली अलीमी
दारुल उलूम मदीनतुल अरबिया,
दोस्तपुर, सुल्तानपुर

विषय-सूची

१-संक्षिप्त परिचय ________ *8*
२-अध्याय-1 ________ *13*
३-सूद के हराम होने के चार दौर ________ 13
४-पहला दौर ________ 13
५-दूसरा दौर ________ 14
६-तीसरा दौर ________ 15
७-चौथा दौर ________ 15
८-पहली आयते करीमा ________ 17
९-सूद-खोर के पागलपन का बयान ________ 18
१०-दूसरी आयत-ए-करीमा ________ 20
११-तीसरी आयत-ए-करीमा ________ 23
१२-चौथी आयते करीमा ________ 24
१३-पांचवें आयत-ए-करीमा ________ 25
१४-छठी आयत-ए-करीमा ________ 26
१५-सातवीं आयत-ए-क़रीमा ________ 27
१६-आयतों की शिक्षाओं का ख़ुलासा ________ 27
१७-अध्याय: 2 ________ *29*
१८-खून का दरिया ________ 29
१९-साँप के घर ________ 31
२०-सूद का गुनाह ज़िना(नाजायज़ शारीरिक संबंध) से कई गुना ज़्यादा बदतर ________ 31
२१-सूदखोरी का गुनाह माँ के साथ ज़िना करने से बदतर है ________ 32
२२-सूदी कारोबार की मदद भी हराम है ________ 34
२३-सूद हलाकत ख़ेज़ (घातक) है ________ 34
२४-अध्याय:3 ________ *36*
२५-सूद का अर्थ ________ 36

२६-रिबा (सूद) की क़िस्में ____ 38
२७-एक संदेह निवारण ____ 44
२८-एक ही जिन्स के फर्क का हुक्म ____ 45
२९-सवाल-जवाब ____ 48
३०-बहस का खुलासा ____ 55
३१-रिबा ए नसीइया की सूरतें ____ 56
३२-इमामों का मतभेद ____ 58
३३-हनफियों का मज़हब: ____ 58
३४-शाफईयों का मसलक: ____ 58
३५-मालिकीयों का मसलक: ____ 58
३६-अब्दुल मलिक बिन मासजून का मसलक: ____ 58
३७-एक संदेह का निवारण ____ 61
३८-अध्याय:4 ____ 63
३९-बैंककारी ____ 63
४०-अजीब-व-ग़रीब सवाल ____ 67
४१-एक इल्मी लतीफ़ा ____ 69
४२-बैंकों की ज़ायद रक़म का हुक्म ____ 71
४३-पहली किस्म के फतवे ____ 72
४४-दूसरी किस्म के फतवे ____ 74
४५-जीवन बीमा का हुक्म ____ 87
४६-*अध्याय:5 ____ 97*
४६-बैअ़ फ़ासिद(अनियमित बिक्री) के कुछ मसाइल ____ 97
४८-चेतावनी ____ 101
४९-लाटरी के हराम होने का बयान ____ 102
५०-रिश्वत ____ 105
५१-ख़यानत (विश्वासघात) ____ 112
४२-मुज़ारबत और उसकी अमान्य शर्तें ____ 114

४३-शिरकत (साझेदारी) और उसके अमान्यता की शक्लें ______ 117
४४-शिरकत फ़ासदा (अनियमत भागीदारी) के कुछ मसाइल ____ 120
४५-इजारा-ए-फ़ासदा(अवैध किरायादारी/मजदूरी)के कुछ मसाइल_ 122
४६-*अध्याय:6* ______________________________ *125*
४७-सदक़ा और सूद में विराधाभास है ____________________ 125
४८-फ़ज़ाइले सदक़ात ______________________________ 133
४९-ज़कात प्रबंधन का हुक्म ____________________________ 140
५०-मसाइले ज़कात__________________________________ 146

संक्षिप्त परिचय

शेखुल कुरआन अल्लामा अब्दुल्लाह खान अजीजी عليه الرحمه

गुलाम सैयद अली अलीमी

इस्म-ए-गरामी (शुभ नाम):

आपका नाम 'अब्दुल्लाह' है, जाति अनुसार आप खान बिरादरी के थे, इसीलिए आप नाम के साथ 'खान' लिखा करते थे, आप हाफ़िज़-ए-मिल्लत अल्लामा अब्दुल अज़ीज़ मुरादाबादी अलैहिर्रहमा के तिल्मीज-ए-रशीद (शिष्य) और सच्चे मुरीद थे, और आप से इश्क़ की हद तक लगाव रखते थे, इसलिए अपने शुभ नाम के साथ 'अज़ीज़ी' ज़रूर लगाते थे।

अलक़ाब (उपनाम):

अहले इल्म व दानिश ने आपकी सलाहियत, योग्यता, गहरे ज्ञान और इस्लाम व सुन्नियत के लिए आपकी सेवा को देखते हुए आपको शेखुल कुरआन, सुल्तानुल असातज़ा, उमदतुल मुदर्रिसीन और इस तरह के अनेक उपनाम और अलक़ाब से याद किया।

आपके बाप-दादा कई पुश्तों से कृषि व्यवसाय से जुड़े रहे।

वलादत ब सआदत

उत्तर पूर्वी उत्तर प्रदेश के मशहूर ज़िला गोंडा जो अलग होकर बलरामपुर हुआ है, उसके कस्बा पचपेड़वा की एक छोटी सी आबादी 'नाऊडीह' आपका घर और जन्म-स्थान है, यहीं आपकी वलादत हुई, असनाद और सरकारी कागज़ात में तारीखे पैदाइश 15 नवंबर 1935 ई० अंकित है।

प्रारंभिक शिक्षा

कुरआने हकीम का नाज़िरा और दीनियात की तालीम का प्रबंध घर ही पर हुआ, एक वरिष्ट मौलवी साहब जिनका नाम मियां अब्दुर्रहीम साहब था, उन्हीं से उर्दू की प्राथमिक किताबें और कुरआने हकीम के

नाज़िरा की शिक्षा हुई, फिर एक अच्छी योग्यता के मौलवी साहब गांव के मकतब में पढ़ाने के लिए बुलाए गए, उनसे उर्दू की बहुत सी किताबें पढ़ीं उसके बाद मौज़ा नाऊडीह से लगभग 4 किमी० की दूरी पर कस्बा पचपेड़वा के प्राईमरी स्कूल में दाखिला हुआ, वहां कक्षा 4 तक प्राईमरी शिक्षा हुई।

1946 ई० में जिला गोंडा के मशहूर कस्बा तुलसीपुर के मदरसा अनवारुल कुरआन में अरबी व फारसी की तालीम के लिए दाखिला हुआ, यहीं से वास्तव में बुनयादी तालीम का आरंभ हुआ, मदरसा उस समय गोंडा व बस्ती जिला के मशहूर आलिम-ए-दीन, सुल्तानुल मुनाज़िरीन हज़रत मौलाना अतीकुर्रहमान खान साहब अलैहिर्रहमा के प्रबंधन और संरक्षण में चल रहा था, यहां के शिक्षक मौलाना मुहम्मद अली साहब मरहूम मुफ्ती-ए-आज़म आगरा मौलाना अब्दुल हफीज़ साहब अलैहिर्रहमा के भाई थे, क़ाजी-ए-शरीअत हजरत अल्लामा मौलाना मोहम्मद शफी साहब आज़मी रहमतुल्लाह अलैह, बहरुल उलूम हजरत अल्लामा व मौलाना मुफ्ती अब्दुल मन्नान साहब क़िब्ला अलैहिर्रहमा हैं, आपकी कुदरती प्रतिभा और बुद्धिमत्ता के कारण इन माननीय शिक्षकों ने आपकी तालीम व तरबियत पर विशेष ध्यान दिया, जिससे आपके ज़हन व फिक्र में आगे बढ़ने की सलाहियत जाग उठी।

उच्च शिक्षा:

अनवारुल कुरआन में दर्जा खामिसा तक तालीम के बाद उच्च शिक्षा के लिए 1954 में दारुल उलूम अशरफिया, मुबारकपुर में दाखिला लिया, वहां आपने चार साल तक हाफिज-ए-मिल्लत हज़रत अल्लामा शाह अब्दुल अज़ीज़ मुहद्दिस मुरादाबादी, हजरत अल्लामा हाफिज अब्दुर्रऊफ साहब किब्ला बलयावी, शेखुल उलमा हज़रत अल्लामा गुलाम जीलानी आजमी रहमहुमुल्लाहो तआला और मौलाना ज़फर अदीबी जैसे सकुशल शिक्षक से शिक्षा हासिल की।

बैअ़त व इरादत:

आप अभी मदरसा अनवारुल उलूम,तुलसीपुर में तालीम हासिल कर रहे थे कि जामिया अशरफिया के संस्थापक हज़रत अल्लामा शाह अब्दुल अज़ीज़ साहब मुरादाबादी अलैहिर्रहमा का महान व्यक्तित्व, उनकी दीनदारी, उनके द्वारा हदीसों का अनुसरण, उनके ज्ञान और उनकी करुणा से प्रभावित होकर अपने महानुभाव शिक्षकों हजरत अल्लामा मोहम्मद शफी साहब आज़मी और हजरत अल्लामा मुफ्ती अब्दुल मन्नान साहब आज़मी के इशारे पर हजरत मुहद्दिस मुरादाबादी अलैहिर्रहमा के हाथों से बैअत हासिल करके सिलसिला-ए-आलिया क़ादरिया में दाख़िल हो गए।

शिक्षण

1957 ई० में तीलीम से फराग़त हुई और अशरफिया से दस्तार व सनदे फज़ीलत हासिल हुई, फिर आपके शिक्षण का स्वर्ण युग आरंभ होता है, सबसे पहले जामिया हमीदिया रिजविया बनारस फिर शाहजहांपुर के मशहूर मदरसा 'फैजे आम' में शिक्षण कार्य किया, दारुल उलूम रब्बानिया बांदा, दारुल उलूम फैजुर्रसूल बरांव जैसी शिक्षण संस्थाओं में अपनी खुदादाद सलाहियत का प्रदर्शन किया, अनेक दीनी शिक्षण संस्थाओं से संबंधित रहे, 1973 ई० में अपने मुरशिद-ए-बरह़क़ हाफिज-ए-मिल्लत अलैहिर्रहमा की तलबी पर जामिया अशरफिया में तशरीफ ले गये, जहां बारह साल से अधिक समय तक हज़ारों इल्म के प्यासों को इल्म व हिकमत के सोते से सैराब किया और इस महान संस्था की उत्कृष्ट सेवा करके उसकी ख्याति और नामवरी में चार चांद लगाया, आपकी शिक्षण का यह हाल था कि अशरफिया के छात्र दूसरी घंटियों को छोड़कर कभी-कभी आपके शिक्षण कक्ष के आस-पास जमा हो जाते थे, 1986 ई० में कुछ प्रतिकूल परिस्थितियों के नाते दारुल उलूम अशरफिया से त्याग-पत्र देकर तुलनात्मक रूप से एक छोटी सी दरसगाह दारुल उलूम अलीमिया, जमदा शाही, बस्ती की सेवा पर नियुक्त हुए, इस संस्था ने आपकी अगुवाई, संरक्षण और आपकी निस्वार्थ सेवाओं के फलस्वरूप

तालीम के मैदान तेज़ गति से विकास किया, और आज वह मुल्क की नामवर शिक्षण संस्थानों में गिना जाने लगा।

तसनीफी खिदमात (लेखन सेवाऐं)

शेखुल कुरआन की वह किताबें और लेख जो मेरी जानकरी में हैं उनमें से कुछ ये हैं, मआरिफ-अल-तंज़ील शरह मदारिक-अल-तंज़ील, मसाइले सूद, सफर-ए-हिजाज़, जिस्मानी मेराज का शरई सुबूत, ख्वातिर-ए-अक़्ली के अहकाम, इस्लाम में अक़्ले इन्सानी का एहतराम, क़ारी तय्यब के तसामुहात (कई किश्तों में), मसला-ए-कफाअत की वाजिह तसवीर, आलम-ए-ख्वाब की तफसीर, मुरशिद-ए-बरहक की अज़ीम शख्सियत, हाफिज-ए-मिल्लत कुद्दिसा सिर्रहू का नज़रिया-ए-तालीम, क़जी-ए- शरीअत इस्लाम के बे लौस खादिम, बहरुल उलूम की बारगाह में खिराज-ए- अक़ीदत, मौलाना अब्दुर्रऊफ की हयात व खिदमात, कायदे अहले सुन्नत अपने किरदार व अमल के आइनें में, उखुव्वत –ए-इस्लामी का एहतराम।

पहली दो किताबें छपकर मशहूर हो चुकी हैं, जब कि तीसरी किताब दरहकीकत लेख है जो माहनामा पयामे हरम में कई किश्तों में प्रकाशित हुआ है, इनके अलावा बाकी सब लेख हैं जो मुल्क की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में सुसज्जित हैं, जिनकों हजरत मौलाना कमाल अहमद अलीमी द्वारा संकलित करके ''मज़ामीने शेखुल कुरआन'' के नाम से मुबल्लिगे इस्लाम रिसर्च सेंटर, मुंबई से प्रकाशित कर दिया गया है।

वफात

इल्म व फज़्ल का यह सूरज ज़माने तक आसमाने इल्म पर चमकता-दमकता रहा लेकिन क़ानूने कुदरत के आगे चारा नही, अन्तत: एक दिन यह सूरज छुप गया, 14 शाबान अल मुअज़्ज़म 1432 हि० मुताबिक 17 जुलाई 2011 ई० को अपने ख़ालिक़े हक़ीक़ी से जा मिले। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन ।

18 जुलाई 2011, 2:00 बजे दिन को आपकी नमाज़े जनाज़ा हुई

और उसी दिन जमदा शाही के बाग़ में आपकी तदफीन हुई, यह हजरत शेखुल कुरआन की अलीमिया और जमदा शाही से मुहब्बत की आखिरी मंज़िल थी कि अपने शरीर को भी जमदा शाही की जमीन में मिला दिया।

इस तरह इल्म व फज्ल का यह सूरज छुप गया, निसंदेह आप चले गए मगर आपकी तदरीसी खिदमात, तसनीफी कारनामे और तामीरी कोशिशें हमेशा आपको जीवित रखेंगी, और जब तक दारुल उलूम अलीमिया सलामत रहेगा, शेखुल कुरआन की अज़मतों के झंण्डे लहराते रहेंगे।

अबरे रहमत उनके मदक़द पर गोहर बारी करे
हश्र तक शाने करीमी नाज़ बरदारी करे

अध्याय-1

الحمد لله و كفى وسلام على عباده الذين اصطفى، اما بعد!

सूद के हराम होने के चार दौर

खुदा-ए-क़ुद्दूस जब अपने बन्दों पर किसी ऐसी चीज़ को हराम करना चाहता है जो समाज में चारों तरफ फैली हुई हो और जिसकी जड़ें बहुत गहराई तक गई हुई हों तो उसका तरीका यह है कि पहले उसके हराम और निषेध होने के लिए जहनों को तैयार करता है, उसकी बुराईयों और खराबियों को बयान करके उसके प्रति नफरत व तिरस्कार की भावना पैदा करता है, इसी वैज्ञानिक शैली को खुदा-ए-क़ुद्दूस ने सूद के बारे में पसंद किया, जैसा कि सूद के निंदनीय और हराम होने को चार चरणों में बयान किया गया है, इसीलिए उन्हीं चरणों के अनुसार हम उन आयाते इलाहिया को ज़िक्र करते हैं जो सूद के बारे में नाज़िल की गयीं।

पहला दौर

मक्का मुकर्रमा में यह पहली आयत सूद के बारे में नाज़िल हुई।

وَمَآ ءَاتَيْتُم مِّن رِّبًا لِّيَرْبُوَاْ فِىٓ أَمْوَٰلِ ٱلنَّاسِ فَلَا يَرْبُواْ عِندَ ٱللَّهِ ۖ وَمَآ ءَاتَيْتُم مِّن زَكَوٰةٍ تُرِيدُونَ وَجْهَ ٱللَّهِ فَأُوْلَٰٓئِكَ هُمُ ٱلْمُضْعِفُونَ۔

तर्जुमा: और तुम जो चीज़ ज्यादा लेने को दो कि देने वाले के माल बढ़ें तो वह अल्लाह के यहां न बढ़ेगी और जो तुम खैरात दो अल्लाह की रज़ा चाहते हुये तो उन ही के दोगुने हैं।

यह पहली आयते करीमा है जो सूद के बारे में नाज़िल हुई, इसमें मामूली निंदा पर बस किया गया और सिर्फ यह बताया गया कि अल्लाह के नज़दीक सूद कोई अच्छी चीज़ नही है, तुम अपने ख्याल से यह सोचते हो कि इससे माल में बढ़ोतरी होगी, यक़ीन रखो इससे दौलत में वृद्धि नही होगी, बल्कि उस खैरात से तुम ज्यादा हासिल करोगे जो

निस्वार्थ ख़ुलूस-ए-नियत के साथ अल्लाह तआला की रज़ामंदी के लिए हो, यह एक नसीहत मात्र थी बस।

दूसरा दौर

इस दौर में यह आयते करीमा नाजिल हुई :

فَبِظُلْمٍ مِّنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ طَيِّبٰتٍ اُحِلَّتْ لَهُمْ وَ بِصَدِّهِمْ عَنْ
سَبِيْلِ اللّٰهِ كَثِيْرًا وَّ اَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُهُوْا عَنْهُ وَ اَكْلِهِمْ اَمْوٰلَ النَّاسِ بِالْبٰطِلِ ؕ
وَ اَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا [سورہ نساء:۱۶۰-۱۶۱]

तर्जुमा: तो यहूदियों के बड़े ज़ुल्म के सबब हम ने वह कुछ सुथरी चीज़ें कि उनके लिए हलाल थीं उन पर हराम फरमा दीं और इसलिए कि उन्होंने बहुतों को अल्लाह की राह से रोका और इसलिए कि वह सूद लेते हालांकि वह उस से मना किये गये थे और लोगों का माल नाहक खा जाते और उनमें जो काफिर हुए हमने उनके लिए दर्दनाक अज़ाब तैयार कर रखा है। (सूरह निसा आयत नं0 160-161)

यह सूरा ए निसा मदीना की आयते करीमा है, इसमें अल्लाह तआला ने यह वाकिया बयान किया कि यहूदियों पर सूद को हराम कर दिया गया था, लेकिन इससे वह रुके नही बल्कि उसको खाते रहे, इसकी वजह से उन पर अल्लाह की फटकार नाज़िल हुई कि इतनी पाक चीज़ें ऐसी थीं जो उनके लिए हलाल थी मगर उन पर कर दी गयीं और वह अल्लाह के ग़ज़ब के हक़दार हुए, सूरा ए रूम की उपर्युक्त आयत और सूरा ए निसा की इस आयत के तेवर में बड़ा फर्क नजर आ रहा है, इस आयते करीमा से झलक रहा है कि वह दिन दूर नही जब कि सूद को हराम कर दिया जायेगा क्योंकि यहूदियों के जुर्म और अपराधों की सूची में सूद खोरी को भी शुमार किया गया, इससे मालूम हो रहा कि इस जुर्म से मुसलमानों को भी बचना चाहिए, लेकिन स्पष्ट रूप से सूद की हुर्मत नही बयान की गयी बल्कि कलाम का रुख दूसरे लोगों की तरफ फिर

इशारा सूद के हराम होने की तरफ किया गया, ताकि अचानक पूर्ण प्रतिबंध से मुसलमान मानसिक अशांति से ग्रस्त न हों।

तीसरा दौर

इस दौर में सूरह आले इमरान की आयते करीमा नाज़िल हुई -

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوا الرِّبٰۤوا اَضْعَافًا مُّضٰعَفَةً ۖ وَّاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ[آل عمران:١٣٠]

तर्जुमा: ऐ ईमान वालो। सूद दोगुना करके न खाओ और अल्लाह से डरो इस उम्मीद पर कि तुम्हें कामयाबी मिले। (आले इमरान आयत नं0 130)

मदीना मुनव्वरा में यहूदियों के सूदी अत्याचार बहुत थे, अगर एक बार अपने किसी शिकार को सूद के जाल में फंसा लेते, तो उसके लिए उससे निकल पाना नामुमकिन हो जाता था, ऐसी सूद खोरी के माहौल में यह आयते करीमा नाजिल हुई, और मुसलमानों पर सूद को हराम क़रार दिया गया और उनसे यह मुतालबा किया गया कि सूद खोरी की उस लानत से जिसमें यहूदी साहूकार गिरफ्तार हैं, अपने को बहुत दूर रखो लेकिन अभी तक मुकम्मल तौर से सूद के हराम होने का बयान नही है।

चौथा दौर

इस दौर में सूरा ए बक़रह की ये सात आयतें नाज़िल हुईं।

① اَلَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ الرِّبٰوا لَا يَقُوْمُوْنَ اِلَّا كَمَا يَقُوْمُ الَّذِىْ يَتَخَبَّطُهُ الشَّيْطٰنُ مِنَ الْمَسِّ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوْۤا اِنَّمَا الْبَيْعُ مِثْلُ الرِّبٰوا وَاَحَلَّ اللّٰهُ الْبَيْعَ وَحَرَّمَ

1- वो जो सूद खाते हैं क़यामत के दिन न खड़े होंगे मगर जैसे खड़ा होता है वह जिसे आसेब (प्रेतबाधा) ने छूकर मख़बूत (पागल) बना दिया हो यह इसलिए कि उन्होंने कहा बेअ (विक्रय) भी तो सूद ही के समान है, और अल्लाह ने हलाल किया

الرِّبٰوا فَمَنْ جَآءَهٗ مَوْعِظَةٌ مِّنْ رَّبِّهٖ
فَانْتَهٰى فَلَهٗ مَا سَلَفَ وَاَمْرُهٗٓ اِلَى
اللّٰهِ وَمَنْ عَادَ فَاُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ
النَّارِ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ۔

बेअ को और हराम किया सूद तो जिसे उसके रब के पास से नसीहत आई और वह बाज़ (रुका) रहा तो उसे हलाल है जो पहले ले चुका और उसका काम ख़ुदा के सुपुर्द है और जो अब ऐसी हरकत करेगा तो वह दोज़ख़ी है, वो उसमें मुद्दतों रहेंगे।

٢ يَمْحَقُ اللّٰهُ الرِّبٰوا وَيُرْبِي
الصَّدَقٰتِ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ كَفَّارٍ
اَثِيْمٍ۔

2- अल्लाह हलाक करता है सूद को और बढ़ाता है ख़ैरात को और अल्लाह को पसन्द नहीं आता कोई नाशुक्रा बड़ा गुनहगार।

٣ اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا
الصّٰلِحٰتِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا
الزَّكٰوةَ لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا
خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ۔

3- बेशक वो जो ईमान लाए और अच्छे काम किये और नमाज़ क़ायम की और ज़कात दी उनका नेग उनके रब के पास है और न उन्हें कुछ अन्देशा (डर) हो न कुछ ग़म।

٤ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ
وَذَرُوْا مَا بَقِيَ مِنَ الرِّبٰوٓا اِنْ كُنْتُمْ
مُّؤْمِنِيْنَ۔

4- ऐ ईमान वालो, अल्लाह से डरो और छोड़ दो जो बाक़ी रह गया है सूद, अगर मुसलमान हो।

٥ فَاِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا فَاْذَنُوْا بِحَرْبٍ
مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَاِنْ تُبْتُمْ فَلَكُمْ

5- फिर अगर ऐसा न करो तो यक़ीन कर लो अल्लाह और

رُءُوْسُ اَمْوَالِكُمْ لَا تَظْلِمُوْنَ وَلَا تُظْلَمُوْنَ۔

अल्लाह के रसूल से लड़ाई का और अगर तुम तौबा करो तो अपना अस्ल माल ले लो न तुम किसी को नुक़सान पहुंचाओ न तुम्हें नुक़सान हो।

(٦) وَاِنْ كَانَ ذُوْعُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ اِلٰى مَيْسَرَةٍ وَاَنْ تَصَدَّقُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ۔

6- और अगर क़र्जदार तंगी वाला है तो उसे मोहलत दो आसानी तक और कर्ज़ उस पर बिल्कुल छोड़ देना तुम्हारे लिये और भला है अगर जानो।

(٧) وَاتَّقُوْا يَوْمًا تُرْجَعُوْنَ فِيْهِ اِلَى اللّٰهِ ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ۔ (البقرة: ٢٧٥-٢٨١)

7- और डरो उस दिन से जिसमें अल्लाह की तरफ़ फिरोगे और हर जान को उसकी कमाई पूरी भर दी जाएगी और उन पर जुल्म न होगा (अल बक़रह: 275-281)

यह सूरा ए बक़रह की वो आयतें हैं जिनसे न सिर्फ सूद को निषेध ठहराया गया बल्कि विभिन्न शैलियों और व्यापक एवं सार्थक अन्दाज़ में हुर्रमत के साथ-साथ अज़ाब के डरावे भी नाज़िल किये गये, कुछ मुफस्सिरीन के अनुसार ये आयतें सन् 8 हि0 में नाज़िल हुईं, अब इसके हराम होने का मरहला (चरण) मुकम्मल हो गया, किसी तरह की गुन्जाइश बाक़ी नही रह गयी, कि कोई शख्स सूद खोरी का जवाज़ (औचित्य) पैदा करे, हर हाल में कम-ज़्यादा सूद को हराम क़रार दिया गया, मगर ये कि कोई इज़तिरार (मजबूरी) की सूरत पैदा हो जाये।

पहली आयते करीमा

सूद खोर की यह हालत बयान की गयी कि मैदाने महशर में वह इस तरह उठेगा कि जैसे कि आसेब ज़दा चलता है, कभी लड़खड़ाता है कभी उसके क़दम डगमगाते हैं, कभी उन्माद में इधर-उधर के चक्कर

लगाता है, कभी दो क़दम आगे बढ़ता है और ठिठक कर रुक जाता है, ठीक इसी तरह एक सूद-ख़ोर की भी चाल होगी, वो अपनी सूद-खोरी की हवस की बुनियाद पर दुनिया में अपनी अक़्ल से बेगाना हो कर अजीब-व-ग़रीब हरकतें, अपनी नफसानी ख्वाहिशात के लिए करता था और उसके स्वभाव का संयम ख़त्म हो गया था, इसी तरह वह आख़िरत में भी अज़ाबे इलाही की वजह से अजीब-व-ग़रीब दहशतनाक हालत में गिरफ्तार होगा, वह पागल न होगा लेकिन पागलों जैसी हालत होगी, उसकी ये हालत क्यों होगी?

सूद-खोर के पागलपन का बयान

उसकी ये हालत इसीलिए होगी कि उसने दुनिया में अपनी सूद ख़ोरी वाली मांनसिकता की संतुष्टि के लिए क़यास किया था कि सूद भी तो ख़रीद-व-फ़रोख़त की तरह है, लेकिन इस को बतौर मुबालग़ा (बढ़ा चढ़ाकर) उलट कर यह कहा था कि ख़रीद फ़रोख़्त भी सूद की तरह है, यानी तिजारत में बुनियादी मक़सद ये होता है कि कुछ न कुछ लाभ कमाया जाये, चीज़ो के लेन-देन से कुछ न कुछ ज़्यादती का इरादा होता है, तो सूद लेकर अगर ज़्यादती हासिल की जाए या लाभ कमाया जाये तो इसमें क्या बराई है? अगर कोई शख़्स पच्चीस रुपया लेकर बाज़ार से कोई सौदा लाए फिर उसको पच्चास रुपया में बेच कर के लाभ हासिल कर सकता है तो यही पचास रुपया देकर सीधे तौर पर पाँच रुपया ज़्यादा क्यों नहीं ले सकता? सूदखोरों के इस क़यास और अनुमान को क़ुरआने हकीम ने अमान्य घोषित कर दिया, यह अंधकार युग के सूद-ख़ोर थे, जो इस किस्म की जाहिलाना दलील पेश करते थे, लेकिन इस उज्जवल युग में भी अक्ल व होश के दावेदार और इल्म-व-फ़न में परिपूर्ण होने के दावेदार भी इस किस्म का क़यास पेश करते हैं, क़ुरआने हकीम ने इस क़यास की अमान्यता पर कोई तार्किक दलील नहीं क़ायम की बल्कि अपने हकीमाना अंदाज़ में इरशाद फ़रमाया:

وَاَحَلَّ اللّٰهُ الْبَيْعَ وَحَرَّمَ الرِّبٰوا البقرة:٢٧٥

तर्जुमा: और अल्लाह ने तिजारत को हलाल किया और सूद को हराम किया, तो फिर कैसे दोनों एक जैसे हो सकते हैं, क्यों कि ख़ुदा की ज़ात-ए-पाक हिक्मत वाली है, ना-मुम्किन है कि दो चीज़ों में मुकम्मल एकरूपता के बावजूद दोनों का हुक्म अलग-अलग हो, सूद और व्यापार के नियम जब अलग हो गए तो इसी से यह समझा जा सकता है कि दोनों में बहुत फ़र्क़ है, मगर उस ज़माने के कुफ़्फ़ार और इस दौर के उपद्रवी सूद-ख़ोर दोनों इस बात को समझ नहीं पाते कि कोई कारोबार हो या कोई व्यापार आदमी उसमें अपनी मेहनत और दौलत या मेहनत और दौलत दोनों खर्च करता है, इसमें उसको कुछ न कुछ नुक़्सान का ख़तरा मोल लेना पड़ता है यानी उसको किसी निश्चित लाभ की ज़मानत नहीं होती है, लेकिन सूद पर क़र्ज़ देने वाला या सूदी कारोबार करने वाला एक ऐसा नफ़ा ख़ोर है कि उसको कभी भी नुक़्सान का अंदेशा नहीं होता है और ज़रूरी तौर पर उसको हमेशा अपनी पूंजी या अपने मूल धन से ज़्यादा रक़म मिलती रहती है।

इससे समझ लेना चाहिए था कि व्यापार और सूदी कारोबार में कितना बड़ा फ़र्क़ है, और दोनों में किसी तरह की एकरूपता नहीं पाई जाती है, एक तो सभ्यता और संस्कृति के तरक्की के लिए ज़रूरी है, एक तो मानव अर्थ व्यवस्था के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जिसके बग़ैर जीवन के पड़ावों में समाजी ज़िंदगी के दरवाज़े बंद हो जाते हैं, और दूसरा इन्सानों की अर्थव्यवस्था की गैर बराबरी का साधन है, और समाजी ज़िंदगी के स्तंभों को खोखला कर देने वाला है, एक अख़लाक़-व-नैतिकता, इन्सानी शराफ़त-व-भलाई की भावनाओं को नष्ट कर देने वाला है, दूसरा आपसी उलफ़त-व-मुरव्वत, एक दूसरे से मेल मिलाप पैदा कर देने का सबब है, इसलिए दोनों एक कैसे हो सकते हैं?

तिजारत और सूद में फ़र्क़ इतना साफ था कि क़ुरआने हकीम में इसको विचारणीय नहीं बताया गया क्योंकि थोड़े से ग़ौर-व-फिक्र से सूद की बुराइयां और ख़राबियां स्पष्ट हो जाती हैं।

दूसरी आयत-ए-करीमा

इस आयत में यह हक़ीक़त स्पष्ट की गई है कि सूद से अगरचे बज़ाहिर माल में बढ़ोतरी नज़र आती है फिर अपने परिणामों के एतबार से धन की तबाही-और-बर्बादी की प्रस्तावना है, और सदक़ात-व-ख़ैरात से माल में इज़ाफ़ा होता है, अगर अख़लाक़ी ऐतबार से ग़ौर किया जाए तो ये बात बिल्कुल साफ़ है कि सूद इन्सान के अंदर जो अवगुण पैदा करता है वह क़ौमों और समूहों के बीच नफरत का सबब होती है, उससे अगर एक तरफ़ क़ारून जैसे लोग पैदा होते हैं जिनके यहां धन-दौलत का ढेर लगा रहता है तो दूसरी ओर निर्धनता और तंग-दस्ती को उरूज हासिल होता है, जिससे वर्ग युद्ध और आपसी संघर्ष की राह खुलती है जिसका नतीजा सिवाए बर्बादी के कुछ नहीं है।

आप आर्थिक हैसियत से ग़ौर करें तो आपको मालूम होगा कि सूद की दो किस्म हैं :**एक** तो वह सूदी क़र्ज़ जो निजी ज़रूरत के लिए ज़रूरतमंद और मजबूर लेते हैं, **दूसरा** वह सूदी क़र्ज़ जो उद्योग और वाणिज्य, व्यापार और कृषि के कामों में लगाने के लिए लिया जाता है, पहली किस्म का सूद ज़ाहिर है कि इससे दौलत में कैसे इज़ाफ़ा होगा, सूद का यह तरीक़ा बड़ा दर्दनाक और हानिकारक होता है, दुनिया के तमाम देशों में महाजन और महाजनी संस्थाऐं, एवं बैंक इसके माध्यम से ग़रीब मज़दूर और किसानों का ख़ून चूसते हैं, सूद की वजह से इस किस्म का क़र्ज़ अदा करना सख़्त मुश्किल होता है बल्कि कभी-कभी नामुमकिन हो जाता है, एक क़र्ज़ को अदा करने के लिए दूसरा और तीसरा क़र्ज़ लेना पड़ता है जिससे इन्सान अपनी बेबसी की मौत मर

जाता है, बाक़ी दूसरी किस्म का सूदी क़र्ज़ जो कारोबार में लगाने के लिए लिया जाता है इसके नुक़्सानात भी बहुत हैं।

1- जिन कामों के लिए सूद पर धन मिलता है चाहे वह व्यावसायिक काम हो या औद्योगिक या कृषि उनमें से कोई भी काम ऐसा नहीं है कि जिसमें इस बात की ज़मानत मौजूद हो कि हमेशा तमाम हालात में इसके मुनाफ़े एक निश्चित समय सीमा में मसलन पाँच, छः प्रतिशत या दस प्रतिशत रहेगा, इससे ऊपर ही रहेगा कभी इससे नीचे नहीं गिरेगा, इसकी ज़मानत होना तो दर-किनार किसी कारोबार में इस बात की कोई गारंटी मौजूद नहीं कि इसमें ज़रूर मुनाफ़ा होगा कभी नुक़्सान ना होगा।

2- दूसरी बात, चूँकि पूंजी देने वाला कारोबार के लाभ-हानि में भागीदार नहीं होता बल्कि सिर्फ़ लाभ और वह भी एक निश्चित लाभ दर की गारंटी पर रुपया देता है इस वजह से कारोबार की भलाई-व-बुराई से उसको किसी किस्म की दिलचस्पी नहीं होती, और अत्यंत स्वार्थ के साथ सिर्फ अपने मुनाफ़ा पर नज़र रखता है, और जब कभी उसको अंदेशा हो जाता है कि मंडी पर मंदी का हमला होने वाला है तो वह सबसे पहले अपना रुपया खींचने की फ़िक्र करता है, इस तरह तो कभी सिर्फ उसके स्वार्थी अंदेशों ही के कारण दुनिया पर मंदी का वाक़ई हमला हो जाता है और कभी अगर दूसरे कारण से मंदी आ गई तो पूंजीपति का स्वार्थ उसे बढ़ाकर अत्यधिक हानिकारक हद तक पहुंचा देता है।

ये तमाम नुक़्सानात जिनको आधुनिकतावाद दार्शनिक बयान करते हैं अगरचे हक़ीक़त में सही हों, फिर भी उसका संबंध इस आयत-ए-करीमा से स्पष्ट नहीं हो रहा है, इसलिए मेरे नज़दीक उन मुफ़स्सिरीने किराम की बात ज़्यादा दुरुस्त मालूम होती है जो यह कहते हैं कि आयत का मफ़हूम यह है कि आख़िरत में सूद का माल उसके काम न

आएगा बल्कि यही सूदी दौलत उसके लिए वबाले जान होगी, और इसकी वजह से अज़ाब-ए-अलीम में गिरफ़्तार होगा, और ख़ैरात करने वालों का माल अनन्त प्रसंन्नता और राहत का ज़रीया होगा, लेकिन यह नहीं समझना चाहीए कि सूद के बुरे प्रभाव और परिणाम दुनिया में कभी नहीं ज़ाहिर होंगे, बल्कि सही बात तो यह है इससे दुनिया में भी ज्यादातर तबाही के आसार देखने में आते हैं, जिस माल में सूद शामिल होता है कभी-कभी वह ख़ुद खत्म हो जाता है जैसा कि सट्टा बाज़ारों में इसका नजारा आए दिन होता रहता है कि बड़े बड़े करोड़पति, पूंजीपति देखते देखते निर्धन और पैसे के मुहताज हो जाते हैं, यक़ीनन बे सूद के व्यापारों में नफ़ा-नुक़्सान दोनों की संभावना होती है, लेकिन ऐसा कम होता है कि कोई आदमी करोड़पति हो और चंद घंटे के बाद एक एक दाने का मुहताज हो जाए, ये सिर्फ़ सूद और सट्टा बाज़ारों में होता है, बहर-ए-हाल सूद का माल कितना ही बढ़ जाये वह बाक़ी नहीं रहता, जैसा कि मशहूर ताबई हज़रत मुअम्मर ने फ़रमाया कि सूद-ख़ोर के ऊपर चालीस साल नहीं गुज़र पाते कि उसके ऊपर आफ़ते इलाही आ जाती है, हो सकता है कि माल नष्ट और बर्बाद न हो तो इसमें ख़ुदा की जानिब से कोई बरकत नहीं होती है, बल्कि जैसे बे-तहाशा आता है वैसे ही वो ख़र्च हो कर सूद ख़ोरों की बेइज़्ज़ती, निरादर और उसकी ज़िल्लत का सबब होता है, ये बात किसी पर पोशीदा नहीं कि रुपया पैसा सोना चांदी न विशेष रूप से सूद होते हैं और न उपयोगी इससे किसी की भूक मिट सकती है और न प्यास, सर्दी और गर्मी में ये खुद ही बचाव का साधन नहीं बनते बल्कि ये ऐसे संसाधन हैं कि इन्सान उनसे अपने ऐश-व-आराम की चीज़ों को हासिल करता है और उसकी स्वाभाविक इच्छा होती है कि आराम-व-राहत की चीज़ें जिस तरह से उसको हासिल हैं उसकी आल और औलाद को भी हासिल रहें, लेकिन यही माल-व-दौलत, यही सोना चांदी सूद-ख़ोर की मांन्सिक पीड़ा और

उलझन का कारण होते हैं, न उसको इज़्ज़त-व-आराम की ज़िंदगी मिलती है, न उसकी औलाद को, इसलिए अगरचे दौलत की प्रचुरता और साज़-व-सामान का ढेर लगा हुआ हो, फिर भी उसकी दौलत मानो यूं घट रही है कि उसको इज़्ज़त-व-आराम की ज़िंदगी न मिली न राहत-व-सुकून की ज़िंदगी, हुज़ूर ﷺ ने इरशाद फ़रमाया:

"إِنَّ الرِّبَا وَإِنْ كَثُرَ عَاقِبَتُهُ تَصِيرُ إِلَى قُلٍّ"

तर्जुमा:सूद अगरचे ज़्यादा हो जाएगी मगर अंतत: वह कमी का कारण है। (मिशकात शरीफ़ पेज नं0 २४६ बहवाला इबने माजा-व-बैहक़ी)

तीसरी आयत-ए-करीमा

नेक किरदार मुसलमानों और ज़कात देने वालों को यह खुशखबरी दी गई की उन्होंने जो कुछ नेक काम किए हैं उसका सिला उनको मिलकर रहेगा, और सिर्फ अज्र-व-सवाब ही नहीं मिलेगा बल्कि ऐसी अनन्त राहत-व-आराम मिलेगा कि उनको कोई डर होगा और न वह कभी रंजीदा-व-ग़मगीन होंगे, पिछली आयतों में जब सूदखोरों को सख़्त भय दिखाया गया और ऐसे लोगों को जो सूद को हलाल समझ कर लेते हैं उनको हमेशगी के अज़ाब की धमकी दी गई है, तो अब मुसलमानों को राहत-व-खुशी की खुशखबरी सुनाई गई, क्योंकि क़ुरआन हकीम की शैली है कि अगर एक तरफ़ दुष्ट चरित्रों को जहन्नम के अज़ाब की धमकी देता है तो दूसरी तरफ़ नेक काम करने वालों को महरूम नहीं रखता बल्कि उनको अज्र-व-सवाब का योग्य बताता है, मानो इस आयत-ए-करीमा में बताया गया कि दस्तूर-ए-ईमान से दूर है कि कोई मुसलमान सूद जैसी गंदगी में दूषित हो जाए, उसके लिए तो उचित यही है बल्कि उस पर लाज़िम है कि अच्छे काम करे। और नमाज़ का एहतिमाम करे अथवा ज़कात अदा करे, अगर ये सब खूबियां किसी में पैदा हो गईं तो ज़ाहिर है कि वह सूद जैसी लानत में गिरफ़्तार नहीं हो सकता, जो शख़्स अल्लाह पर ईमान रखेगा और

अच्छे काम करेगा वह सूद जैसे बुरे काम में कैसे संलिप्त होगा, जो नमाज़ अदा करेगा, ज़कात भी देता रहेगा, भला उसके अंदर सूदखोरी का स्वार्थ पैदा हो सकता है? जब वो रूह को पाकीज़ा करके अपने दिल से धन-दौलत की मुहब्बत यूं खत्म करता है कि वह ख़ुदा की राह में बेदरेग़ खर्च करता है तो कैसे सोचा जा सकता है कि ऐसा शख़्स सूद की लानत में गिरफ़्तार हो कर वईदे इलाही(खुदा की धमकी) का अधिकार रखने वाला हो जाए।

चौथी आयते करीमा

इस आयत-ए-करीमा में मुसलमानों को ज़बरदस्त धमकी दी गई कि अगर तहरीम के बाद तुमने अपना क़र्ज़ वसूल कर लिया तो गोया तुम मोमिन ही नहीं हो, तुम्हारे ईमान का तक़ाज़ा ये है कि जो कुछ तुम्हारा सूदी माल बाक़ी रह गया है इस वक़्त उन को छोड़ दो, वर्ना हो सकता है कि इस्लाम की कीमती दौलत से हाथ धो कर तुम नुकसान में पड़ जाओ, इस आयत-ए-करीमा को ग़ौर से पढ़िए, बार-बार पढ़ें, कितनी सख़्त धमकियां हैं, ऐसा महसूस हो रहा है बरकते इलाही उस वक़्त पैदा होगी जब कि सूद की बाकी रक़म को भी छोड़ दिया जाये, ज़ाहिर है जब बक़ाया रक़म के वसूल करने पर पाबंदी लगा दी जाएगी और पाबंदीयां इस अंदाज़ से लगाई गईं कि अगर तुम नहीं छोड़ोगे तो हो सकता है कि ख़ुद इस्लाम तुमको छोड़ दे।

अल्लाहु-अकबर! जब बक़ाया के लिए इतनी धमकी तो जो सूद लेने वाले हैं उनका हश्र व अंजाम क्या होगा, उसकी हक़ीक़त तक पहुंच या उसकी सही समझ एक मिट्टी का इन्सान कैसे पैदा सकता है? यह माटी का पुतला है, जलाले रब्बानी का बोध करने से या सही अंदाज़ा लगाने में बहुत नाकाम है।

पांचवीं आयत-ए-करीमा

यह आयत-ए-करीमा ऐलाने जंग है , अल्टीमेटम है अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से उनके ख़िलाफ़, उन बाग़ियों के ख़िलाफ़ जो अल्लाह के हुक्म का उल्लंघन करते हुए सूद लेने से या बक़ाया रक़म वसूल करने से न रुके न बाज़ आए , तो जंग का ऐलान उन्हीं लोगों के ख़िलाफ़ किया जाता है जो न सिर्फ क़ानून का उल्लंघन करते हैं बल्कि बार-बार चेतावनी और नसीहत के बाद शाही फ़रमान की ख़िलाफ़वरज़ी में लगे रहते हैं, लेकिन सवाल ये है कि अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से सूद-ख़ोर बाग़ियों के ख़िलाफ़ जो ऐलाने जंग हुआ है उसकी लड़ने वाली फ़ौज कौन होगी? या आसमानों से फ़रिश्ते उतरेंगे जो ज़मीन पर रहने वाले बाग़ियों को तहस नहस कर देंगे या ज़मीन पर ही ऐसी फ़ौज मौजूद है? और उसके रसूल के दीन की हिमायत के लिए उठ खड़ी होगी, बिल्कुल स्पष्ट है, इसका मतलब सिर्फ यही नहीं है कि सूद-ख़ोर बाग़ियों से लड़ने वाली कोई अदृश्य शक्ति ही होगी, ग़ैबी क़ुव्वत भी हो सकती है, लेकिन इस का मतलब ये भी है कि मुसलमान जो अल्लाह और उसके रसूल के वफ़ादार हों उन पर लाज़िम है कि ऐसी अर्थ व्यवस्था के ख़िलाफ़ अपनी व्यवहारिक शक्ति का प्रदर्शन करें जिसमें सूद का दूर -दूर तक दौर दौरा हो जहां कहीं सूदखोरों की संगठित समूह हो उनके ख़िलाफ़ अपनी ताक़तों को मानने में कोई कमी न करें, कि सूद एक ज़ालिमाना हरकत है और ज़ालिम की कलाई मरोड़ने के लिए वफ़ादारों को भरपूर कोशिश करनी चाहिए, इसलिए ख़ुदाबंदे क़ुद्दूस इरशाद फ़रमाता है कि तुमको इस तरह से ज़िंदगी गुज़ारनी चाहिए कि तुम किसी पर ज़ुल्म न करो और न तुम्हारे ऊपर ज़ुल्म होना चाहिए, यानी ज़ालिमाना मज़लूमाना दोनों किस्म की ज़िंदगियों से तुमको बेज़ार रहना चाहिए, इस आयत-ए-करीमा में इतनी बड़ी धमकी है कि शायद ही किसी घृणित और निषेध पर इतनी बड़ी धमकी आई हो, इसलिए कुछ बुज़ुर्गों का वक्तव्य है कि इस आयत के अंदर इस बात की तरफ़ इशारा है कि सूद-ख़ोर का अन्त निहायत खौफनाक और बदतरीन होगा।

छठी आयत-ए-करीमा

इस आयत-ए-करीमा में कर्ज़दार के साथ अच्छा सुलूक करने का हुक्म दिया गया कि जब तक वह ख़ुशहाल न हो उसके ऊपर दबाव और ज़्यादती न करो बल्कि उसको मोहलत पर मोहलत दिए जाते रहो, अगर तुम्हारे रहम और करूणा की भावना जाग जाये तो तुम्हारे लिए बेहतर यही है कि क़र्ज़ के बोझ से उसे आजाद करके माफ़ कर दो, एक ऐसे सूदी माहौल में जहां कोई एक दाना अपने फ़ायदे के बग़ैर देने के लिए तैयार न हो वहां यह शिक्षा देना कि" मोहलत देते रहो 'नहीं नहीं सिर्फ मोहलत ही न दो बल्कि सिरे से क़र्ज़ माफ़ कर दो, यह सूद-ख़ोर के मुँह पर एक ज़बरदस्त तमांचा है, कहाँ उसका बेरहम कानून है?कहाँ सदक़े की नेक फितरत? कहाँ उसकी लालच? कहाँ इसकी क़ुर्बानी ? दोनों में कोई संबंध है? एक की फ़ितरत बुराईयों से भरी हुई और दूसरे की तबीयत अच्छे अख़लाक़ का मजमूआ, इसी लिए शरीयत के विद्वानों ने फ़रमाया कि सूद और सदक़े में अर्न्तविरोध है, कैसा अर्न्तविरोध ? ज़ुल्म और इन्साफ़ का अर्न्तविरोध, आग और पानी का अर्न्तविरोध, उजाले और अंधेरे का अर्न्तविरोध, क्योंकि जब सदक़े का जज़्बा उभरेगा या दूसरे शब्दों में त्याग का सूर्योदय होगा तो ज़ुल्म और सूद की अंधेरा मिटेगा, इसलिए ख़ुदा-ए-पाक ने सूद के हराम होने की आयतों में इस आयत-ए-करीमा को भी पिरो दिया ताकि बंदों को मालूम हो जाये कि हर जायज़-व-नाजायज़ तरीक़ा से दौलत को इकट्ठा करना भलाई और नेकी का काम नहीं है बल्कि असल नेकी यह है कि अपनी दौलत हाजत मंदों को देकर उनको मोहलत दो अगर मोहलत से काम ना चले तो उनको सदक़ा कर दो यानी माफ़ कर दो तुम्हारे हक़ में यह बेहतर है।

देखिए इस्लामी तालीम कितनी बुलंदी से अपने मानने वालों को यह हिदायत करती है कि सूद जैसी नापाक चीज़ के क़रीब तुमको नहीं जाना चाहिए बल्कि क़र्ज़ देकर अपने क़र्जदार को मोहलत दो और

उसको मूल धन माफ कर दो यही तुम्हारे लिए बेहतरी का ज़रीया होगा अगर तुम इस हक़ीक़त को समझ सको।

सातवीं आयत-ए-क़रीमा

अगर क़ानून की पकड़ ढीली हो तो बुराईयों की रोक-थाम नामुमकिन है, अगर इन्सान को अपने कामों का कोई हिसाब लेने वाला नज़र न आए तो वो सिर्फ अपने ज़मीर की आवाज़ पर ग़लतियों से बाज़ नहीं रह सकता, इसीलिए ख़ुदा-ए-क़ुद्दूस ने कर्मों के हिसाब का क़ानून जारी फ़रमाया और ये इरशाद फ़रमाया कि उस दिन से डरो जिस दिन में तुम्हें बादशाहों के बादशाह की बारगाह में हाज़िरी देनी होगी, हर जीव को उसका पूरा पूरा बदला दिया जाएगा और उन पर कोई ज़ुल्म नही होगा।

सूद को हराम करने वाली आयतों में इस आयते पाक को ख़ुदा-ए-क़ुद्दूस ने शामिल किया था कि सूदखोरों पर यह बात स्पष्ट कर दी जाये कि मुम्किन है इस दुनिया में आप सूदी जुल्मों की सज़ाओं से बच जाओ लेकिन एक दिन ऐसा ज़रूर आएगा जब तुम्हें तुम्हारे करतूतों की सज़ा ज़रूर मिलेगी, इसलिए कि ख़ुदा-ए-क़ुद्दूस के यहां इन्साफ़ का तराज़ू क़ायम होगा, वहां मज़लूमों की सुनवाई होगी, तुम्हें उन ज़ालिमाना हरकतों की सज़ाएं भुगतनी ही पड़ेंगी, लिहाज़ा अब भी वक़्त है, बाज़ आ जाओ और सूद जैसे गुनाह से तौबा करो इसी में तुम्हारी भलाई है।

आयतों की शिक्षाओं का ख़ुलासा

यह सात आयतें हैं, उनमें जलाले अलाही का पहलू ग़ालिब, लेकिन ऐसा नहीं है कि जमाल की जलवा आराईयों की झलक ना पाई जाती हो, ज़रूर जमाल का भी पहलू है, लेकिन इन आयाते करीमा में क़हर व जलाल का समुंद्र लहरें ले रहा है, कहीं सूद की हुर्मत पर आख़िरी मुहर लगाई गई और किसी आयत में सूदखोरों की अजीब-व-ग़रीब हालत का बयान हुआ, उनके पागलपन का बयान हुआ, और ये भी बताया गया कि अगर सूदखोरी हलाल जान कर हुई तो ख़ुलूद फ़िन्नार (हमेशा के लिए जहन्नम) की सज़ा मिलेगी, यानी दाइमी

अज़ाब का सामना करना होगा, फिर उस ख़ामख़याली से आगाह किया गया कि सूद से माल में इज़ाफ़ा होता है, ये नज़र का फरेब है , नासमझी है, हक़ीक़त यह है कि सूद से तबाही और दुर्दशा के दरवाज़े खुलते हैं, हाँ हाँ सदक़ात-व-ख़ैरात, ख़ैर-व-बरकत के सबब हैं, आगे बढ़कर तीसरी आयत में नेक किरदार मुसलमानों को यह काम की बात समझायी गयी कि अगर तुम निषेध और हराम चीज़ों से बच कर अच्छे कामों में तल्लीन रहे तो तुम हर हालत में बे-ख़ौफ़ रहोगे और तुम ग़मगींन-व-उदास न होगे, फिर तक़्वा-व-परहेज़गारी की राह पर गामज़न रहने की हिदायत करते हुए इरशाद फ़रमाया गया कि जो कुछ सूद का बक़ाया हो बेहतरी इसी में है कि उसको जल्दी छोड़ दो, अगर ऐसा न करो तो अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से एक जंग-ए-अज़ीम का यक़ीन करो, क्योंकि ख़ुदावंदे क़ुद्दूस ज़ालिमाना निज़ाम को किसी हालत में पसंद नहीं करता, अलबत्ता अगर तुमने तौबा की राह इख़तियार की यानी जो कुछ तुम्हारा सूद बाक़ी रह गया था उसको तुमने छोड़ दिया तो तुम्हारा मूल धन तुमको ज़रूर मिलेगा, हाँ इस बात को भी याद रखो कि ख़ुदा ने जब तुम्हें दौलत दी तो अपनी दौलत से ज़रूरतमंदों की मदद ज़रूर करो, और उनको क़र्ज़ देकर मोहलत पर मोहलत देते रहो यहां तक कि ख़ुश हाल हो जाएं, लेकिन अगर बद क़िस्मती से तुम्हारे क़र्ज़ की अदाइगी के लिए उनमें ताकत ना हो तो आगे बढ़कर अपने ईसार-व-क़ुर्बानी का सबूत पेश करो, कि क़र्ज़ के बोझ से उनको मुक्ति दे दो, आख़िरी आयत में ये इरशादे रब्बानी हुआ कि अगर दुनियावी क़ानून की पकड़ से तुम बच भी जाओ तो उस दिन से डरो जिस दिन तमाम बुरे कामों की सज़ा मिलेगी।

यह है आयात के मआरिफ़-व-नकात की तरफ़ एक हल्का सा इशारा, इसी के आईने में सूद का चेहरा देखा जा सकता है कि कितना बदनुमा, कितना डरावना, कितना ख़ौफ़नाक, कितना वहशत-नाक है ये। नऊज़-बिल्लाहि ज़ालिक।

❁

अध्याय: 2

अब तक जो कुछ अर्ज़ किया गया वो क़ुरान हकीम की आयाते करीमा के मआनी और भावार्थ की हल्की झलकियां थीं, अब आइए हदीस शरीफ़ के दर्पण में सूदखोर को देखिए.

खून का दरिया

हुज़ूर ने अपने सच्चे ख्वाबों के वाकियात बयान करते हुए इरशाद फ़रमाया:

حَتَّى أَتَيْنَا عَلَى نَهَرٍ مِنْ دَمٍ فِيهِ رَجُلٌ قَائِمٌ، وَعَلَى وَسَطِ النَّهَرِ رَجُلٌ بَيْنَ يَدَيْهِ حِجَارَةٌ، فَأَقْبَلَ الرَّجُلُ الَّذِي فِي النَّهَرِ، فَإِذَا أَرَادَ الرَّجُلُ أَنْ يَخْرُجَ رَمَى الرَّجُلُ بِحَجَرٍ فِي فِيهِ فَرَدَّهُ حَيْثُ كَانَ، فَجَعَلَ كُلَّمَا جَاءَ لِيَخْرُجَ رَمَى فِي فِيهِ بِحَجَرٍ فَيَرْجِعُ كَمَا كَانَ..

तर्जुमा: यहां तक कि हम एक खून के दरिया के किनारे पहुंचे जिसमें एक आदमी खड़ा था और उस दरिया के साहिल पर दूसरा आदमी था उसके सामने पत्थर पड़े हुए थे फिर वह शख्स जो दरिया में था थक कर (घबरा कर) जब उससे निकलने का इरादा करता है तो साहिल पर खड़ा आदमी उसके मुंह पर पत्थर मारता है तो लौट कर वहीं चला जाता है जहां से आया था ऐसे ही जब वह निकलने का इरादा करता है तो पत्थर से उसके मुंह पर मार पड़ती है और लौट जाता है।

रुयाए सादिका (सच्चे ख्वाबों) में बहुत से खताकारों, नाफरमानों की सजाओं के दृश्य दिखाए गए थे, आपके साथ जिब्रील अमीन और मीकाईल अलैहिमास्सलाम भी होते हैं, बदकारों, जिनाकारों, झूठों की अंदोहनाक सजाएं आपको दिखाई जाती हैं, आप फरिश्तों से उन लोगों के बारे में पूछते हैं कि ये कौन हैं? लेकिन ये फ़रिश्ते अभी उन लोगों को नहीं बताते हैं, आख़िर में आपके सामने ये दृश्य लाया जाता है कि ख़ून के दरिया में एक शख़्स तैर रहा है और

किनारे पर एक दूसरा आदमी खड़ा है, जब पहला वाला शख़्स थक कर साहिल के क़रीब आकर ख़ून के दरिया से निकलना चाहता है तो साहिल पर खड़ा आदमी उसके मुँह पर ज़ोर से पत्थर मारता है और ये सज़ाएं जारी रहती हैं, अभी दोनों फ़रिश्ते हुज़ूर ﷺ को नहीं बताते हैं कि कौन शख़्स है जो ख़ून के दरिया में गिरता है और बार-बार उससे निकलने की कोशिश करता है, और उसकी पिटाई हर बार होती है और ख़ास बात ये है कि ये सख्त मार उसके मुँह पर पड़ रही होती है, आख़िर में हुज़र-ए-अकरम ﷺ के सवाल का जवाब ये फ़रिश्ते देते हैं:

وَالَّذِي رَأَيْتَهُ فِي النَّهَرِ آكِلُوا الرِّبَا

यानी वह आदमी जिसको आपने देखा कि ख़ून के दरिया में तैर रहा है वह सूद-ख़ोर है।

अंबिया ए किराम जो कुछ ख़्वाब देखते हैं वह परेशान ख्वाब नहीं होते, आम इन्सानों की तरह उनका ख़्वाब नहीं होता कि बाहर उसका कोई अस्तित्व न हो, बल्कि अंबिया ए किराम के ख़्वाब वाक़ियात की सही अक्कासी करता है और वही कुछ देखते हैं जो बाहर की दुनिया में मौजूद होता है या होने वाला होता है, बताने का मक़सद यह है कि जो कुछ हुज़ूर ﷺ को इस ख्वाब में दिखाया गया वही सब कुछ सुलूक सूदखोरों के साथ होगा। सूद-ख़ोर इन्सानों का ख़ून चूसता है तो उसको ख़ून के दरिया में गिरने की सज़ा दी गई, वह अपनी क्रूरता और संगदिली से ज़रूरतमंद इन्सानों पर तरस नहीं खाता तो उसके ऊपर भी किसी को तरस नहीं आएगा और उसको निरंन्तर पथराव की सज़ा दूसरी सज़ाओं के साथ मिलती रहेगी।

अल्लाहु-अकबर! ये कितनी भयानक सज़ा है कि जिसकी कल्पना ही इन्सान को बेचैन और बेक़रार करने के लिए काफ़ी है।

साँप के घर

ثُمَّ أَتَيْتُ عَلَى قَوْمٍ بُطُونُهُمْ كَالْبُيُوتِ، فِيهَا الْحَيَّاتُ تُرَى مِنْ خَارِجِ بُطُونِهِمْ، فَقُلْتُ: مَنْ هَؤُلَاءِ؟ قَالَ: هَؤُلَاءِ أَكَلَةُ الرِّبَا-

[ابن ماجہ، ص۵۲۷ باب التغلیظ فی الربا، دار الفکر بیروت]

हज़रत अबूहुरैरा सरकार ﷺ से रिवायत करते हैं कि आपने फ़रमाया जिस रात मुझको सैर कराई गई, मैं ऐसी क़ौम के पास पहुंचा कि उनके पेट घरों की तरह थे और इसमें साँप भरे हुए थे, पेट के बाहर से वो साफ़ देखे जा रहे थे, मैंने कहा जिब्रील ये कौन लोग हैं? तो जिब्रील ने जवाब में कहा ये सब सूद-ख़ोर हैं।

हुज़ूर अकरम ﷺ ने मेराजे मनामी(यानी नींद की हालत में मेराज)में नहीं बल्कि मेराजे जिस्मानी में सूदखोरों के हालात का मुशाहिदा फ़रमाया, वो सिर्फ़ इबरत-अंगेज़ ही नहीं थे, बल्कि रौंगटे खड़ा कर देने वाले थे, सूद की दौलत जमा करना ऐसा ही है जैसे कोई शख़्स साँप पाले, सूद की दौलत तिजोरियों, बैंकों में जमा की जाती है, ख़ुदा के यहाँ उसका अज़ाब ये होगा कि ऐसे सूद-ख़ोर की तोंद मानो एक महल होगी, वो भी साफ़-शफ़्फ़ाफ़, पारदर्शी आईने की तरह, उसमें ये दौलत के साँप जमा कर दिए जाऐंगे, देखने वाला ये देखेगा कि ये सब साँप उसके पेट में भरे पड़े हैं, ख़ुदा की पनाह, कितनी ही खतर नाक सज़ा होगी?

सूद का गुनाह ज़िना(नाजायज़ शारीरिक संबंध) से कई गुना ज़्यादा बदतर

सूद कितना बड़ा गुनाह है, इस को दार क़ुतनी की इस रिवायत से समझा जा सकता है:

عَنِ عَبْدِ اللهِ بْنِ حَنْظَلَةَ غَسِيلِ الْمَلَائِكَةِ قَالَ قَالَ رَسُولُ اللهِ : دِرْهَمُ الرِّبَا يَأْكُلُهُ الرَّجُلُ وَهُوَ يعلم أشد من سِتَّةٍوَثَلَاثِينَ زِنْيَةً .

[مشکوٰۃ، ج:۱ ص: ۲۵۱ مکتبہ رحمانیہ]

अब्दुल्लाह बिन हंज़ला जिनको उनकी शहादत पर फ़रिश्तों ने ग़ुस्ल दिया था, हुज़ूर अकरम ﷺ से रिवायत करते हैं कि आपने फ़रमाया, सूद का एक दिरहम जिसको आदमी जान-बूझ कर अपने खर्च में लाए छत्तीस बार ज़िनाकारी से बदतर है।

ज़िना और बद-कारी से समाज-व-मुआशरा में जो बुराईयां फैलती हैं, उनके रोक-थाम के लिए कोड़े मारने या पत्थर मारने की सज़ा दुनिया में मिलती है, और अगर बेग़ैर तौबा के मर गया तो आख़िरत में उसको कितनी बड़ी सज़ा मिलेगी उसको अल्लाह ही बेहतर जानता है, ज़िनाकारी के जुर्म से सूदखोरी के जुर्म का तुलना फ़रमाते हुए आपने इरशाद फ़रमाया कि छत्तीस बार की ज़िना कारी से यह बदतर है दूसरे शब्दों में आख़िरत में ज़िना कारी की सज़ा से छत्तीस गुना ज़्यादा सज़ा सूद-ख़ोर को मिलेगी। उल-अमान (अल्लाह की पनाह)

सूदखोरी का गुनाह माँ के साथ ज़िना करने से बदतर है

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ، قَالَ: قَالَ رَسُولُ اللّٰهِ صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: «الرِّبَا سَبْعُونَ جُزْءاً، أَيْسَرُهَا أَنْ يَنْكِحَ الرَّجُلُ أُمَّهُ.

[مشکوٰۃ المصابیح، باب الربو، ج ۱، ص ۲۵۱ مکتبہ رحمانیہ، ابن ماجہ، ص ۵۲۷ باب التغلیظ فی الربا، دار الفکر بیروت]

अबूहुरैरा से रिवायत है कि आपने फ़रमाया कि सूद इतना बड़ा गुनाह है कि अगर उसको सत्तर हिस्सों में तक़सीम किया जाये तो उसका एक हल्के से हल्का हिस्सा इस गुनाह के बराबर होगा कि आदमी अपनी माँ के साथ जिना करे।

मआज़-अल्लाह! अपनी माँ से बदकारी कितना बड़ा गुनाह है यूं तो ज़िना ख़ुद ही बहुत बड़ा गुनाह है, और वह भी अपनी माँ के साथ! उसका सिर्फ ख़्याल ही रौंगटे खड़ा कर देने वाला है, लेकिन हुज़ूर ﷺ ने इरशाद फ़रमाया कि अपनी माँ के साथ ज़िना करने से सत्तर गुना बदतर सूदखोरी का गुनाह है, इससे समझा जा सकता है कि सूदखोरी की

लानत से इस्लामी समाज-व-मुआशरे को पाक व साफ़ रखने में जो कोशिश की जाएगी उसका अज्र व सवाब कितना बड़ा होगा।

सरकार की पेशीनगोई(भविष्यवाणी)

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ، أَنَّ رَسُولَ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ، قَالَ: «لَيَأْتِيَنَّ عَلَى النَّاسِ زَمَانٌ لَا يَبْقَى أَحَدٌ إِلَّا أَكَلَ الرِّبَا، فَإِنْ لَمْ يَأْكُلْهُ أَصَابَهُ مِنْ بُخَارِهِ «وَ يُرْوٰى مِنْ غُبَارِهِ [سنن ابی داؤد کتاب البیوع والاجارة باب فی اجتناب الشبهات ص: ٦٣٤]

हज़रत अबूहुरैरा से रिवायत है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया कि यक़ीनन लोगों पर एक ऐसा ज़माना आएगा कि कोई शख़्स सूदखोरी से न बच पाएगा और अगर सूदखोरी से बच भी गया तो सूद का धुआँ या उसका ग़ुबार ज़रूर उसको पहुंच कर रहेगा।

इस हदीस पाक में हुज़ूर ﷺ ने एक ऐसे ज़माने के बारे में पेशीनगोई फ़रमाई, जिसमें सूदी कारोबार और उसके लेन-देन से बचना बड़ा मुश्किल काम हो जाएगा, अगर किसी तरह से बच भी गया तो किसी न किसी तरह, कुछ न कुछ ज़रूर उसमें संलिप्त हो जाएगा।

यक़ीन के साथ तो नहीं कहा जा सकता कि सरकार की पीशीनगोई के मुताबिक वह ज़माना आ ही गया है लेकिन सबक लेने वाली निगाह से तमाम औद्योगिक केन्द्रों, व्यवसायिक मंडियों, कृषि फर्मों, बीमा कंपनियों को गौर से देखो तो इसका एहसास ज़रूर उजागर होगा कि निगाहे नबुव्वत इस ज़माने को देख रही थी और सूदी कारोबार के विस्तार का अवलोकन कर रही थी, जिधर निगाह उठा के देखो हर तरफ़ सूद का लेन-देन फैला हुआ नज़र आता है, चाहे वह बैंकों के माध्यम हो या बीमा कंपनीयों के, हर जगह सूद है और उसकी गन्दगियां और उसके भाप और धूऐं उड़ रहे हैं जिससे दामन बचाना मुश्किल नज़र आ रहा है।

सूदी कारोबार की मदद भी हराम है

عَنْ عَلِيٍّ رَضِيَ اللهُ عَنْهُ أَنَّهُ سَمِعَ رَسُولُ اللهِ-صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ- لَعَنَ آكِلَ الرِّبَا وَمُوكِلَهُ وَكَاتِبَهُ وَفِي رِوَايَةٍ أُخْرٰى وَعَلٰى شَاهِدَيْهِ- [مشکوة المصابیح، باب الربو، ج ۱، ۲۵۱، مکتبہ رحمانیہ]

तर्जुमा: हज़रत अली ने सुना कि हुज़ूर ﷺ सूद खाने खिलाने वाले, और उसके लिखने वाले पर लानत फ़रमा रहे थे और एक दूसरी रिवायत में है कि उसके गवाहों पर लानत फ़रमा रहे थे। (मिश्कात जिल्द :१, पे0 147)

सूदखोरी इतनी बड़ी लानत है कि हुज़ूर ﷺ उसकी किसी तरह मदद करने वाले पर लानत फ़रमाते हैं यहां तक कि जो शख़्स सूद का दस्तावेज़ लिखे और जो उस पर गवाहियाँ दे, आपने उस पर भी लानत फ़रमाई, लानत रहमत ख़ुदावंदी से दूरी की बददुआ होती है, इसी से अंदाज़ा किया जा सकता है कि सूद के क़रीब फटकना बहुत बड़ा गुनाह है।

सूद हलाकत ख़ेज़ (घातक) है

عَنِ النَّبِيِّ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ: «اجْتَنِبُوا السَّبْعَ المُوبِقَاتِ»، قَالُوا: يَا رَسُولَ اللهِ وَمَا هُنَّ؟ قَالَ: «الشِّرْكُ بِاللهِ، وَالسِّحْرُ، وَقَتْلُ النَّفْسِ الَّتِي حَرَّمَ اللهُ إِلَّا بِالحَقِّ، وَأَكْلُ الرِّبَا، وَأَكْلُ مَالِ اليَتِيمِ، وَالتَّوَلِّي يَوْمَ الزَّحْفِ، وَقَذْفُ المُحْصَنَاتِ المُؤْمِنَاتِ الغَافِلاَتِ [صحیح البخاری، کتاب الوصایا، ج ۱، ص:۳۸۸ قدیمی کتب خانہ کراچی]

तर्जुमा: हुज़ूर ﷺ ने इरशाद फ़रमाया कि सात हलाकत ख़ेज़ चीज़ों से बचो, कहा गया: या रसूल अल्लाह वह क्या हैं? तो आपने फ़रमाया कि अल्लाह की ज़ात के साथ शिर्क करना, जादू करना, नाहक़ किसी जान को क़त्ल करना, सूद खाना, यतीम का माल खाना, जंग के दिन दुश्मन के मुक़ाबला से पीठ फेर कर भाग जाना, मोमिन, पाक दामन, भोली-भाली औरतों पर ज़िना का लांछन लगाना।

गुनाह दो किस्म के होते हैं एक मामूली दूसरे ग़ैरमामूली दूसरे शब्दों में एक छोटा, दूसरा बड़ा, बड़े गुनाहों की लिस्ट में हुज़ूर अकरम ﷺ ने जहां दूसरी चीज़ों को शुमार किराया वहीं सूद खोरी को भी शुमार कराया और यह बताया कि ये सब चीज़ें घातक हैं, चाहे दुनिया में उनसे तबाही-व-बर्बादी आए या आख़िरत में, मुसलमानों को उनसे मुकम्मल परहेज़ करना चाहिए, उनमें से किसी चीज़ को करना हलाकत व बर्बादी को दावत देना है। इन इर्शादाते रसूले अकरम ﷺ से स्पष्ट हुआ कि सूदी कारोबार या सूद-खोरी बदतरीन गुनाहों में से है, हर एक मुसलमान पर लाज़िम है कि इस गंन्दगी के दूषण से अपने दामन को दागदार न करे, आपने मुख़्तलिफ़ अंदाज़ बल्कि हकीमाना उस्लूब-ए-बयान से इसकी हुर्मत का सही एहसास मुसलमानों को दिलाया, इसलिए लाज़िम है कि छानबीन किया जाये कि सूद क्या है? इसकी हक़ीक़त क्या है? और वो कौन से तत्व हैं? जिनसे सूद का ढांचा तैयार होता है, आईए एक नज़र सूद की हक़ीक़त पर डालते हैं।

अध्याय:3

सूद का अर्थ

(अरबी शब्द) रिबा ربٰو का शाब्दिक अर्थ और इसकी शरई परिभाषा

सूद के लिए जो लफ़्ज़ क़ुरआन-ए-करीम और अहादीस-ए-पाक में इस्तेमाल किया गया है वो 'रिबा' ربٰو है जिसका अर्थ ज़ियादत और बढ़ोतरी के हैं, अरब में बोला जाता था:

ربا فلان رابية (रबा फलानुन राबियतन) वह टीले पर चढ़ गया।

इसी से 'रबवतुन' ربوۃ क़ुरआन शरीफ़ में आया है जिसका अर्थ बुलंदी के हैं। अरब का क़ौल है:

اَرْبٰی فُلَانٌ عَلٰی فُلَانٍ فِی الْقَوْمِ اَوِالْفِعْلِ اِذَا زَادَ عَلَیْهِ

(अरबा फ़लानुन अ़ला फ़लानिन फ़िल-क़ौमि अविल फ़ेअल इज़ा ज़ादा अलैहि) जब कि कोई शख़्स किसी बात या काम में अपनी तरफ़ से इज़ाफ़ा करे, इस लफ़्ज़ से बनने वाले जितने शब्द (मुश्तक़्क़ात) आते हैं सब में ज़्यादातर बढ़ने और ज्यादा होने का मअना पाया जाता है।

فَاِذَآ اَنْزَلْنَا عَلَیْهَا الْمَآءَ اهْتَزَّتْ وَ رَبَتْ ۔ حٰمٓ السجدة:۲۹

तर्जुमा: जब हमने उस पर पानी बरसाया तो वो लहलहा उठी, और बढ़ गई। (सूरह हामीम अल सजदह : 29 पारा 24)

हदीस पाक में आया है:

فَلَا وَاللّٰهِ مَا اَخَذْنَا مِنْ لُقْمَةٍ اِلَّا رَبَا مِنْ تَحْتِهٖ اَیْ زَادَ الطَّعَامُ الَّذِیْ دَعَا فِیْهِ النَّبِیُّ صَلَّی اللّٰهُ عَلَیْهِ وَسَلَّمَ بِالْبَرْكَةِ.

तर्जुमा: तो ख़ुदा की क़सम हमने कोई लुक़्मा नहीं उठाया, मगर हुज़ूर की बरकत की दुआ से उसके नीचे ज़्यादा हो गया।

اربی الرجل(अरबर रजुलो) भी बोला जाता है। जब कि आदमी सूदी कारोबार करे। ये हुई इस लफ़्ज़ का शाब्दिक परीक्षण।

शरीअत की भाषा में इसका यह अर्थ है कि वह बढ़ोतरी जो लेन-देन या आदान-प्रदान में हो, उसकी शर्त लगाई गई हो और वह बदल से ख़ाली हो चुनांचे हिदाया के लेखक फ़रमाते हैं:

هوالفضل المستحق لأحد المتعاقدين فى المعاوضة الخالى عن عوض شرط فيه. هدايه آخرين ج: ٣، ص: ٧٨ مكتبه رحمانيه لاهور.

हर ज़्यादती को रिबा नहीं कह सकते, बल्कि उस ज़्यादती को रिबा कहा जाएगा, जो बदल से ख़ाली होगा। और मुआहिदा में उसकी शर्त लगाई गई हो, इसलिए बदल से ख़ाली होना, और शर्त लगाना, यही वह बुनियादी तत्व हैं जिनसे सूद का ढांचा तैयार होता है, अलबत्ता क़ाज़ी बैज़ावी मज़हब शाफ़ई की तर्जुमानी करते हुए आदत अनुसार अपनी विशेष शान के साथ रिबा की तारीफ़ इन शब्दों में करते हैं:

هو زيادة فى الاجل بان يباع مطعوم بمطعوم او نقد بنقد الى اجل اوفى العوض بان يباع احدهما باكثر منه من جنسه. [بيضاوى، بقرة، ص ١٦٢، داراحياءالتراث العربى بيروت]

रिबा मुद्दत में ज़्यादती है, इस तरह कि एक खाने की चीज़ को दूसरी खाने की चीज़ के बदले में या एक कीमत (सोना, चांदी, रूपऐ, पैसे)को दूसरी कीमत के बदले में एक मुद्दत तक के लिए बेचा जाए या बदल में ज़्यादती हो, इस तौर पर कि दोनों में से एक को उसी के वर्ग से ज़्यादती के साथ बेचा जाये।

मुहश्शी शेख़ ज़ादा इस इबारत की व्याख्या करते हुए लिखते हैं कि:

هو زيادة فى الاجل اوفى العوض فان الاموال الربوية اذا قوبلت بجنسها يحرم كون احد العوضين ازيدَ مِنَ الآخَرِ و يَحرُمُ

ايضاً اَن يّكون احدهما نقداً و الآخَرُ مؤجلاً.[حاشيه شيخ زاده ج٢ ص٦٦٨ دارالكتب العلمية بيروت]

वह मुद्दत या बदल में ज़्यादती है, इसलिए कि सूदी माल का जब उसी के वर्ग से लेन-देन किया जाये तो उनमें से एक का दूसरे पर ज़्यादा होना हराम है, और ये भी हराम है कि उनमें से एक की नक़्द अदाइगी हो, और दूसरे के लिए मियाद मुक़र्रर हो।

क़ाज़ी बैज़ावी की परिभाषा में व्यापकता नहीं थी लेकिन शेख़ ज़ादा ने उसमें थोड़ी सी तबदीली करके उसको व्यापक बना दिया इसलिए कि यह रिबा की तारीफ़ सूद की तमाम किस्मों पर हावी है।

इमाम जस्सास जो फ़िक़्ह हनफ़ी के मुस्तनद तर्जुमान हैं, वह इरशाद फ़रमाते हैं:

اسم الربو فى الشرع يعتوره معان-[احكام القرآن للجصاص ج ١ ص:٤٦٥]

रिबा (सूद) की क़िस्में

वह सूद जो दौरे जाहिलियत में प्रचलित था, इमाम फखरूद्दीन राज़ी के शब्दों में यह है :

واما ربو النسيئة هو الامر الذى كان مشهوراً متعارفاً فى الجاهلية و ذلك انهم كانوا يدفعون المال كل شهرٍ قدراً معيناً و يكون راس المال باقياً ثم اذا حل الدَينُ طالبوا المديون براس المال فان تعذر عليه الاداءُ زادوا فى الحق والاجلِ هذا هو الربوا الذى كانوا فى الجاهلية يتعاملون.[تفسیر کبیر، ج۷ ص۹۲، دارالفکر بیروت]

तर्जुमा :रह गया रिबा अल नसीइआ तो वह ऐसा मामला है, जो जाहिलियत के दौर में मशहूर-और-प्रचलित था, वह ये कि लोग अपना माल दूसरे को इस शर्त पर देते थे कि माह ब माह एक निश्चित मात्रा ज़्यादा लेंगे और मूल धन बाक़ी रहेगा, फिर जब क़र्ज़ की अदाइगी का वक़्त आता था तो क़र्जदार से मूल धन का मुतालबा करते थे अगर इस पर क़र्ज़

की अदाइगी मुश्किल हो जाती तो मीयाद और हक़ में इज़ाफ़ा कर देते, यही वो रिबा है जिसका लेन-देन जाहिलियत के दौर में जारी था।

और इसी रिबा (सूद) की परिभाषा में इमाम जस्सास अपनी विश्व-विख्यात किताब अहकाम- उल-क़ुरआन में फरमाते हैं:

هوالقرض المشروط فيه الاجل و زيادة مال على المستقرض. [احکام القرآن، ج۲، ص۱۸۹، داراحیاء التراث العربی، بیروت]

तर्जुमा: रिबा वो क़र्ज़ है जिसमें मीयाद और माल की बढ़ोतरी की क़र्ज़दार के ऊपर शर्त लगाई जाये।

सूद की इस किस्म का नाम मुफ़स्सिरीन के नज़दीक रिबा नसीइआ है, इसलिए कि उधार लेकर मूल धन से ज़्यादा क़र्ज़ देने वाले को अदा किया जाता है इस को रिबा-अल-क़र्ज़ भी कहा जाता है क्योंकि क़र्ज़ ही की सूरत में ये पाया जाता है, इस का नाम रिबा-अल-क़ुरआन भी है, (इसलिए कि इसकी हुर्मत क़ुरआन हकीम से साबित है) क़ुरआन के नाज़िल होने के वक़्त आम तौर पर लोगों में यही प्रचलित था, इसकी मिसाल ये है कि कोई शख़्स किसी दूसरे को एक मीयादी क़र्ज़ इस शर्त पर दे कि वह मूल धन से ज़्यादा लेगा, सौ रूपया क़र्ज़ दे और बीस रूपया ज़ायद लेने की शर्त लगा दे, ज़ाहिर है कि उसके मुक़ाबला में कोई चीज़ क़र्ज़दार को नहीं मिलती, यानी ये मुआवज़ा से ख़ाली है, यह बीस रूपया सूद हुए और इसकी गंन्दगी से सौ रूपये का क़र्ज़ भी गंदा हो गया, हालांकि वह साफ-सुथरा माल था, यह सूद यक़ीनन हराम है, इस का इन्कार करने वाला या उसको हलाल समझने वाला दायर-ए-इस्लाम से ख़ारिज है।

2- इमाम जस्सास अहकाम अल कुरआन में फ़रमाते हैं कि सूद की दो किस्में हैं: एक सूद वह है जो क़र्ज़ में होता है, और दूसरा वह है जो ख़रीद-व-फ़रोख़्त या व्यवसाय में होता है, सूद की पहली किस्म का बयान तो हो गया, रह गई दूसरी किस्म, उसका ब्यौरा निम्नानुसार है।

क :एक ही जिन्स की चीज़ों को चाहे वह नाप से बिकने वाली हों, या तौल से बिकने वाली हों, या नाप और वज़न दोनों से न बिकती हों, बल्कि गिनती से बिकती हों, या किसी दूसरे तरीक़े से बिकती हों, उनमें अदला-बदली या ख़रीद-व-फ़रोख़त उधार हो तो ये नाजायज़ है, फ़ोक़हा-ए-किराम उसको रिबा-ए-नसीइआ के नाम से वर्णित करते हैं, हालांकि यह बैअ अल अजल यानी उधार खरीद-व-फरोखत की नाजायज़ शक्ल है। मसलन कोई शख़्स एक बनारसी साड़ी देकर दूसरी बनारसी साड़ी उधार कर ले।

ख:ऐसी चीज़ें जो नाप और तौल से बिकती हों और एक दूसरे के साथ अलग जिन्स से बेची जाएं, मसलन गेहूँ को जौ के बदले में उधार बेचा जाये, या लोहा को ताँबा के बदले में उधार बेचा जाये, ये भी नाजायज़ और हराम है, और इसको भी फ़ोक़हा-ए-किराम रिबा-ए-नसीइआ के लफ़्ज़ से पुकारते हैं, हालांकि ये भी नाजायज़ बिक्री की एक सूरत है।

ग:ऐसी ज़्यादती जो एक ही जिन्स की दो चीज़ों के लेन-देन में हो, साथ ही दोनों नाप या तौल वाली हों, उसको रिबा-अल-फजल कहा जाता है, इस के हराम होने का सबूत हदीस मुतवातिर से है, बल्कि कुछ लोगों के नज़दीक हुज़ूर अकरम ﷺ ने जब रिबा (सूद) के अर्थ में विस्तार पैदा कर दी तो उसकी भी हुर्मत का सबूत एक तरह से क़ुरआन-ए-अज़ीम से ही हुआ, लिहाज़ा ये भी बिलकुल हराम है, रिबा-अल-फ़ज़ल की मिसाल यह है कि किसी शख़्स ने गेहूँ देकर गेहूँ ख़रीदा और यह लेन-देन हाथो हाथ हुआ, लेकिन नाप में ज़्यादा ले लिया यह ज़्यादती रिबा-अल-फ़ज़ल कहलाएगी, फ़ोक़हा-ए-हनफ़िया के नज़दीक अगर कोई चीज़ नाप या तौल वाली हो और हाथो हाथ उसी की हम-जिंस से उसकी अदला-बदली हो रही हो तो बढ़ोतरी बिलकुल हराम है, इसलिए कि हुज़ूर अकरम ﷺ ने अहादीसे करीमा में इसको नाजायज़

बताया है, सूद की इस किस्म के बारे में चंद हदीसें आपके सामने पेश की जा रही हैं।

1-

-عَنْ أَبِي سَعِيدٍ الْخُدْرِيِّ ، قَالَ : قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ : " الذَّهَبُ بِالذَّهَبِ، وَالْفِضَّةُ بِالْفِضَّةِ، وَالْبُرُّ بِالْبُرِّ، وَالشَّعِيرُ بِالشَّعِيرِ، وَالتَّمْرُ بِالتَّمْرِ، وَالْمِلْحُ بِالْمِلْحِ مِثْلًا بِمِثْلٍ، يَدًا بِيَدٍ، فَمَنْ زَادَ - أَوِ اسْتَزَادَ - فَقَدْ أَرْبَى الْآخِذُ وَالْمُعْطِي فِيهِ سَوَاءٌ " .

[مسلم شریف ، باب الربو، ج ۲، ص ۲۵، قدیمی کتب خانه کراچی]

तर्जुमा:अबू सईद ख़ुदरी कहते हैं कि सरकार ने फ़रमाया :सोने की ख़रीद-व-फ़रोख़त सोने से, चांदी की चांदी से, गेहूँ की गेहूँ से, जौ की जौ से, खजूर की खजूर से, नमक की नमक से, बराबर बराबर दस्त-ब-दस्त होनी चाहिए, जिसने ज़्यादा दिया या लिया दोनों गुनाह में बराबर हैं।

2-

2- عَنْ عُبَادَةَ بْنِ الصَّامِتِ ، قَالَ : قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ :" الذَّهَبُ بِالذَّهَبِ، وَالْفِضَّةُ بِالْفِضَّةِ، وَالْبُرُّ بِالْبُرِّ، وَالشَّعِيرُ بِالشَّعِيرِ، وَالتَّمْرُ بِالتَّمْرِ، وَالْمِلْحُ بِالْمِلْحِ مِثْلًا بِمِثْلٍ سَوَاءً بِسَوَاءٍ يَدًا بِيَدٍ، فَإِذَا اخْتَلَفَتْ هَذِهِ الْأَصْنَافُ فَبِيعُوا كَيْفَ شِئْتُمْ إِذَا كَانَ يَدًا بِيَدٍ ".رواه مسلم (حوالہ سابق)

तर्जुमा:उबादा बिन सामित ने सरकार से रिवायत किया है कि आपने फ़रमाया सोने का मुबादला सोने से चांदी का चांदी से, गेहूँ का गेहूँ से, जौ का जौ से, नमक का नमक से, इस तरह होना चाहिए कि एक दूसरे के समान बराबर दस्त-ब-दस्त हों, हाँ अगर मुख़्तलिफ़ किस्म की चीज़ों का मुबादला हो तो फिर जिस तरह चाहो बेचो बशर्ते कि लेन-देन दस्त-ब-दस्त हो।

3-

عَنْ أَبِي سَعِيدٍ الْخُدْرِيِّ ، أَنَّ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ قَالَ : " لَا تَبِيعُوا الذَّهَبَ بِالذَّهَبِ إِلَّا مِثْلًا بِمِثْلٍ، وَلَا تُشِفُّوا بَعْضَهَا عَلَى بَعْضٍ، وَلَا تَبِيعُوا الْوَرِقَ بِالْوَرِقِ إِلَّا مِثْلًا بِمِثْلٍ، وَلَا تُشِفُّوا بَعْضَهَا عَلَى بَعْضٍ، وَلَا تَبِيعُوا مِنْهَا غَائِبًا بِنَاجِزٍ" (حوالۂ سابق، ص ۲۴)

हज़रत अबू सईद ख़ुदरी ने बताया कि हुज़ूर ﷺ ने फ़रमाया :सोने को सोने के एवज़ न बेचो, मगर बराबर-बराबर, कोई किसी को ज़्यादा न दे और चांदी को चांदी के बदले ना बेचो, मगर यह कि एक दूसरे के समान हो और कोई किसी को ज़्यादा न दे और उनमें से ग़ायब को हाज़िर के बदले ना बेचो।

4-

عَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ ، قَالَ : قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ : " التَّمْرُ بِالتَّمْرِ، وَالْحِنْطَةُ بِالْحِنْطَةِ، وَالشَّعِيرُ بِالشَّعِيرِ، وَالْمِلْحُ بِالْمِلْحِ مِثْلًا بِمِثْلٍ، يَدًا بِيَدٍ. فَمَنْ زَادَ - أَوِ اسْتَزَادَ - فَقَدْ أَرْبَى ، إِلَّا مَا اخْتَلَفَتْ أَلْوَانُهُ ". [صحيح مسلم، كتاب المساقات، رقم الحديث ١٥٨٨ ،سنن نسائی، كتاب البيوع، رقم ٤٥٥٩]

तर्जुमा:हज़रत अबू हुरैरा रिवायत करते हैं कि हुज़ूर ﷺ ने इरशाद फ़रमाया कि खजूर की बिक्री खजूर से करो, गेहूँ की गेहूँ से, जौ की जौ से, नमक की नमक से, बराबर बराबर दस्त ब दस्त होनी चाहिए, जिसने ज़्यादा दिया या लिया सूदी काम किया, सिवाए इस सूरत के कि उसके रंग बदल जाएं।

इन अहादीस से निम्नानुसार हुक्म साबित होते हैं:

क:एक ही जिन्स की चीज़ों की ख़रीद-व-फ़रोख़त जबकि एक दूसरे के साथ हो बग़ैर कमी बेशी के दस्त-ब-दस्त जायज़ है, अगर उधार

हो जाएगी अगरचे दोनों बराबर हों नाजायज़ है, मसलन अगर कोई शख़्स गेहूँ के बदले गेहूँ लेना चाहे तो दोनों को नाप में बराबर होना चाहिए और लेन-देन दस्त-ब-दस्त हो जब भी जायज़ है, और ऐसी अदला- बदली की ज़रूरत उस वक़्त पेश आती है जबकि एक ही जिन्स की चीज़ों में कुछ फ़र्क़ हो, मसलन किसी का चावल और गेहूँ उम्दा किस्म का हो और दूसरे का चावल या गेहूँ घटिया किस्म का हो तो ऐसी सूरत में ज़रूरत और आवश्यकता के मुताबिक़ कुछ ज़्यादा लेन-देन की संभावना थी, इस पर पाबंदी लगा दी गई कि एक ही जिन्स की चीज़ों में फर्क होने के बावजूद कमी बेशी बिलकुल नाजायज़ है और इस ज़्यादती को रिबा-अल-फ़ज़ल का नाम दिया गया।

ख-अगर जिन्स अलग-अलग हो जाए, मसलन गेहूँ का लेन-देन जौ से हो तो जिस तरह चाहें ख़रीद-फ़रोख़त कर सकते हैं, चाहे कमी बेशी के साथ हो या बराबर, मगर इसमें यह शर्त लाज़िमी है कि हाथो हाथ होना चाहिए, अगर हाथो हाथ न हुआ तो ये भी नाजायज़-और-हराम है, फ़ोक़हा-ए-किराम की भाषा में इसको रिबा-ए- नसीइआ कहते हैं।

ग-अगर एक ही जिन्स की चीज़ों में लेन-देन बराबर बराबर हो लेकिन एक चीज़ उधार हो दूसरी नक़्द हो, मसलन गेहूँ का मुबादला गेहूँ से हो तो बराबर बराबर होने के बावजूद रिबा (सूद) के दायरे में आकर नाजायज़ होगा, और इसको भी फोक़हा की भाषा में रिबा-ए-नसीइआ कहते हैं।

घ- यूँही ये उधार तबादला कमी बेशी के साथ हो तो भी नाजायज़ है।

उपरोक्त निर्देश और अहकाम उन चीजों के लेन-देन के बारे में है जो नाप या तौल के बिकती हों, फिर एक ही जिन्स की हों या अलग-अलग जिन्स की, लेकिन अगर नाप या तौल कर न बिकती हों और

अलग-अलग जिन्स की हों तो उनकी ख़रीद-फ़रोख़्त या लेन-देन हर तरह से जायज़ है।

एक संदेह निवारण

यहां यह संदेह पैदा होता है कि जब चीजों के लेन-देन का दायरा इस क़दर तंग कर दिया गया है कि एक ही जिन्स की चीज़ों के होने की सूरत में बराबर बराबर होने के बावजूद उधार ख़रीद-फ़रोख़्त नाजायज़ है तो इन्सान की कुछ ज़रूरतें कैसे पूरी होंगी? मसलन एक शख़्स के पास ख़राब गेहूँ है तो दूसरे के उम्दा गेहूँ से ज़ायद देकर अदला-बदली नहीं कर सकता, क्योंकि अगर ज़्यादा देता है तो ये रिबा-अल-फ़ज़्ल हो जाएगा जो नाजायज़-व-हराम है, अब दूसरा कहता है कि मैं सूद के गुनाह का मुर्तक़िब नहीं होना चाहता, मैं तुमसे अपने अच्छे गेहूँ को उधार बेच रहा हूँ, जब फ़सल तैयार हो जाये तो मुझे उम्दा गेहूँ लाकर दे देना और बराबर ही देना, मैं ज़्यादा नहीं लूँगा, इसलिए कि ज़्यादा लेने की सूरत में सूद हो जाएगा लेकिन इस को क्या ख़बर ये बराबर ही ख़रीद-फ़रोख़्त नाजायज़ हराम है, अब बताईए ज़रूरत कैसे पूरी होगी?

यह संदेह मात्र है ऐसी सूरत में जब कि इन्सानी हाजत के पूरा होने का सवाल हो तो इस्लामी शरीयत मार्गदर्शन करती है कि अपने हाजतमंद भाई की मदद के लिए कमर-बस्ता हो जाओ और इसके साथ इन्सानी मुरव्वत का यह सबूत दो कि बजाय ख़रीद-फ़रोख़्त के उसको क़र्ज़ दे दो, मसलन जब एक मन गेहूँ देकर एक मन बतौर ख़रीद-फ़रोख़्त लेना चाहते हो और तुम्हारी ख्वाहिश ज़्यादा लेने की नहीं है तो फिर क़र्ज़ क्यों नहीं दे देते, क़र्ज़ के सिलसिले में शरीयत इस्लामी बिलकुल आज़ादी देती है कि रूपया क़र्ज़ देकर इतने ही रूपये ले लो, इसी तरह गेहूँ क़र्ज़ देकर इसी के बराबर गेहूँ ले लो, इसमें शरीअत के ऐतबार से कोई बुराई नहीं पाई जा रही है, लेकिन जब मामला ख़रीद-फ़रोख़्त का हो या तिजारत का हो तो ऐसी तिजारत शरीअत में इसलिए निषेध और

मना है कि इससे सूदी कारोबार की ज़हनीयत को बढ़ावा मिलेगा, आला हज़रत फ़ाज़िले बरेलवी इरशाद फरमाते हैं:

क़र्ज़ तो एक दूसरा अक़द(अनुबंध) है बैअ(बिक्री) के सिवा जिसे शरीयत मुतह्हरा ने हाजात नास (लोगों की ज़रूरत) के लिए जायज़ फ़रमाया, बड़ा क़र्ज़ तो रूपये का होता है मगर रूपया क़र्ज़ लेना जायज़ है, ख़ुद ग़ल्ला क़र्ज़ लेना सही हदीस में हुज़ूर अकरमﷺ से साबित है।

एक ही जिन्स के फर्क का हुक्म

एक ही जिन्स की चीज़ों में अगरचे स्पष्ट फर्क हो जाए और इसकी वजह से क़ीमतों में बड़ा फ़र्क़ पैदा हो जाए फिर भी कमी बेशी नाजायज़ है, यानी फ़ज़ल(ज़्यादती)हराम है, हुज़ूर ﷺ की हदीस पाक से इसका सबूत है, इसलिए अटकलें लगाना नाजायज़ मात्र है।

1

عَنْ أَبِي سَعِيدٍ الْخُدْرِيِّ وَعَنْ أَبِي هُرَيْرَةَ ، أَنَّ رَسُولَ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ اسْتَعْمَلَ رَجُلًا عَلَى خَيْبَرَ فَجَاءَهُ بِتَمْرٍ جَنِيبٍ . فَقَالَ لَهُ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ : " أَكُلُّ تَمْرِ خَيْبَرَ هَكَذَا ؟ " فَقَالَ : لَا وَاللهِ يَا رَسُولَ اللهِ. إِنَّا لَنَأْخُذُ الصَّاعَ مِنْ هَذَا بِالصَّاعَيْنِ، وَالصَّاعَيْنِ بِالثَّلَاثَةِ. فَقَالَ رَسُولُ اللهِ صَلَّى اللهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ : " فَلَا تَفْعَلْ، بِعِ الْجَمْعَ بِالدَّرَاهِمِ، ثُمَّ ابْتَعْ بِالدَّرَاهِمِ جَنِيبًا "-[صحيح مسلم،

باب الربو، ج ۲ ، ص ۲۶ ، قدیمی کتب خانہ کراچی]

तर्जुमा:अबू सईद और अबू हुरैरा से रिवायत है कि हुज़ूर ﷺ ने एक शख़्स को ख़ैबर का कर्मचारी बनाया तो वह सरकार के पास मालगुज़ारी में उम्दा किस्म की खजूरें लेकर आए, आपने दरयाफ़त फ़रमाया :क्या ख़ैबर की सारी खजूरें ऐसी ही होती हैं? उन्होंने कहा नहीं, ख़ुदा की क़सम हमको जो खजूरें मिलती हैं (मिली जुली) उन्हें कभी दो साअ़ के बदले में एक साअ़ और तीन साअ़ के बदले दो साअ़ अच्छी

ख़जूरों से बदल लिया करते हैं, ये सुनकर आपने फ़रमाया कि पहले मिली जुली ख़जूरों को दिरहमों के एवज़ में बेच दो फिर अच्छी किस्म की खजूरें दिरहमों के बदले में ख़रीद लो।

2

جَاءَ بِلَالٌ إِلَى النَّبِيِّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ بِتَمْرٍ بَرْنِيٍّ، فَقَالَ لَهُ النَّبِيُّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ : " مِنْ أَيْنَ هَذَا ؟ " قَالَ بِلَالٌ : كَانَ عِنْدَنَا تَمْرٌ رَدِيٌّ، فَبِعْتُ مِنْهُ صَاعَيْنِ بِصَاعٍ ؛ لِنُطْعِمَ النَّبِيَّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ. فَقَالَ النَّبِيُّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ عِنْدَ ذَلِكَ : " أَوَّهْ أَوَّهْ، عَيْنُ الرِّبَا، عَيْنُ الرِّبَا، لَا تَفْعَلْ، وَلَكِنْ إِذَا أَرَدْتَ أَنْ تَشْتَرِيَ فَبِعِ التَّمْرَ بِبَيْعٍ آخَرَ ثُمَّ اشْتَرِهِ ".[صحیح البخاری،باب اذا باع الوکیل شیئا فاسدا فبیعه مردود، ج ۱، ص ۳۱۱، قدیمی کتب خانه کراچی]

तर्जुमा:अबू सईद कहते हैं कि एक बार बिलाल हुज़ूर के पास बरनी (अच्छी किस्म की) खजूरें लेकर आए, आपने फ़रमाया :कहाँ से लाए हो? उन्होंने अर्ज़ किया: हमारे पास घटिया किस्म की खजूरें थीं, मैंने उसी में से दो साअ़ देकर यह अच्छी खजूर एक साअ़ ख़रीद ली, आपने फ़रमाया हाए यही तो सूद है ऐसा मत करो, जब तुम्हें अच्छी खजूरें ख़रीदनी हों तो अपनी खजूरें दिरहम या किसी दूसरी चीज़ के एवज़ बेच दो फिर उस क़ीमत से अच्छी खजूरें ख़रीद लो।

3

عَنْ أَبِي سَعِيدٍ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ، قَالَ : كُنَّا نُرْزَقُ تَمْرَ الْجَمْعِ – وَهُوَ الْخِلْطُ مِنَ التَّمْرِ – وَكُنَّا نَبِيعُ صَاعَيْنِ بِصَاعٍ، فَقَالَ النَّبِيُّ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ : " لَا صَاعَيْنِ بِصَاعٍ، وَلَا دِرْهَمَيْنِ بِدِرْهَمٍ ". [صحیح البخاری، باب بیع الخلط من التمر، ج ۱، ص ۲۷۹، قدیمی کتب خانه کراچی]

तर्जुमा: अबू सईद ख़ुदरी कहते हैं कि हम लोगों को तनख़्वाहों में मिली जुली खजूरें मिला करती थीं और हम दो साअ़ मिली जुली किस्म की खजूर देकर एक साअ़ अच्छी किस्म की खजूर ले लिया करते थे, तो नबी करीम ﷺ ने फ़रमाया दो साअ़ को एक साअ़ के बदले और दो दिरहम को एक दिरहम के बदले ना बेचो।

इन तमाम हदीसों को ग़ौर से पढ़िए तो आपको मालूम होगा कि एक ही जिन्स की चीज़ों में फर्क की वजह से ज़्यादा लेना जायज़ नहीं है, अगर कोई चीज़ उम्दा किस्म की हो और वही चीज़ दूसरे के पास घटिया दर्जे की हो, मसलन गेहूँ, चावल, जौ वग़ैरा का मुबादला उन्हीं की जिन्स से कमी बेशी के साथ हरगिज़ हरगिज़ जायज़ नहीं है, चाहे उन जिन्सों में एक दूसरे में कितना ही फ़र्क़ हो, इसलिए अगर ऐसी ज़रूरत पड़ जाये कि उम्दा चीज़ को ख़राब के बदले लेना हो, मसलन ख़राब चावल के बदले अच्छा चावल लेना हो तो इसकी सूरत सिर्फ यह है कि अपने ख़राब चावल को फ़रोख़्त करके उसकी क़ीमत के बदले में उम्दा चावल ख़रीदे, ऐसा नहीं कर सकता कि अपना ख़राब चावल ज्यादा देकर उसके बदले में उम्दा किस्म का चावल कम ख़रीदे क्योंकि इसको सरकार दो-आलम अलैहिस-सलाम ने सूद बताया है, ख़ुलासा ये है कि चीज़ों की अदला बदली में जब कि एक ही जिन्स की हों क़ीमतों की कमी बेशी का कोई लिहाज़ न होगा, बल्कि एक ही जिन्स की चीज़ें अगर ऐसी हों कि सूखने के बाद कम हो जाती हों तो उनकी ख़रीद-व-फ़रोख़्त जायज़ नहीं है, चाहे बराबर बराबर बेची जाएं या कमी बेशी के साथ।

قال سعد: سمعت رسول الله ﷺ يسئل عن اشتراء التمر بالرُّطبِ فقال لمن حوله أينَقُصُ الرطب إذا يبس قالوا نعم فنهى عن ذالك. [ترمذی ج ۱ ص ۱٤۷، باب البيوع]

तर्जुमा: साद बिन वक़्क़ास कहते हैं कि नबी करीम ﷺ से पूछा गया और मैं सुन रहा था कि सूखे खजूर की अदला बदली ताज़ा खजूर के साथ किया जाये? आप ने दरयाफ़त फ़रमाया :क्या तर खजूर कम हो जाती है जब कि सूख जाए? तो सवाल करने वाले ने अर्ज़ किया :हाँ तो आपने इस अदला बदली से मना फ़रमाया, यानी आपने फ़रमाया कि किसी तरह उसकी तिजारत नहीं हो सकती, न बराबर, न कमी बेशी के साथ हो सकती है।

सवाल-जवाब

कुछ लोगों के ज़हन में यह सवाल बार-बार उभरता है कि हुज़ूर ﷺ ने एक जिन्स की अच्छी और ख़राब चीज़ों की ख़रीद-फ़रोख़्त को ज़्यादती के साथ मना करके फिर अच्छी चीज़ की ख़रीद की यह तदबीर बताई कि ख़राब चीज़ को बेच कर उसके बदले में क़ीमत के ज़रीए उम्दा चीज़ हासिल की जाए , यह तदबीर रिबा-अल-फ़ज़ल से बचने के लिए बेहतर होने के बावजूद इसमें कभी-कभी परेशानी उठानी पड़ेगी, ऐसा क्यों नहीं किया जाता कि कोई चीज़ उम्दा हो जब उसको उसी की जिन्स की घटिया चीज़ से बदला जाये तो उम्दा चीज़ की क़ीमत लगा कर और वह भी बाज़ार भाव से ख़राब चीज़ ज़्यादा ले ली जाये।

इसका जवाब यह है कि ऐसा इसलिए नहीं किया जा सकता कि वस्तुओं की ख़रीद-फ़रोख़्त में जो रिबा (सूद) होता है उसको इसलिए हराम किया गया है कि इससे रिबा हक़ीक़ी (असली सूद) का दरवाज़ा बिलकुल बंद करना मक़सूद था और क़ीमत वाली तदबीर से वह ज़हनीयत मुर्दा ना होती जो रिबा हक़ीक़ी का सबब बनती है, रिबा हक़ीक़ी (असली सूद) दर असल रिबा-अल-कर्ज़(क़र्ज वाला सूद) है और इसको रिबा-ए-नसीइआ भी कहा जाता है, जैसा कि शाह वलीउल्लाह साहिब मुहद्दिसे देहलवी अपनी विश्व विख्यात किताब हुज्जतुल्लाह अलबालिग़ह में लिखते हैं कि:

"اعلم ان الربو علی وجهین: حقیقی و محمول علیه ،اما الحقیقی فهو فی الدیون و قد ذکرنا ان فیه قلبالموضوع المعاملات و ان الناس کانوا منهمکین فیه فی الجاهلیة اشد انهماك و کان حدث لاجلهٖ محاربات مستطیرة و کان قلیله یدعوالی کثیرہٖ فوجب ان یسد بابه بالکلیة و لذلك نزل فی القرآن فی شانه مانزل والثانی ربٰو الفضل والاصل فیه الحدیث المستفیض :الذهب بالذهب والفضة بالفضة والبر بالبر والشعیر بالشعیر والتمر بالتمر والملح بالملح مثلا بمثل سواء بسواء یدا بید ،فاذااختلفت هذه الاصناف فبیعوا کیف شئتم اذا کان یدا بیدٍ و هو مسمّی بربٰو تغلیظا و تشبیها له بالربٰو الحقیقی علی حد قوله علیه السلام "المنجم کاهن" و بهٖ یفهم معنی قوله صلی الله علیه وسلم"لاربٰو الا فی النسیئة، ثم کثر فی الشرع استعمال الربٰو فی هذا المعنیٰ حتی صارت حقیقة شرعیة فیه ایضاً والله اعلم. [حجة الله البالغه، ج ۲، من ابواب ابتغاء الرزق مطبع دارالجیل]

तर्जुमा: तुम जान लो कि रिबा (सूद) की दो किस्में हैं:(१) हक़ीक़ी (२)जो रिबा-ए-हक़ीक़ी मान लिया गया हो, रिबा-ए-हक़ीक़ी क़र्ज़ में होता है और हमने पहले बता दिया है कि इसमें मामलात का मक़सद बिलकुल उलट-पलट जाता है और जाहिलियत युग में लोग इसमें बहुत संलिप्त रहते थे और इसी के सबब बड़ी लंबी लड़ाईयां वजूद में आयीं, इस किस्म का मामूली रिबा (साधारण सूद) ग़ैरमामूली रिबा (असाधारण सूद) का सबब बनता है, इसलिए लाज़िम है कि इसका दरवाज़ा मुकम्मल तौर से बंद कर दिया जाये, जैसे कि क़ुरआन शरीफ़ में बहुत कुछ धमकियां उसके बारे में नाज़िल हुईं, रिबा की दूसरी किस्म रिबा अल फ़ज़ल है, इसकी हुर्मत का सबूत यह हदीस मशहूर है कि सोने का बेचना सोने के बदले में, चांदी का चांदी के बदले में, गेहूँ का

गेहूँ के बदले में, जौ का जौ के बदले में, छोहारे का छोहारे के बदले में, नमक का नमक के बदले में, बराबर दस्त-ब-दस्त जायज़ है और जब यह चीज़े बदल जाएं तो जैसा चाहो बेचो, जब कि दस्त-ब-दस्त हो, रिबा अल फ़ज़ल को रिबा हक़ीक़ी से समानता की बिना पर रिबा नाम दिया गया है, जैसे कि सरकार के क़ौल المنجم كاهن(यानी नजूमी काहिन है) में है, उसी से सरकार अलैहिस-सलाम का क़ौल

" لا ربٰو الا فی النسئیة "

का मतलब समझा जा सकता है, फिर शरीयत में रिबा का इस्तेमाल इस अर्थ में भी शरयी हक़ीक़त हो गया है। और अल्लाह बेहतर जानने वाला है।

इसी रिबा-ए- हक़ीक़ी को मशहूर हनफ़ी फ़क़ीह-व-मुहद्दिस इमाम तहावी रज़ी अल्लाह अन्हू रिबा अल असल (असल सूद) से रेखांकित करते हैं, फ़रमाते हैं

وکان الحجة لهم فی تاویل حدیث ابن عباس رضی الله تعالیٰ عنهما عن اسامة الذی ذکرنا فی الفصل الاول ان ذلك الربٰو انما عنی به ربٰو القرآن الذی کان اصله فی النسئیة .

वह हदीस जिसको हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ी अल्लाह अन्हुमा ने हज़रत उसामा रज़ी अल्लाहू अन्हू से रिवायत किया है उसकी व्याख्या के सिलसिले में अइम्मा-ए-किराम की दलील यह है कि इस रिबा से रिबा-उल-क़ुरआन मुराद है जिसकी असल क़र्ज़ में है।

[शरह मआनी अल आसार, जिल्द 4 पेज 65आलमु लकुतुब बैरूत]

फिर उसी रिबा को मशहूर हनफ़ी मुहद्दिस शारहे बुख़ारी इमाम अल्लामा बदरुद्दीन ऐनी रिबा ए अकबर के नाम से लिखते हैं, जैसा कि हदीस " لا ربٰو الا فی النسئیة "(ला रिबा इल्ला फिन् नसिइया) की व्याख्या के अंतर्गत तहरीर फ़रमाते हैं कि:

واختلفوا فی الجمع بینه و بین حدیث ابی سعید فقیل منسوخ و قیل معنیٰ لا ربٰو اغلظ شدید التحر یم المتوعد علیه بالعقاب الشدید کما تقول العرب لا عالم فی البلد الا زید ،مع ان فیه علماء غیره و انما القصد نفی الاکمل لا نفی الاصل و ایضاً فنفی تحر یم ربوا الفضل من حدیث اسامة انما هو بالمفهوم فیقدم علیه حدیث ابی سعید لان دلالته بالمنطوق و یحمل حدیث اسامة علی الربٰو الاکبر۔[عمدة القاری شرح البخاری الجزء التاسع ص۳۹۳]

हदीस के व्याख्याकारों ने हज़रत उसामा और हज़रत अबू सईद की हदीसों के बीच जमा व मिलान के सिलसिले में इख़तिलाफ़ किया है, कुछ लोगों का ख़्याल है कि हज़रत उसामा की हदीस मंसूख़ है और कुछ लोगों का कहना है कि इस हदीस का मतलब यह है कि कोई ऐसा शदीद तर रिबा नहीं है, जिस पर इतनी शिद्दत के साथ सख़्त अज़ाब की धमकी दी गई हो जैसा कि अरब कहते हैं कि

"لا عالم فی البلد الا زید"

(शहर में ज़ैद के अलावा कोई आलिम नही) हालांकि शहर में उसके अलावा भी आलिम होते हैं, मक़सूद कामिल तर को नकारना है न असल को नकारने का उद्देश्य है, इसके अलावा हज़रत उसामा की हदीस से रिबा अल फ़ज़ल की हुर्मत की नकार मफ़हूमे मुख़ालिफ़ (विपरीत अवधारणा) द्वारा साबित होती है, तो हज़रत अबू सईद की हदीस को तर्जीह हासिल होगी, क्योंकि इसका मतलब शाब्दिक है और उसामा की हदीस को रिबा ए अकबर माना जाएगा।

हाफ़िज़ इब्ने क़य्यिम ऐलाम-अल-मौकईन में इसी रिबा ए हक़ीक़ी को रिबा ए जली के नाम से ताबीर करते हैं और साफ-साफ लिखते हैं कि रिबा अल फ़ज़ल को दर असल रिबा ए जली यानी रिबा ए हक़ीक़ी

का दरवाज़ा बंद करने के लिए हराम क़रार दिया गया है, वह अपने खास अंदाज़ में इस मसले पर भरपूर रोशनी डालते हुए लिखते हैं कि:

الربٰو نوعان، جلی و خفی ،فالجلی حرم لما فیه من ضرر عظیم والخفی حرم لانه ذریعة الیٰ الجلی فتحریم الاول قصداً وتحریم الثانی وسیلةً، فاما الجلی فربا النسئیة و هو الذی کانوا یفعلونه فی الجاهلیة مثل ان یوخردینه و یزیده فی المال و کل مااخره زاد فی المال حتی تصیر المائة عنده آلا فامولفة.]اعلام المؤقعین الجزء الثالث ص٣٩٧،دارابن الجوزی ،المملکة العربیة السعودیة[

रिबा की दो किस्में हैं (1)जली (जाहिर) (२) ख़फ़ी(छुपा हुआ)। रिबा ए जली को बहुत बड़े नुक़्सान की वजह से हराम किया गया और रिबा ए ख़फ़ी को इसलिए हराम किया गया है कि वह रिबा ए जली का ज़रीया है इसलिए पहले रिबा ए जली को हराम करना प्रत्यक्ष और निश्चयपूर्वक और रिबा ए ख़फ़ी को हराम करना अप्रत्यक्ष है, बाक़ी रहा रिबा ए जली तो वह रिबा ए नसिइया है यह वही रिबा है जिसका लेन-देन जाहिलियत युग में लोग करते थे, जैसे कि अपने क़र्ज़ को आगे बढ़ा दे और अपना तक़ाज़ा बढ़ा दे और जब जब बढ़ाए तो माल के अंदर इज़ाफ़ा कर दे, यहां तक कि एक सौ हज़ार-हज़ार के वसूलने का ज़रीया बन जाये।

फिर रिबा अल फ़ज़ल की अधिक व्याख्या करते हुए हाफ़िज़ इब्ने क़य्यिम लिखते हैं:

و اما ربوالفضل فتحریمه من باب سد الذرائع کما صرح به فی حدیث ابی سعید الخدری رضی الله عنه عن النبی صلی الله علیه وسلم لاتبیعواالدرهم بدرهمین فانی اخاف علیکم الرباء والرماء هو الرباء، فمنعهم من رباالفضل لما یخافه علیهم من ربالنسیئة وذلك انهم اذا باعوا درهما بدرهمین ولا یفعل هذا

الاللتفاوت الذى بين النوعين، اما فى الجودة واما فى السكة واما فى الثقل والخفة وغير ذلك ،تدرجوا بالربح المعجل فيها الى الربح المؤخر هو عين ربالنسيئة و هذه ذريعة قريبة جداً ،فمن حكمة الشارع ان سد عليهم هذه الذريعة ،فمنعهم من بيع درهم بدرهمين نقداًونسيئة، فهذه حكمة معقولة مطابقة للعقول۔[اعلام المؤقعين الجزء الثانى ص ٣٩٨۔٣٩٩]

बाक़ी रहा रिबा अल फ़ज़ल तो इसको इसलिए हराम क़रार दिया गया कि सूद का दरवाज़ा बंद कर दिया जाये, जैसा कि इसकी तशरीह अबू सईद ख़ुदरी रज़ी अल्लाह अन्हू की हदीस में है, वह यह है कि एक दिरहम को दो दिरहम के बदले मत बेचो, इसलिए कि मैं तुम्हारे लिए रिबा से डरता हूँ, हुज़ूर ﷺ ने रिबा अल फ़ज़ल से इसलिए मना कर दिया कि इसकी वजह से आपको रिबा ए नसीइआ का अंदेशा था, वो इस तौर पर कि जब एक दिरहम को दो दिरहम के बदले बेचा जाएगा और बिलकुल ये ज़ाहिर बात है कि ये सिर्फ इन दोनों किस्म के दिरहम में फ़र्क़ की वजह से होगा, चाहे यह फ़र्क़ खरा होने, या ढले हुए होने से हो या यह फ़र्क़ वज़नी या हल्का होने की वजह से हो, तो आहिस्ता-आहिस्ता त्वरित लाभ के माध्यम से देर में मिलने वाले लाभ तक पहूंच जाऐंगे और यही रिबा ए नसीइआ है और रिबा ए नसीइआ के लिए यह बहुत क़रीब साधन था, इसलिए शारेअ़ हकीम ने उनके ऊपर इस साधन को बंद कर दिया और रोक दिया कि एक दिरहम को दो दिरहम के बदले दस्त-ब-दस्त या उधार बेचा जाये, यह समझ में आने वाली हिक्मत है जो अक़्लों के मुताबिक़ है।

अहले सुन्नत के मशहूर आलम ए दीन हज़रत मौलाना ग़ुलाम रसूल साहब सईदी रिबा अल फ़ज़ल की तारीख़ की तरफ़ इशारा करते हुए लिखते हैं कि:

दर असल रिबा अल फ़ज़ल को हराम करना एक रोक-थाम प्रकृति का हुक्म है, चूँकि अरब में आम रिवाज था कि वह एक जिन्स की चीजों का दस्त-ब-दस्त लेन-देन करते थे और इसमें कमी बेशी को जायज़ रखते थे, तो हुज़ूर ﷺ ने पेशबंदी के तौर पर एक जिन्स की चीजों में बढ़ोतरी और क़र्ज़ (उधार)को भी हराम फ़रमा दिया, ताकि ये मामला कहीं रिबा ए नसीइया की तरफ़ बढ़कर पहुंच न जाए, जो निश्चित रूप से हराम है, इसकी ताकीद इस बात से होती है कि कंज़ुल उम्माल की रिवायत में इस हदीस के साथ ये अलफ़ाज़ भी आये हैं:

فانی اخاف علیکم الرباء

मुझे ये ख़ौफ़ है कि कहीं इस दस्त-ब-दस्त ज़्यादती से तुम सूद की लानत में न गिरफ़्तार हो जाओ और इस पर और ज्यादा जोर इमाम बुख़ारी की इस रिवायत से होती है जो वह हज़रत उसामा से रिवायत करते हैं:

اخبرنی اسامة ان النبی صلی اللہ علیہ وسلم قال لی لا ربٰوا الا فی النسیئة . [صحیح البخاری، کتاب البیوع، باب بیع الدینار بالدینار، ج۱، ص۲۹۱، مطبع سابق]

तर्जुमा: हज़रत इब्ने अब्बास फ़रमाते हैं कि मुझे हज़रत उसामा ने ख़बर दी कि रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया कि सूद नहीं है मगर उधार में।

इस हदीस की सही जगह यही है कि जो रिबा हराम क़तई है और जिस पर अज़ाब की सख्त धमकी है वह रिबा ए नसीइया है जिसको रिबा अल कुरआन कहते हैं और रिबा अल फज़ल जिसका हदीस शरीफ़ में ज़िक्र है उसकी हुर्मत ज़न्नी (आकलन द्वारा)और इंसिदादी (रोक-थाम वाली) प्रवृत्ति की है।

[मक़ालात सईदी स ३५९।३६०, ज़िया उल-क़ुरआन पब्लीकेशन पाकिस्तान]

इन तफ़सीलात से स्पष्ट हुआ कि रिबा ए हक़ीक़ी का दरवाज़ा मुकम्मल तौर से बंद नहीं हो सकता, जब तक कि रिबा अल फ़ज़ल

यानी ख़रीद-व-फ़रोख़्त के मामलात में जो रिबा (सूद) होता है उस पर पाबंदी न लगा दी जाये, क्योंकि इस किस्म के सूद से रिबा ए हक़ीक़ी की मानसिकता को बढ़ावा मिल सकता था बल्कि यूं कहना चाहिए कि रिबा ए हक़ीक़ी की तरफ़ जाने के यह सब रास्ते थे इसलिए शारअे हकीम ने इन सबको सख़्ती के साथ मना कर दिया क्योंकि शरीयत इस्लामी का आम दस्तूर यह है कि जब किसी चीज़ को हराम किया जाता है तो इसकी तरफ़ ले जाने वाले तमाम रास्तों को भी एक एक करके बंद कर दिया जाता है, लेकिन इन्सानी हाजत-व-ज़रूरत को पूरा करने के रास्तें भी निकाले जाते हैं, और वो रास्ता इस मसला में यही था कि अगर कोई उम्दा चीज़ हो और उसी की जिन्स से जो कम दर्जा की हो अदला-बदली की जाये तो इस घटिया चीज़ को क़ीमतों से बदल लिया जाये, थोड़ी सी ज़हमत ज़रूर उठानी पड़ेगी लेकिन शैतान के दाख़िल होने का दरवाज़ा बिलकुल बंद हो जाएगा।

बहस का खुलासा

बहरहाल यहां तक जो कुछ बयान हुआ उसमें रिबा अल कर्ज़ या रिबा अल दैन और दूसरे प्रकार की बुराइयों का जायज़ा कुछ तफ़सील के साथ लिया गया।

हमारे पाठक पर यह बात भी स्पष्ट रहनी चाहिए कि रिबा अल फ़ज़ल का सबूत हदीस मुतवातिर से है और यह रिबा क़ुरआन नाज़िल होने के वक़्त आम तौर पर जारी नहीं था बल्कि रबा ए नसीइआ ही जारी था, इसीलिए हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास का मसलक यह था कि अगर कोई शख़्स दस्त-ब-दस्त .ज्यादा रक़म ले-ले तो यह सूद नहीं है, न हराम की टोली में दाख़िल है बल्कि सूद यह है कि कोई शख़्स किसी दूसरे से क़र्ज़ ले और ज़ायद की शर्त लगा दे या किसी के ज़िम्मे कोई दैन (क़र्ज) हो वह उसके वक़्त मुतय्यन पर अदा न कर सके तो कर्ज़ देने वाला कर्जदार से अपने क़र्ज़ से ज़ायद वसूल करे।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ी अल्लाह अन्हुमा की दलील हज़रत इक्रिमा वाली हदीस है जिसको इमाम तहावी ने मुतअद्दिद (कई) सनदों से तख़रीज की है, वह हदीस यह है:

انما الربوافی النسیئة या لا ربوالافی النسیئة

गोया रिबा को हराम करने वाली आयत के नाज़िल होने के वक़्त जो रिबा प्रचलित था उसी को अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने सूद समझा था, लेकिन जब रिबा अल फ़ज़्ल की हदीसें वारिद हुईं और रिबा का दायरा बढ़ गया तो हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने अपने विचार को बदला, और वह भी दूसरे सहाबा-ए-किराम की तरह रिबा-अल-फज़्ल और रिबा अल नसीइया दोनों की हुर्मत के क़ायल हुए, बल्कि हक़ीक़त तो यह है कि अपने पहले मौक़िफ़ से रुजू के वक़्त आपने तौबा-व-इस्तिग़फ़ार किया।

अह्दे क़दीम और अह्दे जदीद दोनों में रिबा अल फ़ज़्ल का रिवाज कम रहा है, हाँ रिबा अल कर्ज़ या रिबा अल दैन या रिबा अल नसीइया का दौर दौरा हर ज़माने में रहा, बल्कि मौजूदा ज़माने में इसकी हुक्मरानी सारी दुनिया पर मुसल्लत है, इसलिए ज़रूरत है कि इस बात पर ग़ौर किया जाये कि रसूल अल्लाह के ज़माने के प्रारंभिक दौर में रिबा की कितनी सूरतें पाई जाती थीं, तलाश-व-जुस्तजू के बाद जो कुछ हासिल हुआ है वह पाठकों के लिए हाजिर है।

रिबा ए नसीइया की सूरतें

इमाम फ़ख्रुद्दीन राज़ी फ़रमाते हैं कि जाहिलियत युग का रिबा यह था कि लोग अपना माल दूसरे को इस शर्त पर देते थे कि माह ब माह एक निश्चित मात्रा ज्यादा लेंगे और असल माल बाक़ी रहेगा, फिर जब क़र्ज़ की अदाइगी का वक़्त आता तो उससे मूल धन का मुतालबा करते थे, अगर अदाएगी कठिन हो जाती तो समय सीमा और अधिकार में इज़ाफ़ा कर देते।

(अल तफ़सीर अल-कबीर जिल्द: 4, पेज: ८७ , दार अल हदीस क़ाहिरा)

हज़रत अबू बकर जस्सास के बक़ौल एक निश्चित समय सीमा तक क़र्ज़ लेकर मूल धन से ज़ायद का समझौता करते थे।

(अहकाम-उल-क़ुरआन लिल जस्सास, जिल्द: २, पेज: १८४, दार इहया-ए-अलतरासुल अरबी बैरूत)

हज़रत मुजाहिद फ़रमाते हैं कि एक आदमी का दूसरे शख़्स के ऊपर जाहिलियत युग में एक ख़ास वक़्त के लिए क़र्ज़ होता था, फिर जब मीयाद पूरी हो जाती थी तो तकाजा पर क़र्ज़दार ये कहता था कि कुछ दिनों के लिए मोहलत दे दो हम तुमको ज़्यादा माल देंगे, इस तरह बराबर सूद में इज़ाफ़ा होता रहता था।

(जामेउलबयान जिल्द ५ पेज ४३, मर्कज़ अल बुहूस वल दरासात अलअरबिया बेदारे हिज्र)

हज़रत क़तादा के बयान के मुताबिक़ जाहिलियत का रिबा यह था कि एक शख़्स दूसरे शख़्स के हाथ कोई माल बेचता और क़ीमत अदा करने के लिए एक वक़्त मुक़र्रर होता, जब वक़्त गुज़र जाता तो फिर वह और मोहलत देता और क़ीमत में इज़ाफ़ा कर देता था।

(जामेउलबयान जिल्द ५ पेज ३८)

इन तमाम सूरतों पर जो दर असल रिबा अल कर्ज़ या रिबा अल दैन की मुख़्तलिफ़ शक्लें हैं आप ग़ौर फ़रमाएं तो आप पर स्पष्ट होगा कि अह्द क़दीम यानी ज़माना-ए-जाहिलियत या अंधकार युग में सूद की जितनी सूरतें पाई जाती थीं शायद ही कोई ऐसी सूरत हो कि अह्देजदीद या प्रज्वलित युग में न पाई जाती हों, आज भी माह ब माह या सालाना क़र्ज़ के ऊपर सूद लिया जाता है, एक ख़ास वक़्त के लिए रक़म ली जाती है, सूदी दौलत में बराबर इज़ाफ़ा की तदबीरें निकाली जाती हैं, किस को नहीं मालूम कि चीजों की ख़रीद-व-फ़रोख़्त में सूद का धंधा आज भी जारी है और ज़माना-ए-जाहिलीयत में भी जारी था, इसलिए सूद की हुर्मत के सिलसिले में यह बकवास निंदनीय है कि हुज़ूर ﷺ के ज़माने में व्यवसायिक सूद का रिवाज नहीं था।

इमामों का मतभेद

हम इस बात को बार-बार बयान कर आए हैं कि हक़ीक़ी रिबा रिबा ए नसीइया है, चूँकि बहुत से विद्वान इस बिन्दू से बेखबर हैं और इस पर अचम्भा हो जाते हैं इसलिए इस ख़ास बिन्दू पर विस्तृत रोशनी डाली गई, मगर यह बात विशेष रूप से भूलना नहीं चाहिए कि हुज़ूर ﷺ ने ख़रीद-व-फ़रोख़्त के बहुत से मामलात को सूद के निम्न में सम्मिलित किया, उनके हराम होने में भी बात नहीं की जा सकती, हाँ सम्मानित इमामों के दरमयान इल्लते रिबा (सूद के कारण) के बारे में मतभेद हुआ इसलिए इस पर भी एक नज़र डाल लेना उचित होगा।

हनफियों का मज़हब:

हनफियों के नज़दीक हर मापी जाने वाली या वज़नी चीज़ में जिन्स के समान होने से रिबा का वजूद होता है, मसलन गेहूँ को गेहूँ के बदले बेचा जाये और ज़्यादती हो तो रिबा होगा।

शाफईयों का मसलक:

शाफईयों के नज़दीक ग़िजाईयत या मालियत जिन्स की समानता के साथ रिबा के हराम होने का कारण है, यानी ग़िज़ा वाली चीज़ों में जिन्स की समानता हो जाएगी तो रिबा होगी, यूँही सोना चांदी में जिन्स में समानता हो जाएगी तो ज़्यादती रिबा हो जाएगी।

मालिकीयों का मसलक:

मालिकीयों के नज़दीक रोज़ी या रोज़ी बनने की योग्यता ही रिबा के हराम होने की इल्लत (कारण)है।

अब्दुल मलिक बिन मासजून का मसलक:

यह है कि हर वो चीज़ जिससे फ़ायदा हासिल किया जाये उसमें ज़्यादती रिबा है।(तफ़सीर कबीर जिल्द:७, पेज:९४, दारुल फिक्र, बैरूत)

यह मसालिक-व-मज़ाहिब इख़तिलाफ़े इल्लत (कारण) की भिन्नता वजह से अस्तित्व में आए, जिनके सबब बहुत से जुज़वी

(आंशिक) मसाइल में इमामों के दरमयान इख़्तिलाफ़ पैदा हुआ, जिसके नज़दीक उपयोगी चीज़ में सूद होता है उसके यहां रिबा का दायरा बहुत विस्तृत हो जाएगा, मसलन एक आम देकर दो आम लेना जायज़ न होगा क्योंकि इससे भी फ़ायदा हासिल किया जाता है, लेकिन हनफियों के नज़दीक इसमें रिबा न होगा, इसलिए कि यह मापी या तौली जाने वाली चीज़ नहीं है, यूँही शाफ़ईयों के नज़दीक लोहा, ताँबा, पीतल, जस्ता तमाम खनिज और तमाम ऐसी चीज़ें जिनमें ग़िजाईयत नही होती और साथ ही वह कीमत नहीं बनते उनमें सूद नही पाया जायेगा, और हनफ़ियों के नज़दीक उनमें सूद पाया जायेगा, ख़ुलासा यह है कि इख़्तिलाफ़-ए-इल्लत (कारण की भिन्नता) की वजह से जुज़ईआत के हर भाग में इख़्तिलाफ़ हुआ और इसी इख़्तिलाफ़ को देखकर मौजूदा ज़माने के कुछ लोगों ने यह तर्क दिया कि सूद का हराम होना ऐसा क़तई और लाज़िमी नहीं है कि व्यवसायिक चीज़ो में भी सूद हो और इससे आगे बढ़कर ये भी कहा गया कि जब अब तक यही फ़ैसला नहीं हो पाया कि किन-किन चीज़ों में सूद पाया जाता है और किन में नहीं होता, सूद के अर्थ और मतलब में जब इस क़दर धुंधलापन और संक्षेप पाया जाता है तो इसकी वजह से, खेती-बाड़ी और व्यवसायिक कामों के लिए जो सूद लिया जाता है वह कैसे नाजायज़ होगा और जदीद बैंककारी जिसकी बुनियाद ही ज़ायद माल के लेने पर है वह कैसे हराम होगी, क्योंकि मौजूदा बैंक व्यवस्था अगर पूरे तौर पर ख़त्म हो जाएगी तो तमाम औद्योगिक संस्थाऐं, कारोबारी मंडियां तबाह-व-बर्बाद हो जाएंगी और कृषि और उद्योग का काम बिलकुल ठप पड़ जाएगा, इसलिए जब सूद संदेहास्पद चीज़ हुई जिसकी हक़ीक़त के निश्चय करने से पूरी इस्लामी दुनिया आजिज़ रह गई तो उसके सबब तमाम कारोबारी व्यवस्था को कैसे तहस नहस किया जा सकता है।

आधुनिक अर्थशास्त्री और अर्थ व्यवस्था के माहिर जो मौजूदा बैंककारी के बड़े ज़बरदस्त हिमायती हैं वह इस तरह के भ्रामक तर्कों से मुसलमानों के दिलों से सूद के हराम होने का शदीद एहसास ख़त्म करने का एक बहाना ढूँढते हैं, वर्ना अच्छी तरह से समझा जा सकता है कि जिस चीज़ को अह्द जाहिलियत में सूद समझा गया और जिसके हराम होने के बारे में उम्मत में कभी इख़तिलाफ़ नहीं हुआ यानी रिबा अल-क़र्ज़ या रबा अल नसीइया के माना में कोई धुंधलापन कोई संदेह नहीं रहा, यही सूद नुज़ूले क़ुरआन के वक़्त जारी था और इसी को भाषाविदों ने सूद समझा था और उम्मत मुस्लिमा में पहली शदाब्दी से लेकर मौजूदा ज़माने तक कोई मतभेद पैदा नहीं हुआ, और इसी सूद को इस्लामी विचारक हक़ीक़ी सूद क़रार देते हैं और यही वह सूद है जिसकी हुक्मरानी सारी दुनिया पर छाई हुई है और यही वह सूद है जिसको सत्ताधारी लोग दूसरे देशों से क़र्ज़ लेकर अदा करते हैं और इसी की वजह से हुकूमतों की बागडोर हमेशा सूदखोरों के हाथ में रहती है, भला बताईए कि इसके बारे में कब और कहाँ इस्लामी विद्वानों के बीच मतभेद हुआ, यह तो बिल्कुल स्पष्ट था, लिहाज़ा मतभेद का बहाना बना कर हराम होने का एहसास मुस्लिम क़ौम के दिलों से ख़त्म करना यह मुसलमानों के साथ बड़ी बे-बाकाना जुर्रत है बल्कि ग़द्दारी है, यह उनके साथ ख़ैर ख़्वाही नहीं बल्कि उनके दीन के मिटाने की एक सोची समझी साज़िश के सिवा कुछ भी नहीं, दुनिया में सिर्फ मुसलमानों की मुक़द्दस किताब ऐसी है जिसने सूद की बुराई, निंदा और उसके हराम होने के बारे में ऐसे दिलनशीं बयानात दिए जैसे बयानात दूसरे धर्मग्रंथों में नहीं पाए जा सकते, उन्हीं का नतीजा था कि मुसलमान हर दौर में इस को घिनावना समझते थे और इसको बदतरीन गुनाह तसव्वुर करके इससे बचने की कोशिश करते थे, बल्कि उसके नाम ही से घबराते थे।

एक संदेह का निवारण

कुछ लोग यह संदेह ज़ाहिर करते हैं कि अगर सूद ऐसी बुरी चीज़ होती जिससे तबाही-व-बर्बादी के दरवाज़े खुलते और इसके ज़रीये इन्सानों को कुछ फ़ायदा न पहुँचता तो अब तक कारोबारी दुनिया में हलचल मच जाती, लेकिन देखा यह जाता है कि इसी सूद की बदौलत बड़ी तरक़्क़ीयां हुईं, कारोबार में बड़ा फैलाव हुआ, कितने बेरोज़गारों को रोज़गार मिला, कितने निर्धनों को उनकी निर्धनता और गरीबी से छुटकारा मिला, फिर कैसे यक़ीन किया जाये कि सूद मुकम्मल तौर से तबाही का पेश-ख़ेमा है।

दुनिया की कोई ऐसी चीज़ नहीं जिसमें नफ़ा-व-नुक़्सान दोनों न पाए जाते हों, अगर संखिया जानलेवा है तो उसके भी कुछ फ़ायदे ऐसे हैं जिनके अच्छे प्रभाव दवाओं में ज़ाहिर होते हैं, अगर शराब की तबाहकारियों से बहुत से कुनबे तबाह-व-बर्बाद हो जाते हैं तो कहा जा सकता है कि इसमें भी कुछ न कुछ फ़ायदा ज़रूर होता है, जभी अल्कोहल के रूप में दवाओं में उसे इस्तेमाल किया जाता है, कितनी गंदी और फ़ासिद चीज़ें हैं जिनके ख़्याल ही से तबीयत में खिन्न पैदा होती है, अगर उनका विश्लेषण किया जाये तो उनमें ज़रूर कुछ न कुछ ऐसी सामग्री पाई जाती हैं जिनसे कुछ फ़ायदा हासिल किया जाता है मगर इन लाभ-और-मुनाफ़ा से ये तमाम गंदी और घातक चीज़ें हर हालत में मुबाह नहीं की जा सकतीं, क्योंकि चीजों के हलाल-व-हराम होने का दारो मदार उनके अधिकांश फायदे या नुक़्सानात पर है, अगर किसी चीज़ के अंदर बे-इंतिहा नुक़्सान पाई जा रही हों तो यह नहीं कहा जा सकता इसमें कुछ नफ़ा है, इसलिए इन्सानों के लिए उसे जायज़ होना चाहिए, ठीक इसी तरह सूद के कुछ मामूली फ़ायदे हो सकते हैं और उन फ़ाइदों की झलकियाँ भी दिखाई पड़ सकती हैं, लेकिन उसके नुक़सान, उसकी तबाही, उसकी गन्दगियां, उसकी नापाकियां और

उसकी कुरूपताएं इतनी ज़्यादा हैं कि अक़्ल-व-ख़िरद का फ़ैसला यही होना चाहिए कि किसी मजबूरी के बग़ैर कोई होशदार इन्सान उसके क़रीब न फटके, अगर एक तरफ़ तुमको यह नज़र आता है कि कुछ बेरोज़गारों को रोज़गार मिल रहा है तो दूसरी तरफ़ तुमको खुली आँखों से देखना चाहिए कि इससे कितने कुंन्बों की तबाही-व-बर्बादी के सामान पैदा हो रहे हैं, अगर तुम एक तरफ़ यह देखते हो कि इसी सूद की बदौलत मंडियों की रौनक बरक़रार है तो दूसरी जानिब तुम्हें इससे भी आँखें बंद नहीं रखना चाहिए कि ग़रीबों, मुहताजों की सारी पूँजी या उनकी गाढ़ी कमाई बल्कि उनके ख़ून का आख़िरी क़तरा पूँजीपतियों की कोठियों की रौनक में इज़ाफ़ा कर रहा है, सच्चाई यह है कि इसके बुराइयों के मुक़ाबले में इसके फ़ायदे बहुत कम हैं लिहाज़ा इसकी ज़ाहिरी चमक-दमक और दिलफ़रेबियों से बुद्धिमान लोगों को धोका नहीं खाना चाहिए।

इस के अलावा जो कुछ आर्थिक तरक़्क़ियां और उनके जलवे नज़र आ रहे हैं वो सिर्फ सूदी कारोबार की बरकत नहीं है, ज़माने की रफ़्तार इन्सान के वौद्धिक विकास के कारण हुई, इसलिए अपने वैज्ञानिक खोज से वर्तमान युग के इन्सान ने साईन्स और फ़लसफ़े में तरक्क़ी करके ऐसे उपकरण अविष्कृत किए जिनसे उसकी आर्थिक विकास की गति ज़्यादा तेज़ हो गई, इसलिए तमाम ख़ुशहालियों और तरक़्क़ियों का सेहरा सूद के सर डालना बिल्कुल ग़लत है।

अध्याय:4

बैंककारी

सारी दुनिया में जितने बैंक काम करते हैं उनकी बुनियाद सूद के लेन-देन पर है, यह सब ग़ैर इस्लामी उसूलों पर क़ायम हैं, इसलिए उनकी ज़रूरत का कितना ही एहसास दिलाया जाये, व्यवसायिक और औद्योगिक केन्द्र में उनको कितनी ही महत्ता हासिल हो और कृषि पेशा लोगों और उद्योगपतियों को कितना बड़ा फ़ायदा पहुँच रहा हो, फिर भी चूँकि यह सब इस्लाम के अहकाम से टकराते हैं इसलिए पहला सवाल यह उभरता है कि एक मुसलमान के लिए इन बैंकों में रुपया जमा करना कैसे जायज़ है, बज़ाहिर यह मालूम होता है कि बैंकों में रुपया जमा करना सूदी कारोबार के बढ़ावे में एक तरह से साथ देना है और सूदी कारोबार का साथ देना नाजायज़-व-हराम है, जैसा कि आला हज़रत फ़ाज़िल-ए-बरेलवी के कुछ फतवों से ज़हन उसी की तरफ़ जाता है कि मौजूदा बैंकों में सिरे से रुपया जमा करने का औचित्य ही नहीं होना चाहिए, आपसे सवाल किया गया:

क्या फ़रमाते हैं उलेमाए दीन इस विषय में कि एक शख़्स ने कुछ रुपया सूदी निकलवाया, दो शख़्स ज़ामिन हुए, अब गुनहगार ज़्यादा कौन है, वह शख़्स जिसने सूद पर दिया, अब तौबा करता है और वह सूद को वापिस देना चाहता है, तो यह तौबा उसकी क़बूल होगी या नहीं और वह सूद के गुनाह से पाक होगा या नहीं।

इमाम अहमद रज़ा ने जवाब में इरशाद फ़रमाया:

बेग़ैर सख़्त मजबूरी के जिसे शरीअत भी मजबूरी कहे सूदी क़र्ज़ लेना हराम है और इसी तरह उसके काम में किसी तरह की शिरकत हो गुनाह का सबब है, और हदीस में" हुम सवावुन "फ़रमाया, कि वह सब गुनाह में बराबर हैं, और सूद से तौबा के यही अर्थ हैं कि जिस मात्रा में

सूद लिया हो वापिस दे और अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ला से आइन्दा के लिए नादिम हो कर अह्द करे, उसकी तौबा बे-शक क़बूल होगी,

هوالذی یقبل التوبہ عن عبادہ

(अल्लाह अपने बन्दों की तौबा कबूल करता है)

और वो सूद के गुनाह से पाक हो जाएगा,

التائب من الذنب کمن لا ذنب له. والله اعلم

(गुनाह से तौबा करने ऐसे है जैसे उसने गुनाह किया ही नही)

(फतावा रिज़विया जिल्द: ७ पेज: ८४, मकतबा रिज़विया, कराची, पाकिस्तान)

इस इरशादे मुबारक के अलफ़ाज़ पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि इसी तरह उसके काम में किसी तरह की शिरकत हो वो गुनाह में बराबर हैं।

पंजाब के कुछ मुसलमानों ने आज से तक़रीबन अस्सी पचासी साल पहले ज़िला अमृतसर में एक सूदी बैंक क़ायम किया था, जिसका नाम उन्होंने "इमदाद-ए-बाहमी बैंक "या"कोआपरेटीव बैंक' रखा था, मस्जिद के इमाम साहिब ने इस बैंक की मेम्बरी क़बूल कर ली थी और रुपया जमा करके सूद लेने पर ज़िद कर रहे थे, इस पर फ़ाज़िले बरेलवी से इस बैंक और मस्जिद के इमाम के बारे में दो दीनदार आलम दीन मौलवी मुहम्मद इनायतुल्लाह साबरी और मौलवी मुहम्मद इस्माईल साहब चिश्ती ने एक इस्तिफ़्ता भेज कर दरयाफ़त किया, आपने जवाब लिखा:

वह बैंक हराम क़तई और यह क़वाइद सब शैतानी हैं और इसका मैंम्बर बनना हराम है और सूद लेना देना ज़रूर बराबर है, सही मुस्लिम में अमीरुल-मोमनीन अली कर्रमाल्लाहो वजहहु से मरवी है:

لعن رسول صلی الله علیه وسلم اکل الربوا و مؤکله و کاتبه و شاهدیه و قال هم سواء. [مشکوٰۃ المصابیح، باب الربو، ج۱، ص۲۵۱، مکتبہ رحمانیہ]

तो इमाम मज़कूर का इस बैंक की मैंम्बरी क़बूल करना हराम हुआ। क़ालाल्लाहो-तआला (अल्लाह तआला का फरमान है)

ولا تعاونوا على الاثم والعدوان

हदीस में है:

من مشى مع ظالم ليعينه و هو يعلم انه ظالم فقد خلع من عنقه ربقة الاسلام.

जिसने जान-बूझ कर ज़ुल्म पर मदद की उसने इस्लाम की रस्सी अपनी गर्दन से उतार दी और शक नहीं कि सूद लेना सख्त ज़ुल्म है, उसका मैंबर बनना और उसका उन सूदखोरों को रुपया देना इस सख्त ज़ुल्म पर मदद है और मदद करने वाला काम करने वाले की तरह है, लिहाज़ा कातिब (लिखनें वाले) पर भी लानत फ़रमाई, तो इस का रुक्न बनने वाला और इसके लिए रुपया देने वाला ज़रूर कातिब से लानत का कई दर्जा हकदार होगा। (फतावा रिज़विया जिल्द: ७ पेज: १०१-१०२)

फ़ाज़िले बरेलवी के इस फ़तवे पर कहा जा सकता है कि ये उस बैंक की बात है जिसके क़ायम करने वाले मुसलमान थे और उन्होंने सूदी कारोबार के लिए यह बैंक क़ायम किया था, इसलिए मुजद्दिदे इस्लाम ने ऐसे बैंक में हर तरह की भागीदारी को सूदी कारोबार की मदद माना गया था और इसके लिए रुपया देने वालों को लानत का हकदार बताया था, और मस्जिद के इमाम के पीछे नमाज़ को मकरूह तहरीमी और दोहराने योग्य बताया था, इससे यह दलील नहीं पेश की जा सकती कि दुनिया-भर के किसी बैंक में चाहे यहूदीयों के हों या ईसाईयों के, हिन्दुओं के हों या पार्सियों के उसमें रुपया जमा करना नाजायज़ है, लेकिन जब सूदी कारोबार ही की वजह से रुपया जमा करने की छूट नहीं है तो उसी सूद की वजह से ग़ैर मुस्लिम बैंकों में भी रुपया जमा करने की छूट नहीं होना चाहिए, जैसाकि आला हज़रत फ़ाज़िले बरेलवी

से इंग्लिश गर्वनमैंट की निगरानी में क़ायम शुदा पंजाब-व-मद्रास के कृषि बैंकों के संबंध में सवाल किया गया था कि:

गर्वनमैंट की निगरानी में पंजाब-व-मद्रास के दिहात में कृषि बैंक खोले जाते हैं, कृषि बैंक का उद्देयश्य सूदखोरी नहीं होती, बल्कि सूद-ख़ोर महाजनों से संबंध तोड़ना होता है, सरकारी नाम इस बैंक का "अंजुमन इमदादे क़र्ज़ा'' है बनावट उसकी यह है कि गांव के लोग बतौर हिस्सादारी के दस रुपया सालाना फ़ी आदमी दस साल तक इस अपनी अंजुमन में जमा करते हैं और इस अंजुमन से ज़रूरत के मुताबिक क़र्ज़ भी लेते हैं, मगर क़र्ज़ लेने का हक़ सिर्फ हिस्सेदारों को है, ग़ैर हिस्सेदारों को क़र्ज़ हरगिज़ हरगिज़ नहीं दिया जाता, कर्जदार जो कुछ रक़म सूद इस बैंक को देगा वो रक़म रसद की हैसियत से उस कर्जदार के हिस्से में भी आएगी, गोया सूद देने वाला सूद लेने वाला भी है, इस अंजुमन के पास दस साल के बाद काफ़ी पूंजी जमा हो जाती है, तो सूद बहुत कम या बिल्कुल बंद कर दी जाती है, यह बैंक जायज़ है या नाजायज़?

तो आपने जवाब में जिन शब्दों का प्रयोग किया उसका तेवर मुलाहिज़ा फ़रमाएं:

हराम हराम हराम, क़तई यक़ीनी हराम, दस बरस तो बहुत है, सूद एक लम्हा, एक आन को हलाल नहीं हो सकता, अहकामे इलाहिया किसी की तरमीम से बदल नहीं सकते, अल्लाह फ़रमाता है:

واحل الله البيع وحرم الربوا

सही हदीस में है:

لعن رسول الله صلى الله عليه وسلم اكل الربوا و مؤكله و شاهديه و قال هم سواء.

यहां कि सूद देने वाला ही सूद लेने वाला भी है अर्थ यह कि डबल लानती है, जो बराहे शामते नफ़्स उसका इर्तिकाब करे और हराम न जाने वह फ़ासिक़-व-फ़ाजिर हैं। अल अयाज़ बिल्लाह।

(फतावा रिज़विया जिल्द: ७ पेज १०१)

मुजद्दिदे इस्लाम के इन फतवों से अगरचे साफ-साफ न सही, इशारे में ज़रूर मालूम हो रहा है कि सूदी कारोबार करने वाले बैंकों में रुपया जमा करना असली रूप में जायज़ नहीं है, चाहे यह बैंक इमदाद-ए-बाहमी के लिए मुसलमानों ने ख़ुद क़ायम कर रखा हो या यह बैंक काफ़िरों के हों हर हालत में सूदी कारोबार करने वालों के पास अपना रुपया जमा करना और उनको सूदी कारोबार में लगाने की इजाज़त देना जायज़ नहीं हो सकता। लेकिन अहम सवाल ये पैदा होता है कि मौजूदा ज़माने में बग़ैर बैंकों में रुपया जमा किए तिजारत करना बड़ा मुश्किल है, रूपयों का तबादला या लेन-देन बैंक के द्वारा होता है, तो अगर बैंकों में रुपया जमा करने की छूट न हो तो कारोबारी लोगों को काफ़ी दिक्कतों का सामना करना पड़ेगा, फिर अपने माल और अपने सामानों की हिफ़ाज़त अगर ख़ुद की जाये तो माल के इलावा जान का भी ख़तरा हो सकता है, इस सूरत-ए-हाल में बैंकों में रुपया जमा करना इस नीयत से नहीं कि सूदी कारोबार में मेरा भी सरमाया लगेगा बल्कि इस नीयत से कि मेरे सरमाए की हिफ़ाज़त होगी और मुझको व्यवसायिक सहूलतें हासिल होंगी जायज़ होना चाहिए, जैसा कि उपर्युक्त कारणों की वजह से बैंकों में रुपया जमा करने के जाइज होनें का फ़तवा मुफ़्तियाने किराम ने दिया है।

अजीब-व-ग़रीब सवाल

बैंकों में रुपया जमा करने का सवाल अजीब-व-ग़रीब मालूम होता है, शायद ही कोई शख़्स हो जो इस बात को सुन कर अचम्भा न हो कि बैंकों में रुपया जमा करना असली रूप में नाजायज़ है, इसलिए कि मौजूदा माहौल में तमाम कारोबार या व्यवसायिक लेन-देन का दार-व-

मदार बैंकों ही के ज़रीये है, फिर ये मसला उठाना कि उनमें रुपया जमा करना जायज़ है या नाजायज़, कुछ आश्चर्यजनक बात मालूम होती है, लेकिन हक़ीक़त यह है कि शरीयत इस्लामी सूद के मामले में जितनी हस्सास (संवेदनशील) है उसको देखते हुए यह बात आश्चर्यजनक नहीं है, बल्कि आश्चर्यजनक बात यह है कि लोगों के ज़हनों में ये सवाल क्यों नहीं उभरता, उसको एक उदाहरण से समझा जा सकता है कि अगर कुछ लोग एक ऐसे मकान में रहते हों जहां चारों तरफ़ बदबू फैली हुई हो और दुर्गंध से उस मकान के अंदर बाहर से आने वालों के लिए दाख़िल होना कठिन हो रहा है, लेकिन जो उस मकान में रहने वाले हैं जब इस बदबूदार माहौल के अभ्यस्त हो गए और यहां रहना उनकी तबीयत पर कुछ भी भारी नहीं पड़ता, अब अगर कोई दूसरा शख़्स जो साफ़ सुथरे माहौल का रहने वाला हो इन मकान वालों से यह कहे कि यह इमारत रिहाइश के काबिल नहीं है, इसमें तो इतनी बदबू फैल रही है कि दिमाग़ फटा जाता है, इसमें जानलेवा किटाणु पैदा हो गए हैं जो सेहत के लिए निहायत नुक़सानदह हैं, बल्कि मौत का कारण हो सकते हैं तो ऐसे घर वालों को ज़रूर ताज्जुब होगा और वह सोचने पर मजबूर होंगे कि ये शख़्स बेमतलब बात करता है या बढ़ा-चढ़ा कर बातें कहता है, बिना सबब इस मकान को ना क़ाबिले रिहायश बताता है, ठीक इसी तरह मौजूदा इक़तिसादी और आर्थिक दुनिया सूद के बदबूदार माहौल में रहती है, इसके जितने गगनचुंबक गंदगियों के केन्द्र और घूर बने हुए हैं जिनको वित्तीय संस्थान या बैंकों के नाम से प्रकट किया जाता है उनकी ग़लाज़तों और बदबुओं से सारा माहौल गंदगी से भर गया है, इसलिए जब कोई शख़्स इस्लाम के साफ़ सुथरे निज़ाम को पेश करना चाहेगा और उनको यह प्रबोधन देगा कि ये बैंक गंदगियों के केन्द्र हैं, तुमको अपना पाक और साफ़-सुथरा सरमाया बिना ज़रूरत यहां नहीं जमा करना चाहिए तो बजाय इसके कि ऐसे शुभचिंतक और हमदर्द की

बात सुनकर उस पर अमल करने की कोशिश की जाये उल्टे यह बात दुहराई जाएगी कि ये मौलाना हैं, नये विकास कार्यों के दुश्मन हैं, यह मुसलमानों को दकयानूसियत की तरफ़ ले जाना चाहते हैं, ये कट्टरवाद और नवजागरणवाद की बीमारी से पीड़ित हैं, अगर उनकी बात सुनकर इस पर अमल किया जाये तो इसका मतलब यह होगा कि ज़िंदगी के हंगामों से अलग-थलग होकर सिर्फ ज़ाहिद और संन्यासी बन कर ज़िंदगी गुज़ारनी चाहिए, इसलिए ख़बरदार ख़बरदार उनकी बातों की तरफ़ ध्यान न देना।

एक इल्मी लतीफ़ा

इस विषय पर एक आलमे दीन से गुफ़्तगु हुई जो ग़ैर मुक़ल्लिद या वहाबी देवबंदी नहीं थे बल्कि अल्हम्दुलिल्ला एक पक्के सुन्नी थे, शरई मसाइल से संबंधित अच्छी ख़ासी मालूमात रखते थे, तो उन्होंने फ़रमाया कि काफ़िरों का बैंक अगरचे बज़ाहिर सूदी कारोबार करता है लेकिन दरहक़ीक़त वह जो कुछ करता है अपने ख़्याल-व-अक़ीदे के मुताबिक़ जायज़ समझ कर करता है तो उनका बाहमी कारोबार चाहे सौ रुपये देकर एक हज़ार रुपये लें शरई नुक़्ता-ए-निगाह से सूद के दायरे से ख़ारिज है, फिर जब काफ़िरों के बैंक सूद के कार्य-क्षेत्र से बाहर हो गए तो उनमें रुपया जमा करना सूदी कारोबार में मदद नहीं है, जो गुनाह-ए-अज़ीम है और उन्होंने आगे बढ़कर ये भी फ़रमाया कि अगर कोई मुसलमान हिन्दुस्तान के काफ़िरों के बैंक से क़र्ज़ लेकर ज़ायद रक़म दे तो अगरचे नाजायज़ हराम है क्योंकि काफ़िरों की मदद है, लेकिन ये ज़ायद रक़म सूद नहीं है, ला-इलाहा इल-लल्लाह।

इस नाचीज़ को उनके इल्म-व-फ़ज़्ल पर कभी संदेह नहीं हुआ लेकिन उनकी इस दलील से बड़ी हैरानी हुई, मैंने उनको बताया कि इस सदी के मुजद्दिद इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरेलवी ने अपनी किताबों में खास तौर से फतावा रिज़विया में इस बात को साफ़-साफ़ कहा है कि

कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन भी शरीअत के आदेशों के मुकल्लफ़ हैं, जैसा कि इमाम फ़रमाते हैं:

यहां तक कि विश्वसनीय मतानुसार कुफ़्फ़ार ख़ुद भी मुख़ातब बिलफ़ुरुअ़ हैं,

حتی العبادات اداء واعتقادا فیعذبون علی ترک الاداء ایضاً

لقوله تعالی: قالوا: لم نک من المصلین. [فتاوی رضویہ ج۷ص۸۹]

(फतावा रिज़विया जिल्द: ७ पेज: ८९)

इसलिए उनके दरमियान भी सूदी कारोबार पाया जायेगा, फिर सबसे अहम बात यह है कि तारीख़ी साक्ष से साबित है कि हुज़ूर ﷺ ने काफ़िरों को भी सूद के हराम होने का मुख़ातब बताया, बाक़ी रही बात कि कुफ़्फ़ार-व-मुशरिकीन से क़र्ज़ लेकर या बैंकों से ज़ायद अदाइगी की शर्त के साथ क़र्ज़ लेकर उनको ज़ाइय देना फ़ाज़िले बरेलवी के लिखने के मुताबिक़ यक़ीनन सूद हैं, मुझको बड़ी सख़्त हैरानी इस मसले पर हुई कि काफ़िरों से क़र्ज़ लेकर ज़ायद रक़म देना सूद की वजह से हराम नहीं है, बल्कि हर्बी काफ़िर की मदद की वजह से हराम है, इस सिलसिले में आला हज़रत के नीचे के फतावा अगर निगाह में रहें तो किसी किस्म की ग़लतफ़हमी की संभावना नहीं रहेगी।

सवाल: क्या फ़रमाते हैं उलेमा ए दीन इस मसला में कि क्या सरज़मीने हिन्दुस्तान में बहालत मौजूदा मुसलमानों को अपनी क़ौमी हालत संवारने की ग़रज़ से सूद का लेन-देन जायज़ है या नहीं?

जवाब:सूद देने से क़ौमी हालत सँवरती तो लाखों मुसलमान बनियों को सूद देते हैं और अपनी जायदाद को तबाह करते हैं, हज़ारों का माल दो ढाई सौ में बह जाता है, क्या इसी को हालत सँवारना कहते हैं? (फतावा रिज़विया ज ७ पे ९८)

सवाल :हिंदू से नक़द क़र्ज़ सूदी मुसलमान को लेना जायज़ है या नहीं?

जवाब:सूद जिस तरह लेना हराम है यूँही देना हराम है, जब तक सच्ची हक़ीक़ी मजबूरी ना हो।(फतावा रिज़विया, ज ७,स ९३)

मुजद्दिदे इस्लाम के इन फतावा से साबित हुआ कि उसे ज़ायद रक़म देना बतौर सूद भी हराम है, न सिर्फ बतौर मदद, ग़रज़ मेरे नज़दीक काफ़िरों के बैंक हों या मुसलमानों के उनमें अपने साफ-सुथरे माल को जमा करके उनके सूदी कारोबार की गंदगियों में लिपटी रक़म हासिल करना उसी वक़्त जायज़ होगा जब कि जमा करने की ज़रूरत हो और ज़रूरत के बग़ैर बैंकों में रुपया जमा करना असली तौर पर जायज़ नहीं

मुझे उन उलमा-ए-किराम के फतवों पर मुकम्मल भरोसा है जो बैंकों में रुपया जमा करने के जायज़ होने का फ़तवा देते हैं क्योंकि मैं इस बात को महसूस करता हूँ कि एक पर्याप्त उज्र (मजबूरी) की बिना पर फ़तवा है।

बैंकों की ज़ायद रक़म का हुक्म

जब यह बात साबित हो गई कि हिन्दुस्तानी बैंकों में रुपया जमा करना पर्याप्त मजबूरी की बिना पर जायज़ है तो अब सवाल आता है कि हिन्दुस्तान के जितने बैंक हैं उन पर काफ़िरों का क़ब्ज़ा है या हकूमत-ए-हिन्द की मिल्कियत हैं और इसी के ज़ेरे निगरानी अपना सूदी कारोबार जारी रखते हैं, ऐसे बैंकों में रुपया जमा करके ज़ायद रक़म लेना जायज़ है या नाजायज़, यहां यह बहस कि हिन्दुस्तान दार-उल-हरब है या दार उल-इस्लाम बेफ़ाइदा है, क्योंकि सूद का हराम होना जगह की सीमाओं में सीमित नहीं है, सूद जैसे दार उल-इस्लाम में हराम है इसी तरह दार-उल-हरब में भी हराम है, अगरचे हिन्दुस्तान के कुछ अहले इल्म को इस बारे में बड़ा संदेह रहा और उन्होंने यह कहा कि अगर हिन्दुस्तान को दार-उल-इस्लाम मान लिया जाये तो यहाँ के काफ़िरों या बैंकों से ज़ायद रक़म लेना जायज़ नहीं होगा क्योंकि दार-उल-इस्लाम में सूदी कारोबार मना है लेकिन अगर हिन्दुस्तान को दार-उल-हरब मान

लिया जाये तो यहां के काफ़िरों से ज़ायद रक़म लेना इसलिए जायज़ होगा कि ये सूद के दायरे में दाख़िल नहीं है।

मुजद्दिदे इस्लाम जैसे दूसरे शरई अहकाम में अपनी शोध को आख़िरी मंज़िल तक पहुँचा कर सत्य को स्पष्ट करके अपने प्रतिद्वंदी को लाजवाब कर देते हैं इसी तरह इस मसला में भी उन्होंने अपने विभिन्न फतवों में जो प्रयाप्त बहस की है और उच्च दर्जे का शोध पेश किया है उसमें न सिर्फ यह कि वह बाज़ी ले गए बल्कि सच्ची बात तो यह है कि अगर इमानदारी से ग़ौर किया जाये या पक्षपात और तंगनज़री से अपने को दूर रखा जाये तो उन्हीं का शोध विश्वासपात्र है, इसलिए उलमा-ए-अहले सुन्नत के लिए हिन्दुस्तानी बैंकों से ज़ायद रक़म लेने के बारे में ज़्यादा बहस और विचार की ज़रूरत नहीं है, बल्कि मुजद्दिदे इस्लाम की तहक़ीक़ पर पूरा भरोसा करना चाहिए।

इमाम अहमद रज़ा के उन फतवों को जो बैंकों के बारे में संक्षिप्त या विस्तार से हैं उनको जमा करने का सौभाग्य प्राप्त करना चाहता हूँ और मैं उनके फतवों को दो हिस्सों में विभाजित कर रहा हूँ:

1-ऐसे फतवे जिनसे बज़ाहिर मालूम होता है कि भारत के बैंकों और ग़ैर मुस्लिमों से ज़ायद रक़म लेना सूद के गिरोह में दाख़िल है हालांकि हकीकत उसके ख़िलाफ़ है।

2- ऐसे फतवे जिनसे साफ-साफ मालूम होता है कि ग़ैर मुस्लिमों या बैंकों से ज़ायद रक़म लेना सूद के दायरे में दाख़िल नहीं है।

पहली किस्म के फतवे

किस्मे अव्वल के फतवे निम्नानुसार हैं

सवाल क्या फ़रमाते हैं उलेमाए दीन इस मसले में कि हिन्दुओं से सूद लेना दरुस्त है या नहीं?

जवाब हिंदू मुसलमान से किसी से दरुस्त नहीं।

सवाल क्या फ़रमाते हैं उलेमाए दीन इस मसला में कि जो रुपये कुफ़्फ़ार के खज़ाने में जमा कर दिए जाएं उसका सूद लेना जायज़ है या नहीं?

जवाब सूद लेना बिल्कुल हराम है, अल्लाह ने मुतलकन फ़रमाया:

واحل الله البيع وحرم الربٰو

अल्लाह ने बैअ हलाल की और हराम किया सूद,

इसमें रब ने तख़सीस ना फ़रमाई कि फ़लां से सूद लेना हराम है और फ़लां से सूद लेना हलाल है बल्कि मुतलक़न हराम फ़रमाया, काफ़िर से हो चाहे मुसलमान से, हाँ अपना किसी पर आता हो या और कोई माल जाइज़ हीला ए शरइया से हासिल करना दूसरी बात है।

(फतावा रिज़विया जिल्द: ७ पेज: ९१ मकतबा रिज़विया कराची पाकिस्तान)

सवाल बैंक से सूद लेना जायज़ है या नाजायज़?

जवाब सूद लेना मुतलक़न हराम है, अल्लाह तआला ने फरमाया:

وَحَرَّمَ الرِّبٰو

(फतावा रिज़विया जिल्द:७ पेज: ९१)

सवाल:किया फ़रमाते हैं उलेमा ए दीन इस मसले में कि एक शख़्स कहता है यहां के हुनूद से सूद लेना जायज़ है, मुसलमानों से नहीं, ये क़ौल कैसा है?

जवाब: सूद लेना न मुसलमान से जायज़ है न हिंदू से, अल्लाह तआला के फरमान के मुतलक़ होने की वजह से:

وحرم الربٰو، اما مايؤخذ من الحربى فى دارالحرب فمال مباح ليس بربا.

(फतावा रिज़विया जिल्द: ७ पेज: ८६)

इन जवाबों से प्रथम दृष्टि में यही मालूम होता है कि हज़रत मुजद्दिदे इस्लाम का मसलक यही है कि भारत के ग़ैर मुस्लिमों के यहां और उनके बैंकों में रुपया जमा करके ज़ायद रक़म लेना सूद है जो नाजायज़-व-हराम है मगर ये सब फतवे संक्षिप्त और मुजमल हैं।

दूसरी किस्म के फतवे

अब आप एक नज़र उनके दूसरी किस्म के फतवों पर डाल लें जो विस्तृत और तर्कसंगत हैं, जिनसे स्पष्ट रूप से यह मालूम होता है कि ग़ैर मुस्लिमों और उनके बैंकों से इज़ाफ़ा की जो रक़म ली जाती है वह दर-हक़ीक़त माल मुबाह है सूद नहीं है।

दूसरी किस्म के फतवे निम्नानुसार हैं

सवाल डाकख़ाना सरकारी के सेविंग बैंक में दूसरे अंग्रेज़ी व्यवसायिक बैंक में ज़ैद ने कुछ रुपया दाख़िल किया जिस पर निशचित दर पर गर्वनमैंट ने या व्यापारी अंग्रेज़ ने मुनाफ़ा अदा किया तो जमा करने वाला शख़्स मुताबिक़ अहकामे शरीयत इस मुनाफ़ा को लेने का हक़दार है या नहीं।

जवाब सूद मुतलक़न) नितान्त (हराम है, मगर जिसके यहां रुपया जमा किया अगर कोई मुतालबा शरई तौर पर आता था और वह और तौर से न मिल सकता था) यानी दूसरे तरीक़े से ना मिल सकता था और इस नाम से वसूल हो जाये तो अपने हक़ की नीयत से क़दरे हक़ लेने का इस्तिहक़ाक़ है और अगर कुछ न आता था मगर कोई माल मुबाह बिला ग़दर) बिना धोखा (व बिला इर्तिकाब-ए-जुर्म व रजामंदी हाथ आता हो तो ब नीयत मुबाह उसे लेने वाले को मुबाह है अगरचे देने वाला उसे किसी नाम से ताबीर करे।

(फतावा रिज़विया जिल्द:७, पेज: ९७)

यहां कोई कह सकता है कि इमाम अहमद रज़ा का यह फ़तवा अंग्रेज़ों की हुकूमत में अंग्रेज़ों और उनके बैंकों से संबंधित था हिन्दुस्तान के हिंदुओं के बारे में नहीं था इसलिए इन ग़ैर मुस्लिमों के

बारे में क्या हुक्म है इस फ़तवा की रोशनी में इसकी व्याख्या नहीं हो रही है, तो उसे नीचे का फ़तवा अध्यन करना चाहिए।

सवाल क्या फ़रमाते हैं उलेमाए दीन-व-मुफ़्तियाने शरअ मतीन इस मसले में कि एक शख़्स मुसलमान अहले सुन्नत-व-जमात पक्का हनफ़ी है, अगर ये शख़्स मज़कूर कुफ़्फ़ार मिसल नसारा-व-हुनूद-व-राफ़िज़ी-व-ख़ारिजी से सूद लेवे और कुफ़्फ़ार मज़कूर की रज़ा से लेवे, बतौर तिजारत रुपया कमाने को, नीज़ इस मुसलमान सूद लेने वाले की नीयत यह हो कि किसी वक़्त में किसी मुसलमान से सूद न लिया जावे तो इस सूरत में इस मुसलमान को कुफ़्फ़ार मज़कूर से सूद लेना जायज़ है या नाजायज़? जो हुक्म शरअ शरीफ़ हो बिला तावील-व-बिला ख़ौफ़ मलामत उलमा-ए-ख़ास-व-आम इरसाल फ़रमाया जावे (भेजा जाये)

जवाब अल्लाह ने मुतलक़न फ़रमाया: و حرم الربٰو, और अल्लाह ने सूद हराम किया, इसमें कोई तख़सीस मुसलमान, काफ़िर, सुन्नी, बद मज़हब किसी की नहीं है, सूद लेना किसी से हलाल नहीं, जो हलाल है वह सूद नहीं है और जो सूद है वो हलाल नहीं, काफ़िर ग़ैर ज़िम्मी का माल जो बिला ग़दर हासिल हो वह माल मुबाह समझ कर लेना हलाल है, सूद जान कर लेना हराम, गुनाह का इरादा ख़ुद गुनाह है, मसलन काफ़िर से कोई माल सौ रुपये का ख़रीदा और क़ीमत दबा ली या धोका देकर खोटे दाम दिए यह नाजायज़ है कि ख़िलाफ़ मुआहिदा हुआ, अल्लाह तआला फ़रमाता है:

" يٰايها الذين اٰمنوا اوفوا بالعقود"

(सूरा माइदा, आयत १, पारा ६)

और अगर चांदी का दो सौ रुपया भर माल सौ रुपये का मोल लिया और ये समझा कि सौ रुपये ही के बदले सौ रुपये हो गए, बाक़ी काफ़िर का माल बिला ग़दर उसकी मर्ज़ी से मिलता है तो जायज़ जब कि वो काफ़िर ज़िम्मी या मुस्तामिन ना हो। (फ़तावा रिज़विया जिल्द: ७ पेज: १०१)

इस फ़तवे से यह मालूम हुआ कि अंग्रेज़ ही का माल मुबाह नहीं है बल्कि हर काफ़िर चाहे अंग्रेज़ है या उसके अलावा कोई दूसरा काफ़िर, सबका माल मुबाह है, शर्त ये है कि मुस्तामिन या ज़िम्मी न हो, और ग़दर से माल न ले रहा हो।

सवाल:सूद लेना मुसलमान को किसी क़ौम से जायज़ है या नहीं और सूद किस-किस किस्म से होता है, मुशर्रेह (विस्तृत) बयान फ़रमाया जावे।

किसी बैंक में रुपया जमा करके उससे सूद वसूल करना बमूजब उसकी शरह के जायज़ है या नहीं या किसी अंजुमन का रुपया डाकखाने में जमा करके उससे सूद ले सकता है या नहीं या कोई तिजारत इस तरह की करे कि जो इस क़दर रुपया जमा करे (यानी जो इतना रुपया जमा करे मसलन हज़ार दो हज़ार)उसको इतने सैकड़े का सूद देंगे नुक़्सान का वो शरीक नहीं और उसको नुक़्सान से कुछ मतलब नहीं (यानी रुपया देने वाला रुपया देकर आज़ाद हो जाये और उसको नुक़्सान से कुछ मतलब न रहे बल्कि फ़ीसद वह सूद लेता रहे और रुपया जमा करने वाला सूद जान कर न ले और नुक़्सान भी न दे तो हलाल है कि हराम या किसी दूकानदार को बमूजब नफ़ा के देवे , नुक़्सान का शरीक न हो वो नफ़ा हलाल है या नहीं?

जवाब सूद लेना मुतलक़न हराम है, मुसलमान से हो या काफ़िर से, बैंक से हो या ताजिर से, जितनी सूरतें सवाल में बयान की हैं सब नाजायज़ हैं, क़र्ज़ देकर इस पर कुछ नफ़ा बढ़ा लेना सूद है, या एक चीज़ को इसकी जिन्स के बदले उधार बेचना (मसलन गेहूँ को गेहूँ के बदले उधार बेचना अगरचे माप में बराबर हों) या दो चीज़ें कि दोनों तौल से बिकती हूँ।(मसलन लोहा, ताँबा) या दोनों नाप से बिकती हूँ मसलन गेहूँ और जौ, उनमें से एक को दूसरे से उधार बदलना या नाप तौल की चीज़ को उसी की जिन्स से कमी बेशी के साथ बेचना ये सब सूरतें सूद की हैं

और जो शरीअत में सूद है उसमें ये नीयत कर लेना कि सूद नहीं लेता हूँ कुछ और लेता हूँ सिर्फ जहालत है, हाँ वहां ये नीयत काम दे सकती है जो वाकई में सूद न हो अगरचे देने वाला उसे सूद समझ कर देवे, मसलन किसी काफ़िर के पास या कोठी या बैंक में (बशर्ते कि उसमें कोई मुसलमान शरीक न हो रुपया जमा कर दिया और उस पर जो नफ़ा काफ़िर ने अपने दस्तूर के मुताबिक़ दिया उसे अपने रुपये का नफ़ा और सूद ख़्याल करके न लिया बल्कि ये समझ कर के लिया कि ये माल मुबाह है ब रज़ा ए मालिक मिलता है तो इसमें हर्ज नहीं।

(फतावा रिज़विया जिल्द: ७ पेज: १०२-१०३)

इस फ़तवे से निम्न लिखित बातें साबित हुईं:

क:जो चीज़ सूद के दायरे में आती हो उसके बारे में किसी की नीयत कैसी ही हो उसके लेने से सूद के गुनाह से नहीं बच सकता।

ख: जो चीज़ सूद न हो अगर कोई शख़्स सूद के लफ़्ज़ से ताबीर कर के दे तो वास्तव में सूद न होगा लेकिन अगर लेने वाला सूद समझ कर ले तो वो ज़रूर गुनहगार होगा।

ग: काफ़िर का माल चाहे उसके बैंक का हो अगर कोई मुसलमान माल मुबाह समझ कर ले-ले तो इसमें कोई हर्ज नहीं। इन तफ़सीली दफ़आत की रोशनी में यह बात स्पष्ट हो गई कि हर काफ़िर हर्बी का यह हुक्म है, उसका माल मुबाह समझ कर लेना जायज़ है, इसमें हिंदू या अंग्रेज़ की कोई क़ैद नहीं।

सवाल:क्या फ़रमाते हैं उलेमाए दीन मसला ज़ेल (निम्न) में

- राफ़िज़ी बोहरे काफ़िर हैं या मुर्तद, बहर दो सूरत अगर मुसलमान उनके साथ या हिंदू काफ़िर के साथ इस तरह का मामला करे (मसलन हज़ार या पाँच सौ रुपये तिजारत के लिए राफ़िज़ी को दे इस शर्त पर कि (गुड़ और चीनी में नुक़्सान की सूरत नहीं हुआ करती हाँ कभी- कभार) मैं तुझसे डेढ़ या दो सौ रुपये फ़ीसद

माहवार के एतबार से नफ़ा नुक़्सान का औसत निकाल कर तेरी दुकान से नक़द या सामान ख़ुर्दनी लेता रहूँगा, और ये मज़मून बतौर शर्त काग़ज़ पर लिखवा कर जमाने तक इसी तरह बाहमी मुआमला जारी रहे और मूल धन महफ़ूज़ समझ कर ब एवज़ नफ़ा हसबे शर्त बाहमी अश्याए ख़ुर्दनी-व-पोशीदनी वह लेता रहे और माबाकी नक़द ले तो जायज़ है या नाजायज़ और नाजायज़ होगा तो सूद होगा या क्या ?

- इसी तरह काफ़िर को माल दो महीने के वादे पर क़र्ज़ फ़रोख़त करे और उसके हाथ से अपने भी खाते में लिखवा ले तो रुपया अदा करते वक्त फ़ीसद आठ आने या एक रुपया माहवार मूल धन से ज़ायद अदा करूँगा।

जवाब:बौहरे राफ़िज़ी मुर्तद हैं और हर मुर्तद काफ़िर है, बल्कि काफ़िरों की बदतर किस्म, यहां के हिंदू वगैरा जितने कुफ़्फ़ार हैं उनमें न कोई जिम्मी है कि सलतनत इस्लाम में इस्लाम का फरमां बरदार और जिज़िया अदा करने वाला होकर रहे, न मुस्तामिन है कि बादशाह इस्लाम से कुछ दिनों के लिए अमान लेकर दारुल-इस्लाम में आए और जो काफ़िर न ज़िम्मी हो ना मुस्तामिन हो सिवाए धोका और वादा खिलाफी के कि वह हर हाल में हर काफ़िर से हराम है, उसकी रज़ा से उसका माल जिस तरह मिले जिस अक़्द के नाम से हो मुसलमान के लिए हलाल है।

आगे चल कर चेताते हुए इरशाद फ़रमाते हैं :अलबत्ता इन तमाम सूरतों में यह लिहाज़ रहे कि वह ज़ी इज़्ज़त मुत्तक़ी आदमी जिसे जाहिल अवाम अपनी न फ़हमी के सबब ऐसी सूरतों में मआज़ अल्लाह सूदखोर मशहूर करे इससे बचना मुनासिब है कि जैसे बुरे काम से बचना है बुरे नाम से बचना है।

इस विस्तृत फ़तवे ने इस हक़ीक़त को संपष्ट कर दिया कि काफ़िर हर्बी से ज़ायद माल मिल रहा हो वह भी उसकी रज़ा से जिसमें किसी मुआहिदे की ख़िलाफ़वरज़ी न हो वह सूद नहीं होगा लेकिन यह भी चेतावनी दे दी गयी कि अगर इस किस्म की रक़म लेने से किसी की इज़्ज़त-व-वक़ार पर धब्बा आए या उसके संबंध में यह मशहूर हो जाए कि वह सूद-ख़ोर है तो उसको बचना चाहिए यानी इस माले मुबाह को अपनी ज़रूरत के लिए नहीं लेना चाहिए बल्कि लेकर ग़रीबों में तक़सीम कर देना चाहिए।

सवाल क्या फ़रमाते हैं फ़ुज़ला ए किराम, क्या हिन्दुस्तान में हर्बियों से सूद लेना जायज़ है, चाहे वह हिंदू हों या नसरानी या उसके इलावा बशर्ते कि ज़िम्मी न हों।

जवाब अल्हम्दुलिल्ला । हिन्दुस्तान दारुल-इस्लाम है, क्योंकि बहुत से शआ़रे इस्लाम(इस्लामी निशानिया) बाक़ी हैं और जब तक उनका कुछ हिस्सा बाक़ी रहेगा ये दारुल-इस्लाम ही रहेगा, इसलिए कि इस्लाम ग़ालिब रहता है इसको मग़लूब नहीं किया जा सकता, रहा सूद लेने का मुआमला तो वाज़िह है कि वो मुतलक़न नाजायज़ है, क्योंकि आयात-व-अहादीस तहरीमे रिबा मुतलक़ हैं उनमें ये क़ैद नहीं लगी है कि मुसलमान से हराम है या काफ़िर से नहीं)और फ़ोक़हा ए किराम ने जो ये ज़िक्र किया है कि दारुल-हरब में ज़्यादा लेना जायज़ है तो इसका सूद से कोई ताल्लुक़ नहीं है, इसलिए कि रिबा सिर्फ़ माले मासूम में होता है और हर्बी का माल ग़ैर मासूम है, यहां तक कि जो शख़्स हर्बियों में से मुसलमान हो कर वहीं रह गया और वह दारुल-इस्लाम में हिजरत करके नहीं आया तो उसके माल का लेना माले मुबाह का लेना है न कि सूद का लेना है, इसी वजह से अर्बाबे तहक़ीक़ (विद्वान) फ़रमाते हैं कि दारुल-हरब में रिबा नहीं है वह ये नहीं कहते हैं कि दारुल-हरब में रिबा जायज़ है, यूँही वह ये कहते हैं कि आक़ा और उसके ग़ुलाम के दरमयान

सूद नहीं है और वह ये नहीं कहते कि अपने ग़ुलाम से आक़ा के लिए सूद लेना जायज़ है, सूद के नाम का इतलाक़ अगर इस पर किया गया है तो ज़ाहिर के लिहाज़ से किया गया है, (और वाक़िया और हक़ीक़त के एतबार से नहीं किया गया है)और शरई अहकाम हक़ायक़ पर मबनी (कायम) होते हैं। ये हुक्म हर हर्बी ग़ैर मुस्तामिन के लिए आम है, अगरचे वो दारुल-इस्लाम में हो कि इस का मदार"अदम इस्मत" है और वो सबको शामिल है, हमारे लिए सिर्फ ग़दर की वजह से हराम होगा, फिर जब तुम इससे आगे बढ़ गए और तुमने इससे ले लिया, किसी अक़द के नाम पर ले लिया तो तुमने माल-ए-मुबाह लिया, इस सिलसिले में तुम्हारे ऊपर कोई हर्ज-व-गुनाह नहीं है, जैसा कि हज़रत अबूबकर ने ग़लब-ए-रूम के बारे में कुफ़्फ़ार मक्का से बाज़ी लगाई थी और सरकार की इजाज़त से उनका माल ले लिया था, ये माल लेना उनके लिए जायज़ था कि उनका माल ग़ैर मासूम था, वर्ना यक़ीनन ये हराम जुआ होता, इस बाब में ये क़ायदा-ए-कुल्लिया(व्यापक नियम) है, जिसने उसका एहाता कर लिया तो इस पर दूसरे जुज़ईआत का इस्तिख़राज(निकालना)मुश्किल न होगा , हमने अपने फतावा में इसको तफ़सीलन बयान कर दिया है, अलबत्ता यहां दो नुक्ते हैं, जिन पर आगाही हासिल करना है।

1- मौज़ा तोहमत (लांछन की जगह) में उन लोगों का बचना ज़रूरी है जो खुल्लम खुल्ला अच्छी नीयत से ये ज़्यादती लेना चाहते हों, इसलिए कि इसका लेना हलाल ज़रूर है लेकिन अवाम मुत्तहम करेंगे (इल्ज़ाम लगाएगें) कि ये सूदखोर है लिहाजा जो लोग दीनी हैसियत से इज़्ज़तदार हैं और मक़ामें बुलंद रखते हों उनको इस से इजतिनाब (बचना) ज़रूरी है।

2- बाअज़ वो सूरतें जो मुबाह होती हैं लेकिन क़ानून की निगाह में वो जुर्म होती हैं तो उनके इर्तिकाब से अपने को अज़ीयत (तकलीफ) में

पेश करना है और ज़लील करना है ऐसी सूरतों से अहितराज़ (बचना) लाज़िम है, इनके इलावा मुबाह और ख़ुशगुवार हैं जिनमें कोई रुकावट और तंगी नहीं है, अलबत्ता जिसने काफ़िरों से ज़ायद रक़्म ली और उसकी नीयत सूद लेने की थी तो वो क़सद मासियत (गुनाह का इरादा करने) की वजह से गुनहगार होगा , सरकार ने इरशाद फ़रमाया:

انما الاعمال بالنيات و لكل امرئ مانوى

मसलन फ़ोक़हा ए किराम ने इस मसले में सराहत की है कि अगर किसी शख़्स ने ताक़ में रखे हुए कपड़े की तरफ़ क़सदन दूर से इस गुमान से देखा कि वो अजनबी औरत है तो ऐसा शख़्स इस क़सद की वजह से गुनहगार होगा, अगरचे फ़ी नफ़सिही (हकीकत में) कपड़े की तरफ़ देखना बिलकुल मुबाह है।

(फतावा रिज़विया जिल्द:७, पेज: ११४-११५)

इस विस्तृत फ़तवे से कुछ अहम बिन्दू सामने आए:

- हर्बी से ज़ायद रक़्म लेना अगरचे सूद नहीं है फिर भी अगर कोई शख़्स सूद से उल्लेखित करे और यह कहे कि काफ़िर से सूद लेना जायज़ है या नाजायज़? तो क़ानूनी और शरई अलफ़ाज़ में यही जवाब दिया जाएगा कि किसी काफ़िर से सूद लेना जायज़ नहीं है, अलफ़ाज़े ताबीर के फ़र्क़ से फ़तवे के क़ानूनी अलफ़ाज़ में फर्क पैदा होना लाज़िमी है।
- जो लोग समाज-व-सोसाइटी में दीनी हैसियत से उच्च स्थान पर विराजमान हों और उनको मान-सम्मान का उच्च स्थान प्राप्त हो और उनके व्यक्तित्व पर मुसलमानों को पूरा भरोसा हो तो उनको ख़्वाह-मख़ाह मुबाह काम पर अमल करके अपने मान-सम्मान को चोटिल नहीं करना चाहिए, और न अपने को निंदित करना चाहिए, जबकि उस मुबाह काम को अपनी जहालत और अज्ञानता के कारण चौपाये भांति अवाम बुरे शब्दों से प्रकट करते हों।

- अगर कोई काम हकीकत में मुबाह हो मगर उस मुबाह को हराम समझ कर उस पर अमल किया जाये तो ऐसी सूरत में गुनाह हो जाएगा।
- कुछ चीज़ें शरीअत में मुबाह होती हैं लेकिन मुल्की क़ानून की निगाह में वो जुर्म क़रार पाती हैं तो उनको करने से बचना ज़रूरी है, मसलन ग़ैर मुल्क से कपड़ा या और कोई सामान लाना कस्टम के क़ानून का उल्लंघन है तो इससे बचना आवश्यक है।

इमाम अहमद रज़ा के फतवों में कामिल तवाफ़ुक (पूर्ण सामंजस्य)

यह हैं महत्तवपूर्ण बिन्दू जो फ़ाज़िले बरेलवी जैसी अज़ीम शख़्सियत की निगाह में रहे और यहीं से यह पेचीदगी भी हल हो गई कि आपके कुछ फतवों में जो यह मौजूद है कि बैंक से सूद लेना हराम है, या आपके इर्शादाते आलीया में जो यह पाया जाता है कि हिंदुओं से सूद लेना हराम है, वह इस नुक्ते के पेश-ए-नज़र था कि एक मुबाह काम को हराम जानकर कर लेना चूँकि नाजायज़ था और सवाल पूछने वाले ने इसको सूद के लफ़्ज़ से ताबीर किया था इस लिए आप ने अपनी पहली किस्म के फतवों में इसको हराम बताया था और आपका यह इरशाद अपनी जगह ठीक था और जब आप से यह पूछा गया कि काफ़िरों को क़र्ज़ देकर उनसे ज़ायद रक़म लेना सूद है कि नहीं ?या बैंकों से ज़ायद रक़म लेना सूद के ज़ुमरे में आता है या नहीं ?तो आपने दूसरी किस्म के फतावों में इस बात को खोल कर बताया कि काफ़िरों का माल लेना चूँकि मुबाह हुआ करता है जब कि वह ज़िम्मी या मुस्तामिन न हों इसलिए उसके लेने में कोई शरई बुराई नहीं, बशर्ते कि अपनी इज़्ज़त-व-आबरू महफ़ूज़ रहे, और उसकी मर्जी़ से ले रहा हो, उससे कोई धोखा-धड़ी या विश्वासघात न हो रहा हो, क्योंकि ये माल सूद नहीं है, जिसकी निंदा इस्लामी शरीयत में बहुत उच्च स्तर पर हुई है,

और जिसकी बुराइयों का बयान निहायत असरदार और प्रभावशाली शैली में हुआ है, यहीं से यह बिन्दू भी स्पष्ट हो गया कि जो जायज़ होगा वह सूद नहीं होगा और जो सूद होगा वह जायज़ नही होगा।

इससे मालूम हुआ कि आपके दोनों किस्म के फतवों में पूर्ण सामंजस्य एवं सहमति पायी जाती है और उनमें किसी तरह का विराधाभास या टकराव नहीं , गोया इमाम अहमद रज़ा दारुल इफ़्ता के मुफ़्तियों को चेतावनी देना चाहते हैं कि अगर उनसे कोई दरयाफ़्त करे कि हिन्दुओं से सूद लेना जायज़ है या नाजायज़, बैंकों से सूद लेना जायज़ है या नहीं ?तो उनके फतावा के अलफ़ाज़ यही होने चाहिऐं कि सूद लेना किसी से जायज़ नहीं है अगरचे काफ़िर हर्बी का माल मुबाह होने की वजह से सूद के ज़ुमरे में दाख़िल नही है।

इन अहम बिन्दुओं की तरफ़ चूँकि आम तौर पर लोगों का ज़हन नहीं जाता, इसलिए जब वह इमाम के फ़तवे का अध्ययन करते हैं तो ज़हनी कशमकश में मुबतला हो कर यह कहने लगते हैं कि यह बात बड़ी आश्चर्यजनक है कि एक तरफ़ तो यह फ़तवा है कि हिन्दुओं और ग़ैर मुस्लिमों का माल मुबाह है(उपरोक्त शर्तों के साथ)और दूसरी जानिब जब यह पूछा जाता है कि सूद लेना जायज़ है या नाजायज़ ?तो जवाब ये मिलता है कि सूद लेना किसी से जायज़ नहीं है, यहां तक कि हिन्दुओं से भी जायज़ नहीं है।

हालांकि यह सोचना चाहिए था कि जब लोग सीधे सीधे सूद के जायज़ होने और जायज़ न होने का मसला लाते हैं तो कौन सा फ़कीह है जो यह कहेगा कि सूद जायज़ है, हर मुहतात फ़क़ीह फौरन यही इरशाद फ़रमाएगा कि सूद जायज़ नहीं है, और अगर कभी किसी के कलाम में इस किस्म के अलफ़ाज़ पाए जाएं कि सूद जायज़ है बशर्ते कि काफ़िर हर्बी से लिया जाये तो यह सिर्फ जायज़ करना होगा, जो न सिर्फ एहतियात के ख़िलाफ़ होगा बल्कि सही शरई अलफ़ाज़ के इस्तेमाल के

ख़िलाफ़ होगा, फिर फ़ाज़िले बरेलवी जैसे अज़ीम मर्तबें वाले फ़क़ीह फ़क़ीद-उल-मिसाल से यह कैसे मुम्किन था कि हकीकत लिखने वाले उनके क़लम से ग़ैरक़ानूनी अलफ़ाज़ निकलें, वहां तो तहक़ीक़ात का अंबार लगाया जाता है, बड़े बड़े फुक़हा की बारगाह में अजज़-व-नयाज़मंदी के बावजूद उनके तसामोंहात पर क़लम की जौलानी दिखाई जाती है, इसलिए नामुमकिन था कि ख़ुद उन्हीं के क़लम से इस किस्म का तसामोंह ज़ाहिर होता।

अब इन फतवों की रोशनी में ये बात जाहिर होकर सामने आ गई कि हिन्दुस्तानी काफ़िरों और उनके बैंकों में रुपया जमा करके ज़ायद रक़म उनकी रज़ा से लेना बशर्ते कि किसी समझौते का उल्लंघन न हो रही हो, जायज़-व-मुबाह है।

लेकिन इस मौक़ा पर यह बात सब को मालूम होनी चाहिए कि यह सिर्फ़ जवाज़-व-इबाहत का दर्जा है, इसका मतलब हरगिज़ यह नहीं है कि ऐसे धन लेकर अपने खर्च में लाना अफ़ज़ल-व-मुस्तहसन है, बल्कि बार-बार फ़ाज़िले बरेलवी अपने विभिन्न फतवों में यह चेतावनी देते हैं कि यह माल लिया जाये, मगर अपने निजी काम में ख़र्च न किया जाये, बल्कि उसको ग़रीबों, यतीमों, बे-कसों, बे आसराओं के ऊपर ख़र्च करना ज़्यादा बेहतर है जैसा कि फरमाते हैं:

सूद लेना मुतलक़न हराम है, मुसलमान से या काफ़िर से, हाँ अगर डाकखाने में ये जमा करे और डाकख़ाना जो कुछ इस पर ज़ायद दे बल्कि यूं कि एक माले मुबाह बरजाए मालिक ग़ैर मुस्लिम बिला ग़दर मिलता है तो ले लेना जायज़ है, और फुक्राए मुस्लिमीन पर उसका सर्फ करना औला(बेहतर)है। (मक्तूबाते इमाम अहमद रज़ा ख़ां बरेलवी पेज: २५)

एक दूसरे फ़तवे में इमाम अहमद रज़ा तहरीर फ़रमाते हैं कि

ऐसा अक़्द (लेन-देन) शरअ़न ज़रूर नाजायज़ है, लेकिन अगर वो मुराऊ काफ़िर है जैसा कि यही ज़ाहिर है तो ये रुपया कि बिला ग़दर

उसको मिला वापिस देना ज़रूरी नहीं है, अलबत्ता बेहतर है कि फ़क़ीर मुसलमान पर तसद्दुक़ (सदक़ा) करे। (फतावा रिज़विया जिल्द: ७ पेज: १२३)

स्पष्ट रहे कि यह ऐसे इस्तिफ़्ता के बारे में फ़तवा दिया गया था जिसमें एक मुराऊ दूसरे शब्दों में एक काफ़िर से ज़ायद रक़म लेने का मामला किया गया था, इस पर पूछा गया था कि यह जायज़ है कि नाजायज़, इस जवाब से भी वाज़िह हो रहा है कि मुसलमान फ़क़ीर पर सदक़ा करना अफ़ज़ल है।

इसलिए हर मुफ़्ती को चाहिए कि अगर वह आला हज़रत फ़ाज़िले बरेलवी की पैरवी में इस मसले में जवाज़-व-इबाहत का फ़तवा दे तो साथ ही ये भी साफ कर दे कि इसका सदक़ा करना बेहतर-व-मुस्तहसन है, न यह कि सिर्फ जायज़ होने का फ़तवा देकर इस्तिहसान की ओर ध्यान न दिलाया जाये, क्योंकि मुसलमानों की बहुत सी क़ौमी ज़रूरतें इस सूरत में पूरी हो सकती हैं, धार्मिक केन्द्र, धर्म के प्रचार-प्रसार की संस्थाएं, शिक्षा एवं ज्ञान प्रसारित करने वाले मदरसे, निर्धनों और गरीबों की देख-भाल में इससे अच्छी ख़ासी मदद मिल सकती है, फिर यह बात भी पेश-ए-नज़र रहनी चाहिए कि हर्बी और मुस्लिम के दरमयान सूद पाया ही नहीं जाता, आइम्मा-ए-इस्लाम में से सिर्फ इमाम-ए-आज़म और उनके नामवर शिष्य हज़रत इमाम मुहम्मद का मसलक है, इन दोनों अइम्मा-ए-किराम के इलावा सल्तनते अब्बासिया के चीफ जस्टिस, हज़रत इमाम अबू यूसुफ़ और तीनों इमाम यानी इमाम शाफ़ई, इमाम मालिक और इमाम अहमद बिन हम्बल का मज़हब यह है कि हर्बी काफ़िर और मुस्लिम के दरमयान सूद पाया जायेगा, इसलिए अगर कोई मुसलमान काफ़िर हर्बी से ज़ायद रक़म ले तो इन आइम-ए-इस्लाम के नज़दीक यह नाजायज़-व-हराम होगा, जैसा कि इब्ने क़दामा ने तीनों इमामों के तर्क विस्तार से बयान करते हुए लिखा है कि जिन आयाते करीमा से रिबा) सूद (के हराम होने

का सबूत मिलता है वह मुतलक़ हैं, उनमें मुसलमान और काफ़िर की कोई क़ैद नहीं है, इसी तरह रिबा वाली तमाम हदीसें आ़म हैं, सिर्फ एक हदीस मुरसल ऐसी पाई जाती है जिसमें साफ है कि काफ़िर हर्बी और मोमिन के दरमयान रिबा नहीं पाया जाता, फिर फ़ाज़िल मुसन्निफ़ इब्ने क़दामा अपने क़लम का उमंग दिखाते हुए हन्फी मसलक को अपनी आलोचना का निशाना यूँ बनाते हैं।

لایجوز ترك ماورد بتحریمہٖ القرآن و تظاهرت بہٖ السنة وانعقد الاجماع علیٰ تحریمہٖ بخبر مجهول لم یرد فی صحیح ولا مسند ولا کتاب موثوقٍ بہٖ و هو مع ذلك مرسل محتمل و یحتمل ان المراد بقوله لا ربٰوالنهی عن الربٰو کقوله لا رفث ولا فسوق ولا جدال فی الحج.

जिस चीज़ का हराम होना क़ुरआने हकीम से हुआ हो, और उसका समर्थन अहादीसे करीमा से भी हुई हो, और उसके हराम होने पर इजमा (सहमति) हो गया हो, उसको किसी मजहूल (अज्ञात) की ख़बर से छोड़ा नहीं जा सकता, जो किसी सहीह या मुस्नद या किसी भरोसेमंद किताब में नहीं आयी है, इसके अलावा ये हदीस मुरसल है जिसमें संभावना पायी जाती है और वह संभावना यह है कि सरकार के क़ौल :ला रिबा---- से मुराद नफ़ी (नकारात्मक) नहीं बल्कि नही (निषेध) है जैसे अल्लाह तआला के क़ौल لارفث,में है।

(अल-मुग़नी जिल्द: ६ पेज: ९९, दारे आलिमिलकुतुब अलअरबिया, अलसऊदिया)

इब्ने क़दामा की तल्ख़-व-तुंद लहजे में यह आलोचना उसी वक़्त सही हो सकती है जब कि हदीस मुरसल मुतलकन भरोसे के काबिल न हो और रिबा के न होने का मदार सिर्फ यही हदीस मुरसल हो, हालांकि वास्तविकता इसके ख़िलाफ़ है, रिबा के न होने की दलील दर-हक़ीक़त हर्बी के माल की इबाहत है और ये इबाहत विभिन्न सही हदीसों से साबित है, इसलिए इस हक़ीर के नज़दीक इब्ने क़दामा की यह

आलोचना ध्यान देने योग्य नहीं है, फिर भी चूँकि तीनों इमामों के नज़दीक काफ़िर हर्बी और मुस्लिम के दरमयान सूद नही पाया जाता है इसलिए हमको ये देखना है कि तमाम मज़ाहिब के इमामों के मतों में सामंजस्य संभव है कि नहीं? अगर सामंजस्य और ततबीक़ की कोई संभावित सूरत चाहे वह किसी दर्जे में हो निकल आए तो इसे बिल्कुल नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए, इस मसला में इस तरह से सामंजस्य बैठाना मुम्किन है कि एक हनफ़ी यह फ़तवा दे कि काफ़िर हर्बी से ज़ायद रक़्म लेना जायज़ है, और इसका भी उल्लेख कर दे कि उसका सदक़ा करना अफ़ज़ल और अतिउत्तम है, क्योंकि दूसरे मतों के इमाम जब उसको नाजायज़ बताते हैं और वह भी क़ुरआन-ए-करीम और अहादीस करीमा से सनद लाते हैं। तो उनके विचार शैली से पूर्णत: निगाह नही फेरा जा सकता है, बल्कि एक लिहाज़ से उनके मज़हब की रियायत ज़रूरी है, जैसा कि दुर्रे मुख़तार में है:

ندب مراعاة الخلاف بالاجماع

(दुर्रे मुख़तार, जिल्द: १, किताब-अल-तहारत, पेज: ९९)

फ़ाज़िले बरेलवी फ़रमाते हैं :मुराअ़ते ख़िलाफ़ बिल इजमाअ़ मुस्तहब है।

(फतावा रिज़विया, जिल्द: 2, पेज:३६८)

जीवन बीमा का हुक्म

वर्तमान समय में सूदी कारोबार के फैलाव के लिए धन के पुजारियों और हुकूमतों ने नई नई स्कीमें तैयार कीं बल्कि नए नए तरीक़ों का अविष्कार किया उनमें सबसे व्यापक तरीक़ा बीमा कंपनियों की सूथापना है, ये कंपनियां अपने अपने दलालों और एजेंटों को बहुत अच्छे अंदाज़ में ट्रेनिंग देकर भेजती हैं, यह दलाल इंतिहाई चर्ब ज़बान, बड़े चापलूस, मधुरभाषी होते हैं और अपनी ख़ुशअख़लाक़ी का मुज़ाहरा करने में महारत रखते हैं, उनके छल के जाल में बड़े से बड़ा दानिशमंद और विद्वान और इंतिहाई दीनदार-व-मुत्तक़ी-व-परहेज़गार

फंस जाता है, ये मंदिरों के पुजारियों-व-महन्तों और कलीसाओं के राहिबों तक पहुंच जाते हैं, उनकी पहुंच मस्जिदों के इमामों और ख़ानक़ाहों के पीरों तक होती है, यह अपनी दिल मोहिनी बातों से सरकार के मंत्रियों को मुतास्सिर करते और ग़रीबों की झोंपड़ियों में पहुंच कर उन बेचारों को भी फाँस लेते हैं, और ये ऐसे अनोखे और निराले अंदाज़ में अपनी कंपनी की पालीसियों को बयान करते हैं कि सुनने वाला न सिर्फ हैरतज़दा रहता है बल्कि उसको आहिस्ता-आहिस्ता यक़ीन हो जाता है कि हमारे और हमारे बच्चों के शानदार भविष्य के लिए उनके खज़ाने में बहुत सा धन हमारे इंतिज़ार में तड़प रहा है, बस हमको थोड़ी सी हिम्मत की ज़रूरत है।

हमारे एक अज़ीज़(जो मध्यम वर्ग से ताल्लुक़ रखते थे) का ये दिलचस्प बयान निहायत सबक़ आमूज़ बल्कि इबरत आमूज़ है कि बीमा कंपनी का एक दलाल मेरे पास आया और बड़ी चर्ब ज़बानी से पालीसियों के फ़ायदे पर ऐसी रोशनी डाली कि हमारी निगाहों के सामने यह मंज़र आया कि मानो हमारी तिजोरी में लाखों रुपये का ढेर जल्द ही पहुंचने वाला है और हमारे बाल बच्चों का शानदार भविष्य उसकी पालीसी लेने में छुपा है, लेकिन कुछ ही दिनों के बाद मालूम हुआ कि हज़ारों इन्सानों की दौलत समेटने के बाद बीमा कंपनी वाले उसको सूदी कारोबार में ख़र्च करते हैं, और एक-आध आदमी को इंतिहाई नाज़ुक सूरत-ए-हाल या किसी हादसे के पेश आने पर फ़ायदा पहुंच जाता है, और इसके लिए भी काफ़ी दौड़ धूप करनी पड़ती है।

यह बात बिल्कुल साफ है कि जिस तरह लाटरी वग़ैरा जूए की नई शक्ल हैं, ठीक इसी तरह बीमा का कारोबार भी दौलत के समेटने और सूदी कारोबार में खर्च करने की एक बहुत ही बुरी स्कीम है, इसमें जुआ भी है, और सूद भी, इसमें कभी दौलत बर्बाद भी होती है, और दूसरों को सूदी कारोबार पर उभारा जाता है, इसलिए ज़रूरत है कि बीमा

कंपनियों के तमाम नियम और शर्तों का जायज़ा लिया जाये और सिर्फ इसी बात पर भरोसा न किया जाये कि बड़े नाज़ुक वक़्त पर इससे फ़ायदा पहुँच जाता है, क्योंकि इसमें माल बर्बाद भी होता है।

बीमा कंपनियों की पैदाइश का ज़माना बहुत पुराना नहीं है, फिर भी उसकी स्थापना अंग्रेज़ों के अह्दे हुकूमत में हिन्दुस्तान में हो गई थी, और उसकी विभिन्न पॉलीसियों का रिवाज भी था, लेकिन हिंन्दुस्तान की आज़ादी के बाद जिस तेज़ी के साथ इसका फैलाव हुआ है, उस वक़्त नहीं हुआ था, अब घर-घर, गांव गांव , बीमा कंपनी के दलाल पहुंच रहे हैं, इसलिए इसे साफ करना ज़रूरी है कि जीवन बीमा के जवाज़ की कोई सूरत है या नहीं?

आला हज़रत फ़ाज़िले बरेलवी की ख़िदमते मुबारका में विभिन्न सवाल उसके बारे में पेश हुए, और कुछ सवालों में विस्तार से उसकी विभिन्न सूरतों का ज़िक्र भी किया गया, लेकिन सवाल करने वालों में से कुछ लोगों ने सवाल में यह ज़िक्र किया कि ऐसी बीमा कंपनियों से मुसलमानों को फ़ायदा ही पहूँचता है, और फ़ायदा भी निश्चित और यक़ीनी होता है, मुसलमानों के माल के बर्बाद होने का अंदेशा नहीं होता या बहुत कम होता है, सवाल के इस तरह के अंदाज़ पर फ़ाज़िल बरेलवी ने जीवन बीमा को जायज़ क़रार दिया।

सवाल :क्या फ़रमाते हैं उलेमाए दीन कि ज़िंदगी का बीमा कराना शरअन जायज़ है या हराम, सूरत उसकी ये है कि जो शख़्स बीमा कराना चाहता है इससे ये क़रार पाया जाता है कि पचपन साल या साठ साल या पच्चास साल की उम्र तक दो हज़ार रुपये चार रुपये या पाँच रुपये माहवार के एतबार से तनख़्वाह से लिये जाते रहेंगे, अगर वो शख़्स पचपन साल तक ज़िंदा रहा तो ख़ुद उसको और मीयाद मुक़र्रर के अंदर मर गया तो उसके वरसा(वारिसों)को दो हज़ार रुपया यकमुश्त मिलेगा, चाहे वो बीमा कराने के बाद और इसकी मंज़ूरी आने के बाद

फ़ौरन ही मर जाये और अगर मीयाद मुक़र्रर तक ज़िंदा रहा तो भी उसको दो हज़ार रुपया मिलेगा ये बीमा गर्वनमैंट की जानिब से हो रहा है किसी कंपनी वग़ैरह को इससे ताल्लुक़ नहीं।

इस सवाल से जाहिर है कि इस बीमा से किसी को कोई नुक़्सान पहूंचने का अंदेशा नहीं है, बल्कि मालूम होता है कि इसमें सरासर फ़ायदा ही है और इसमें कोई शरई क़बाहत भी नज़र नहीं आती, हाँ कुछ हालतों में ये ज़रूर है कि जमा की हुई रक़म से ज़ायद मिलेगी यानी तनख़्वाह से जो रक़म काटी गयी है, उस वक़्त ज़ायद मिलेगी जबकि मीयाद से पहले उसका इंतिक़ाल हो जाए मगर चूँकि ये हर्बी का माल है और हर्बी का माल उसकी रज़ा से लेना जायज़ है, इसलिए इस रक़म के लेने में कोई क़बाहते शरई नहीं पाई जाती, ख़ुलासा ये है कि इस सवाल में सिर्फ यह साफ है कि मुसलमान का माल बर्बाद नहीं होगा और इसमें फ़ायदा भ्रमात्मक नहीं है, बल्कि निश्चित है इसलिए आला हज़रत ने निम्नलिखित फ़तवा दिया

जवाब :जबकि ये बीमा सिर्फ़ गर्वनमैंट करती है और इसमें अपने नुक़्सान की कोई सूरत नहीं है, तो जायज़ है, कोई हर्ज नहीं, मगर यह शर्त है कि इसके ज़िम्मा किसी ख़िलाफ़ शरीअत एहतियात की पाबंदी आइद ना होती हो, जैसे रोज़ा-व-हज की मुमानअत ।वल्लाहो तआला आलमो।

(अहकामे शरीयत, जिल्द:२ पेज:४८-४९, निज़ामिया किताब घर लाहौर)

इस फ़तवे के पेश-ए-नज़र हमारी जमात के कुछ मुफ़्तियाने किराम ने जीवन बीमा के जवाज़ का फ़तवा दिया।

सवाल: देवबंद के मुफ़्ती ने जवाब दिया है कि ज़िंदगी का बीमा कराना जायज़ नहीं कि रिबा यानी सूद-व-क़िमार है, क्या मुफ़्तिए मज़कूर का जवाब सही है?

जवाब: अगर ये बीमा कंपनियां ख़ास कुफ़्फ़ार की हों तो बीमा कराने में कोई हर्ज नहीं है जबकि मुसलमान का नुक़्सान न हो और इसको रिबा -व-क़िमार क़रार देकर हराम कहना सही नहीं है।

(बीमा-व-डाकखाने के मुनाफ़ा का शरई हुक्म, पेज: २१)

इस फ़तवे में भी खासतौर पर बीमा के जवाज़ का हुक्म दिया गया है इससे साबित हुआ कि हर ऐसा बीमा जिसमें मुसलमान के माल के नुक़्सान का अंदेशा हो या उसके माल के बर्बाद होने का ख़तरा हो या फ़ायदा बिल्कुल संशयात्मक और ख़्याली हो तो ऐसा बीमा करवाना जायज़ नहीं है, जैसा कि आला हज़रत फ़ाज़िल बरेलवी के पास निम्नलिखित विस्तृत सवाल आया

सवाल :एक बीमा कंपनी जिसके मालिक-व-मुख़तार सब के सब नसरानी(इसाई) मज़हब के हैं इलावा दरिया-व-आग के बीमे के जान का भी बीमा होता है इसकी सूरतें विभिन्न हैं

1- **पहली सूरत:**में तमाम उम्र एक मुक़र्ररा बीमा उतारने वाला कंपनी मज़कूर को हर साल देता रहता है और उसके मरने के बाद उसके वारिसों को बीमा की रक़म दी जाती है, मसलन तीस साल की उम्र के शख़्स ने हज़ार रुपये की रक़म के लिए अपना बीमा उतारा तो सालाना फ़ीस उसको अट्ठाईस हज़ार रुपया देना पड़ेगा और उसके मरने के बाद कंपनी उसके वारिसों को पूरा एक हज़ार रुपया दे देगी, मसलन आज कोई (किसी शख़्स ने) बीमा कंपनी से मुआहिदा किया और पहले साल की फ़ीस दे दी उसके बाद दो महीना या दो साल या चार साल के बाद मर गया तो बीमा की पूरी रक़म एक हज़ार रुपये उसके वारिसों को मिल जाएगी।

सवाल के इस हिस्से में सराहत नहीं है कि अगर दो-चार क़िस्तों की अदाइगी के बाद या आधी रक़म की अदाएगी के बाद सालाना फ़ीस अदा न कर सका तो इसकी रक़म बर्बाद होगी या नहीं लेकिन आम तौर पर बीमा का कारोबार इसी तरह चलता है कि बहुत से लोगों की रकमें कुछ दिनों के बाद अदाइगी न करने की वजह से बर्बाद हो जाती हैं इसलिए इस सूरत में इतनी बात स्वीकार कर लेनी चाहिए कि अगर पॉलीसी लेने वाला ज़िंदा रहा और कुछ क़िस्तों की अदाएगी के

बाद बाकी किस्तें अदा नहीं हो पाऐं, तो उसकी पूरी या आधी रक़म बर्बाद हो जाएगी जैसा कि आगे उसकी सराहत आ रही है, क्योंकि समय सीमा बहुत लंबी है इसलिए अदाएगी से रोकने वाली चीज़ें ज़्यादा हो सकती हैं।

2- **दूसरी सूरत**: यह है कि माद्दूद फ़ी (कुछ फ़ीस)सिर्फ चंद साल तक हर साल कंपनी मज़कूर (उपरोक्त) को देता रहा और उसके मरने के बाद उसके वारिसों को इस बीमा की पूरी रक़म एक हज़ार दे दी जाएगी, यह पहली सूरत से अच्छी है, चंद साल फ़ी भरने के बाद भरना नहीं होता, मसलन एक शख़्स की उम्र तीस साल है और सात साल तक कंपनी मज़कूर को साढे तीस रुपया फ़ीस देता रहे और फिर न दे तो उसके वारिसों को बाद मौत बीमा की रक़म दे दी जाएगी और अगर बीमा उतारने वाला मुद्दत (समय सीमा) से पहले मर गया तो भी उसके वारिसों को एक हज़ार रक़म दे दी जाएगी।

पहली सूरत और दूसरी सूरत में फ़र्क़ सिर्फ यह है कि पहली शक्ल में ज़िंदगी-भर फ़ीस अदा करनी पड़ेगी और इस दूसरी सूरत में एक निश्चित समय तक फ़ीस देनी पड़ेगी, लेकिन इसमें भी निश्चित समय से पहले अगर फ़ीस की अदाएगी किसी वक़्त न हो पाई तो पूरी जमा शुदा रकम बर्बाद हो जाएगी, इससे साफ हो रहा है कि यह शर्त लगाई जा रही है यानी जुआ खेला जा रहा है, अगर बाज़ी जीत गए तो फ़ायदा ही फ़ायदा है वर्ना आधा माल बर्बाद हो जाएगा, बहर-हाल इन दोनों सूरतों में क़िमार न होने का संदेह नहीं किया जा सकता।

3- **तीसरी सूरत** :कोई शख़्स जो बीमा उतारता है मसलन पचपन साल या साठ साल की उम्र को पहुंचने के बाद बीमा की हुई रक़म को वसूल करना चाहता है, उस उम्र तक बीमा उतारने वाला ज़िंदा रहा तो रक़म मज़कूर (उपरोक्त राशि) उसको मिलेगी, हर बुढ़ापे उम्र की फ़ीस जुदा (भिन्न) है , मसलन तीस साल की उम्र का शख़्स साठ साल की

उम्र को पहुंचने के बाद एक हज़ार चाहता है तो सालाना उसको फ़ीस मज़कूर देना पड़ेगा और उसको साठ साल की उम्र में बीमा की रक़म एक हज़ार मिलेगी, इस दरमयान में बीमा उतारने वाला मर गया तो पूरी रक़म बीमा की एक हज़ार उसके वारिसों को मिल जाएगी।

इस सूरत में भी यह वर्णन नहीं पाया जाता कि (मसलन अगर पंद्रह साल तक बीमा उतारने वाले ने चौंतीस रुपये सालाना फ़ीस अदा किए और उसके बाद फ़ीस न अदा कर सका तो फिर उसकी रक़म का क्या हाल होगा, क्या पंद्रह साल की जमा शुदा राशि वापिस मिलेगी या नहीं, लेकिन वर्णन आ रहा है कि अगर बीमा उतारने वाला अपने जीवन में सालाना फ़ीस अदा करने से मजबूर हो गया तो जमाशुदा राशि का आधा सोख़्त हो जाएगी, इस सूरत में भी माल के बर्बाद होने का अत्यन्त ख़तरा मौजूद रहता है, इसलिए कि इस लम्बे समय सीमा में अदाएगी के बहुत सी रुकावटें पैदा हो सकती हैं।

4 - **चौथी सूरत:** यह सूरत तीसरी सूरत से मिलती जुलती है, फ़र्क़ यह है कि इस सूरत में बीमा उतारने वाले को सिर्फ तीस साल तक फ़ीस देनी पड़ती है, इसकी फ़ीस तीसरी सूरत से ज़रा ज़्यादा है, मसलन तीस साल की उम्र का शख़्स साठ साल में एक हज़ार रुपया चाहता है तो उसको सालाना फ़ीस बयालीस रुपया देना होगा, बीस साल के बाद फिर न देना होगा, जब वह साठ साल की उम्र में पहुँचेगा तो कंपनी उसको बीमे की रक़म दे देगी यानी कुल हज़ार रुपये, इस दौरान में वह मर गया तो उसके वारिसों को पूरी रक़म एक हज़ार रुपये मिल जाएगी।

तीसरी और चौथी सूरत में फ़र्क़ सिर्फ इतना सा है कि वहां निरंतर तीस साल तक बीमे की रक़म अदा करनी पड़ेगी फिर साठ साल की उम्र के बाद अदाएगी नहीं होगी और चौथी सूरत में अगरचे बीमा साठ साल का है फिर भी अदाएगी पच्चास साल तक रहेगी यानी सिर्फ बीस

साल तक अदा करनी पड़ेगी, फिर उसको दस साल तक कुछ नहीं देना होगा , लेकिन यहां फ़ीस की रक़म तुलनात्मक रूप से ज़्यादा है

सवाल करने वाले ने यहां तक बीमे की तमाम सूरतों को ज़िक्र करने के बाद ये उल्लेख किया है कि:

कोई शख़्स उपरोक्त सूरतों का बीमा लेने के बाद चंद साल बीमे की फ़ीस देता रहा, उसके बाद न देना चाहे या न दे सका और कंपनी से रुपया जो भरा है वापिस चाहे तो आधी रक़म अदा की हुई उसको मिलेगी, मसलन दस साल तक देता रहा, अनुमानित कुल चार सौ हुआ या ज़्यादा हुआ या कम हुआ, अब वह कंपनी से अपना समझौता खत्म करा कर जो रुपये भरा है वापिस चाहता है तो सिर्फ आधी रक़म चार-सौ की दो सौ मिलेगी और अगर वह वापिस नहीं चाहता तो निश्चित समय के गुज़रने पर जिसका उसने चयन किया हो ब-वक़्त मुआहिदा बीमे की रक़म या मुनासबत मिलेगी, मसलन चौथी सूरत का बीमा लिया, पाँच साल तक फ़ीस देता रहा उसके बाद न दे सका या न देना चाहा तो इसको एक चौथाई रक़म की रसीद मिलेगी, यानी दो सौ पच्चास रुपये उसको या तो बशर्ते हयात साठ साल की उम्र में उपर्युक्त रुपया दो सौ पचास मिलेगा या बाद मौत उसके वारिसों को मिलेगा।

बीमे की फ़ीस जुदा-जुदा है, जितनी कम उम्र होगी उतनी ही फ़ीस कम होगी, यह हिसाब बीमा उतारते वक़्त किया जाता है और बीमा उतारने के वक़्त जो उम्र रहती है तमाम उम्र बुढ़ापे की उम्र तक भरना होगा।

उपरोक्त सूरतों से रुपया जमा करना और बीमा कंपनी से समझौता करना और उपर्युक्त कंपनी से वसूली करना शरअन जायज़ है या नहीं, साइल हनफ़ी मज़हब का है, लिहाज़ा फ़तवा भी इसी मज़हब पर हो।

वस्सलाम

सवाल पूछने वाले ने जीवन बीमा की जो चार सूरतें ज़िक्र की हैं उनमें से कोई एक सूरत नहीं है जिसमें यह ज़मानत मौजूद हो कि बीमा करवाने वाले की पूरी धनराशि हर हालत में महफ़ूज़ रहेगी बल्कि फ़ीस अदा न करने की हालत में आधी रक़म ज़रूर डूब जाएगी और अगर मीयाद तक उस रक़म को वसूल न करने का इरादा कर लिया तो ज़रूर उसको पूरी धनराशि मिलेगी, ग़ौर फ़रमाईए कि बीमा कंपनी में पैसा जमा करने के बाद आप कितने बेगैर हाथ पैर के हो जाते हैं कि अपनी मजबूरियों और रुकावटों की वजह से अपनी पॉलीसी को जारी न रख सकें तो ऐसी सूरत में आपको दो ही रास्ते रह जाते हैं: एक यह कि आधी रक़म वापिस लेकर बाक़ी आधी के लिए अफसोस का हाथ मिलते रहें और दूसरे यह कि अपनी दवा ईलाज के लिए ज़रूरत तो आज आपको है लेकिन पंद्रह साल के बाद पूरी धनराशि आपको मिलेगी, कितनी क़बाहतें, कितनी बुराइयां इसमें पाई जाती हैं कि अगर फ़िक्र की जाये तो अव्वल नज़र में यही फ़तवा होना चाहिए कि यह सब नाजायज़-व-हराम हैं लेकिन सतही निगाह रखने वाली शख़्सियत नहीं बल्कि ऐसी महान बरकत वाली शख्सियत जिसकी निगाह-ए-ख़ुर्दबीन से फ़िक़्ह का कोई महीन से महीन जुज़ईआ (प्रसंग) या बारीक से बारीक बिन्दू पोशीदा नहीं है, इसलिए इस्लामी क़ानून के अज़ीम माहिर इन सब सूरतों में बीमा को नाजायज़ क़रार देते हुए सवाल करने वाले के जवाब में इरशाद फ़रमाते हैं:

जवाब यह बिलकुल क़िमार (जुआ) है और महिज़ बातिल कि किसी अक़्द शरई (शरीई बिक्री) के तहत में दाख़िल नहीं, ऐसी जगह अक़ूद फ़ासदा (नाजायज लेन-देन) बग़ैर उज़्र के जो इजाज़त दी गई वह इस सूरत से मुक़य्यद है कि हर तरह ही अपना नफ़ा हो और यह ऐसी कंपनियों में किसी तरह मुतवक़्क़े (उम्मीद) नहीं लिहाज़ा इजाज़त नहीं।

كما حقق المحقق على الاطلاق فی فتح القدير والله تعالىٰ اعلم

(जैसा कि मुहक्किक अलल इतलाक़ ने फतहुल कदीर में इसे स्थापित किया है और अल्लाह बेहतर जानने वाला है)

(फतावा रिज़विया, जिल्द:७ पेज: ११२-११३ मकतबा रिज़विया कराची)

ख़ुलासा यह है कि बीमा कंपनियों में जीवन बीमा करवाना उसी वक़्त दरुस्त होगा जब बिल्कुल यक़ीन हो जाए कि इसमें फ़ायदा ही फ़ायदा है और माल के बर्बाद होने का अंदेशा हो तो इस शक्ल में ज़िंदगी का बीमा करवाना नाजायज़ है, क्योंकि ये सिर्फ जुआ है जो अक़्द फ़ासिद (अमान्य बिक्री) है और अमान्य बिक्री के माध्यम से उसी वक़्त हर्बी का माल लिया जा सकता है जबकि माल के बर्बाद होने का अंदेशा न हो, एक बात यहां अलबत्ता साफ है कि भारतीय हुकूमत के कर्मचारी अपनी तनख़्वाहों को कटा करके जो बीमा कराते हैं उसमें किसी तरह से मुसलमान मुलाज़िम को नुक़्सान का अंदेशा नहीं, यह बीमा शरीअत के अनुसार जायज़-व-मुबाह है, जैसा कि फ़ाज़िले बरेलवी रज़ी अल्लाहु अन्हू ने अपने फ़तवे में इसको खोल कर बयान किया है।

अध्याय:5

इस्लामी फ़िक़्ह के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि बहुत से ख़रीद-व-फ़रोख़्त के ऐसे मामले हैं जिनमें ज़ाहिरी तौर पर सूद नज़र नहीं आता लेकिन गहराई में उतरने से मालूम होता है कि उनमें भी किसी न किसी हैसियत से सूद की मनहूसियत ज़रूर पाई जाती है, शायद इसी वजह से अल्लामा इब्ने हजर फ़रमाते हैं कि हर हराम खरीद-फरोख्त पर रिबा (सूद) का इतलाक़ होता है, नीज़ फ़क़्हा ए हनफ़िया भी साफ-साफ फ़रमाते हैं कि सूद के दायरे में तमाम फ़ासिद बैअ़ (अनियमित बिक्री) भी दाख़िल हैं , लेकिन अल्लामा शामी इस नियम को उचित तौर पर स्वीकार करते और फ़रमाते हैं:

والاصل فيه كل ما كان مبادلة مالٍ بمال يبطل بالشروط الفاسدة لان الشروط الفاسدة من باب الربٰوا.

इस बारे में नियम यह है कि हर वह मामला जिसमें माल का लेन-देन माल से हो फ़ासिद (अनियमित) शर्तों से बातिल (अमान्य) हो जाएगा क्योंकि फ़ासिद शर्तें रिबा (सूद) के समूह से हैं।(रद्दुलमुहतार ४ पेज १०१)

इससे मालूम हुआ कि बहुत से ख़रीद-व-फ़रोख़्त के मामलों में सूद नहीं होता है अगरचे वह बातिल या फ़ासिद हों फिर भी जिस मामला में शर्त-ए-फ़ासिद हो इसमें ज़रूर सूद का वजूद होगा, इसलिए इस विषय में बुयूअ़ ए फ़ासिदा (अनियमित बिक्री) के कुछ मसाइल और साथ ही अक़ूद-ए-फ़ासिदा (अनियमित अनुबंध) के निर्देश ज़िक्र किए जा रहे हैं।

बैअ़ फ़ासिद(अनियमित बिक्री) के कुछ मसाइल

इस ज़माने में किसान अपनी उन पैदावार को जो ज़मींन के नीचे होती हैं कभी फ़रोख़्त कर देता है, जैसे मूली, गाजर, आलू, मूंगफली जो ज़मीन के अंदर छुपी होती हैं उनको बेच देता है और यह पहले से

पता लगा लिया जाता है कि यह चीज़ें मौजूद हैं, उनकी ख़रीद-व-फ़रोख़त जायज़ है, अलबत्ता ख़रीदार को ज़मीन से बरामद होने के बाद लेने न लेने का विकल्प होगा, लेकिन अगर अब तक इन चीज़ों का पता न लगाया गया कि मौजूद हैं या नही, यानी पैदा हुई हैं या नहीं, उनको बेच दिया गया तो यह बैअ बातिल(अमानूय बिक्री)है।

[अलदुर्रुलमुख़्तार मअ रद्दुलमुहतार, जिल्द:७ पेज: २३७ , दार आलिमिल कुतुब अलसऊदिया]

माद्दा-ए-तौलीद (यानी वीर्य चाहे इन्सान का हो या दूसरे जानवरों का) की ख़रीद-व-फ़रोख़त बिल्कुल अमान्य है, यह हुक्म फ़िक़्हे इस्लामी के इस प्रसंग से निकला है कि जानवर की पुश्त में या मादा के पेट में जो शुक्राणु (वीर्य) होता है उसकी बिक्री अमान्य और बातिल है और इस ज़माने में ट्यूब या नलकी से बच्चा पैदा करने के लिए वीर्य को दाम देकर लिया जाता है यह नाजायज़-व-हराम है और बनावटी माध्यमों से बच्चा की पैदाइश का जो तरीक़ा अपनाया जाता है उसके हराम होने में भी कलाम नहीं किया जा सकता।

(अलदुर्रुलमुख़्तार मअ रद्दुलमुहतार, जिल्द:७, पेज: २३८)

मस्जिद की ख़रीद फ़रोख़त नाजायज़-व-हराम है , यहां तक कि अगर मस्जिद के साथ दूसरी चीज़ मिला कर बैअ की जाये तो न सिर्फ मस्जिद की बिक्री अमान्य होगी बल्कि दूसरी चीज़ की भी बिक्री आमन्य हो जाएगी, हालांकि अगर ग़ैर वक़्फ़ी चीज़ को वक़्फ़ी चीज़ के साथ मिला कर बेचा जाये तो उसकी बैअ हो जाएगी, इस जुज़ईआ (प्रसंग) से मस्जिद अपवाद है।

(अलबहरुलरायक, जिल्द: ६ पेज ९० , रद्दुलमुहतार जिल्द ७ पेज २४४ , मतबा पिछला)

अगर कोई शख़्स इस उम्मीद पर किसी चीज़ को बेच डाले कि मैं उसको ख़रीद लूँगा या हिबा या वरासत या किसी और साधन से यह चीज़ मुझे मिल जाएगी जैसा कि आजकल के व्यवसायिक करते हैं तो ऐसी बैअ नाजायज़ है, हाँ अगर बैअ सलम की जाये तो उसकी खास शर्तों के साथ ज़रूर जायज़ है। (रद्दुलमुहतार जिल्द ७ पेज २४६)

इन्सान के बाल की ख़रीद फ़रोख़्त जायज़ नहीं है, न ही उसको किसी काम में लाया जा सकता है, अगर औरतें उसकी चोटियां बना कर इस्तिमाल करें तो हराम है , क्योंकि हुज़ूरﷺ ने हदीस पाक में इस पर लानत फ़रमाई है।

इस मसले के ज़िक्र करने के बाद अल्लामा शामी फ़रमाते हैं:

لو اخذ شعر النبی ﷺ ممن عنده واعطاه ھدیۃً عظیمۃً لا علی وجہ البیع فلا باس بہ.

रद्दुलमुहतार जिल्द ७ पेज २४5 , मक्तबा पिछला

हुज़ूरﷺ के मूए मुबारक को जिसके पास हो उससे कोई दूसरा शख़्स ले-ले और उसको कोई बड़ा तोहफ़ा पेश कर दे तो इसमें कोई खराबी नहीं है जबकि खरीद-फरोख्त का मामला न हो।

और मूए मुबारक से बरकत हासिल करना और उसका ग़ुसाला पीना और आँखों पर मिलना बग़रज़ शिफ़ा मरीज़ को पिलाना दरुस्त है।

बहारे शरीयत 11पे ७०० , मकतबा अलमदीना कराची

अगर दो शख़्स किसी मकान में शरीक हों तो उनमें से कोई भी उस मकान के किसी मुतय्यन हिस्से को नहीं बेच सकता, अगर उसको बेचेगा तो उसकी बैअ दरुस्त न होगी , अलबत्ता अपना पूरा हिस्सा बेच सकता है। (आलमगीरी-व-बिहार शरीयत 11 पेज ७०० मकतबा अलमदीना कराची)

अगर ख़रीद-फ़रोख़्त में क़ीमत का ज़िक्र न हो बल्कि यह कहा गया हो कि बाज़ार में इसका जो निर्ख़ (भाव) है वही क़ीमत दे देना तो यह बैअ फ़ासिद होगी। (अलदुर्रुलमुख़्तार ज ४ पे १०६)

मछलियाँ नदी या तालाब में हों और अभी तक उनका शिकार न किया गया हो, अगर उनको रुपये पैसे से बेचा गया तो यह बिक्री अमान्य है, अगर उनको कपड़ा या किसी और चीज़ के बदले बेचा गया तो बिक्री अनियमित है, यानी दोनों सूरतों में यह बिक्री नाजायज़ है, फ़र्क़ सिर्फ यह है कि दूसरी सूरत में क़ब्ज़ा के बाद मालिक हो जाएगा।
(अलदुर्रुलमुख़्तार, किताबुल बुयूअ़, बाबुल बैअ़िल फासिद पे0 414, दारूल कुतुब इल्मिया, बैरूत)

अगर मछली का शिकार करने के बाद किसी गड्ढ़े में डाल दिया गया और वो गड्ढा ऐसा है कि बिना किसी तरकीब के उससे मछलियों को पकड़ा जा सकता है तो बैअ जायज़ है और अगर उसे पकड़ने के लिए शिकार करने की ज़रूरत हो यानी जाल वग़ैरा डालने की तो इसकी बैअ नाजायज़ है। (ऐज़न)

तालाबों या झीलों को मछलियों के शिकार के लिए ठेका पर देना जैसा कि आजकल इसका रिवाज है नाजायज़ है। (बिहारे शरीयत, हिस्सा 11, पेज ७०९, मकतब अलमदीना)

मुरदार की चर्बी को बेचना या इससे किसी किस्म का फायदा उठाना जायज़ नहीं है, न इसे चिराग़ में जलाया जा सकता है न चमड़ा पकाने के काम में लाया जा सकता है, जाबिर बिन अबदुल्लाह से रिवायत है:

عن جابر بن عبد الله -رضي الله عنهما- أنه سمع رسول الله -صلى الله عليه وسلم- يقول عام الفتح وهو بمكة: «إن الله ورسوله حرم بيع الخمر والميتة والخِنزير والأصنام»، فقيل: يا رسول الله أرأيت شحوم الميتة، فإنه يُطلى بها السفن، ويُدهن بها الجلود، ويَستصبِح بها الناس؟ قال: «لا، هو حرام» ، ثم قال رسول الله -صلى الله عليه وسلم-عند ذلك: «قاتل الله اليهود، إن الله حرم عليهم الشحوم، فأَجْمَلوه، ثم باعوه، فأكلوا ثمنه.»

तर्जुमा: उन्होंने फ़तहे मक्का के साल सरकार को फ़रमाते हुए सुना (और आप मक्का मुकर्रमा में थे) बे-शक अल्लाह और उसके रसूल ने शराब, मुरदार, सुअर, बुत की ख़रीद फ़रोख़त को हराम किया, अर्ज़ किया गया :या रसूल अल्लाह आप मुरदार की चर्बी के बारे में बतलाएं कि इससे कश्तियों में लेप दिया जाता है और चमड़ों की दबाग़त में

लगाया जाता है और लोग उसे चिराग़ में भी जलाते हैं? आपने जवाब में इरशाद फ़रमाया :नाजायज़-व-हराम है, इसके बाद सरकार ने फ़रमाया कि अल्लाह तआला यहूद के ऊपर लानत करे कि अल्लाह ने उनके ऊपर चर्बियों को हराम किया था तो उन्होंने उसको पिघलाया फिर बेचा फिर उसकी क़ीमत अपने काम में लाए। (सही बुख़ारी जिल्द:१ पेज: २९८ , किताबुल बुयूअ़)

चेतावनी

इस हदीस पाक से स्पष्ट हुआ कि मुरदार की चर्बी से किसी तरह का फ़ायदा नहीं हासिल किया जा सकता, इसलिए ग़ैर मुस्लिम मुल्कों से जो साबुन वग़ैरा उत्पाद आयात किए जाते हैं जिनके बारे में प्रमुख धारणा यही है कि इसमें चर्बी मिली हुई होती है उन्हें इस्तिमाल नहीं करना चाहिए बल्कि इस हदीस पाक के पेश-ए-नज़र काफ़िर के कारख़ाना में बने हुए साबुन वग़ैरा से भी बचना चाहिए।

पेड़ों पर जो फल लगे हुए हों और वह अभी तक ज़ाहिर न हुए हों उनकी बैअ़ बिल्कुल अमान्य है और अगर फल ज़ाहिर हो गए हों, चाहे उपयोग योग्य हुए हों या न हुए हों तो उनकी बैअ) बिक्री (जायज़ है जबकि इस शर्त के साथ न ख़रीदे गए हों कि तैयार होने तक उन्हीं पर बाक़ी रहेंगे और अगर पेड़ों पर छोड़ देने की शर्त के साथ ख़रीदे गए हों तो उनकी बिक्री अनियमित है ।)आलमगीरी ज 0३, पे:0११४, दारूलकुतुब इल्मिया बैरूत (

ख़ून की खरीद-फरोख्त नाजायज़-व-हराम है, अल्लाह तबारक-व-तआला ने इरशाद फ़रमाया:

إِنَّمَا حَرَّمَ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةَ وَالدَّمَ وَلَحْمَ الْخِنزِيرِ وَمَا أُهِلَّ بِهِ لِغَيْرِ اللَّهِ ۖ فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ ۚ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ

(सूरत अलबक़रा, आयत १७३, पारा २)

तर्जुमा: उसने यही तुम पर हराम किए हैं (यानी मुरदार और ख़ून और सुअर का गोश्त और वह जानवर जो ग़ैर ख़ुदा का नाम लेकर ज़बह किया गया, तो जो नाचार हो न यूं कि ख्वाहिश से खाए और न यूं कि ज़रूरत से आगे बढ़े तो उस पर गुनाह नहीं बेशक अल्लाह बख़्शने वाला मेहरबान है।

मौजूदा ज़माने में ख़ून की ख़रीद-फ़रोख़त जारी है यहां तक कि ब्लड बैंक (Blood Bank) क़ायम हैं और बहुत से मरीज़ों और ज़ख्मियों को ख़ून चढ़ाया जाता है इसलिए एक मुसलमान के लिए लाज़िम है कि क़ुरआन हकीम के मुताबिक ख़ून के इस्तेमाल से बिल्कुल बचे लेकिन मौजूदा दौर में जान की हिफ़ाज़त और इन्सान को हलाकत से बचाने के लिए ख़ून के इस्तेमाल को लाज़िमी क़रार देते हैं यानी जब ख़ून न चढ़ाया जाये तो डाक्टर फ़ैसला करते हैं कि ऐसा मरीज़ जान से हाथ धो बैठेगा इसलिए ऐसी मजबूरी की हालत में ख़ून का इस्तेमाल जायज़ होगा और इसी पर यह आधारित होगा कि इसका ख़रीदना भी सिर्फ हिफ़ाज़त-ए-जान के लिए मुबाह होगा, इसीलिए क़ुरआन हकीम में फ़रमाया गया कि जो शख़्स मजबूर हो जाए और ख्वाहिश से वह न खाए और न ही ज़रूरत से आगे बढ़े तो उसके ऊपर कोई गुनाह नहीं, ख़ुलासा यह है कि मजबूरी की हालत में ख़ून का ख़रीदना और उसका इस्तिमाल मुबाह होगा।

लाटरी के हराम होने का बयान

आधुनिक दौर में जुआ और क़िमार की नई शक्लें अविष्कृत की गईं, जिनके स्वरूप में परिवर्तन के कारण उनके हराम होने के बारे में विचार-विमर्श करना संभव नही है, क्योंकि क़ुरआन हकीम में "क़िमार"के हराम होने का बयान मुतलकन हुआ है कि:

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَ الْمَيْسِرُ وَ الْاَنْصَابُ وَ الْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ فَاجْتَنِبُوْهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ۔(المائدۃ: ۹۰)

ऐ ईमान वालो। शराब , जुआ, बुत और पाँसे (ये सब नापाक ही हैं, शैतानी काम, तो उनसे बचते रहो ताकि तुम फ़लाह पाओ

इससे साबित हुआ कि जुआ और वह तमाम श्रोत जिनसे लोगों का माले महफ़ूज़ (सुरक्षित धन) सिर्फ भाग्य और इत्तिफ़ाक़ से हासिल हो बिल्कुल हराम हैं, और उन्हीं में इस ज़माने की लाटरी भी दाख़िल है जिसका कारोबार हुकूमतों की तरफ़ से बड़े उच्च स्तर पर होता है, लाखों रुपये के टिकट ख़रीदे जाते हैं, और सैकड़ों एजेन्ट इस काम पर तैनात होते हैं, सिर्फ इत्तिफ़ाक़ से जब किसी के नाम का नंबर निकल आता है तो वो बड़ा ख़ुशनसीब और भाग्यवान गिना किया जाता है कि वह किसी मेहनत-व-परेशानी के बिना एक सिकेन्ड में लखपति बन जाता है।

उस्ताज़ करीम हज़रत बहरुल-उलूम मुफ़्ती अब्दुलमन्नान साहिब ने इसकी तारीख़ बयान करते हुए बड़ी गहरी नज़र से अपने एक फ़तवे में इसकी हराम होने पर दलील पेश की है, और बड़ी जान-दार बहस की है वह फ़रमाते हैं कि:

"और आजकल इसमें नई तराश-ख़राश जारी है, और भांत भांत की हार जीत होती है जिसको सभी लोग जुआ समझते हैं, और जो हक़ीक़तन जुआ और क़िमार ही है (क्यों कि इस के ऊपर जुआ की तारीफ़ सादिक़ आती है)

القمار كل لعب يشترط فيه ان ياخذ الغالب من المغلوب شيئاً سواء كان بورق اوغيره .(المنجد ص 837)

जुआ हर वह खेल है जिसमें यह शर्त लगाई गई हो कि जीतने वाला हारने वाले से कुछ लेगा चाहे हार जीत पत्तों के माध्यम से हो या किसी और माध्यम से।

और शरीअत में भी जुए की हक़ीक़त यही है , शामी में है

القمار من القمر الذی یز ید و ینقص و سمی القمار قماراً لان کل واحد من المقامر ین ممن یجوز ان یذھب مالہ الیٰ صاحبہ و یجو ز ان یستفید مال صاحبہ[رد المحتار،ج ۵ ص ۵۷۷ ،دار عالم الکتب ،السعودیہ]

"क़िमार का शब्द क़मर से बना है जो कि घटता बढ़ता है, और जुआ का नाम इसलिए जुआ रखा गया है कि जुआ खेलने वालों में से हर एक आदमी के माल में हर-दम घटने बढ़ने की संभावना बनी रहती है कि इसका माल उसके प्रतिद्वंदी को मिल जाये और दूसरे का उसकी तरफ़ चला आए।

इसलिए हर वह मामला जिसमें हार जीत हो और जीतने वाले को हारने वाला फिरौती अदा करे"क़िमार है, जो नाजायज़-व-हराम है, तफ़सीरे रूहुल मआनी में है:

و فی حکم ذلک جمیع انواع القمار من النرد و الشطرنج وغیرھما حتی ادخلوا فیہ لعب الصبیان بالجوز والکعاب والقرعۃ من غیر القسمۃ و جمیع المخاطرۃ والرھان و عن ابن سیرین کل شئی فیہ خطر فھو المیسر. [تفسیر روح المعانی ج ۱ ص۵۰۸ ،دارالکتب العلمیۃ بیروت]

तर्जुमा: इस हुक्म में जुऐ की तमाम किस्में हैं, नर्द और शतरंज नीज़ इनके इलावा यहां तक कि उलेमा ने इसमें अखरोट और मोहरों से बच्चों के खेल और बिना बांटे लकी ड्रा और हर किस्म की हार , जीत वाली बाज़ियां और शर्तें शामिल की हैं, इब्ने सीरीन ने फ़रमाया कि जिसमें शर्त हो , वह जुआ है।

आजकल की प्रचलित लाटरी के जुआ होने के लिए यही काफ़ी है कि इसमें एक तरह से हार जीत की शर्त लगी रहती है, लेकिन अल्लामा आलूसी ने "अलकरा मिन ग़ैरेलकसम "कह कर खासतौर से लाटरी ही का नाम ले लिया कि माल बहुत से लोगों ने मिलकर दिया, और यह शर्त लगाई कि पर्ची डाली जाये फिर जिसका नाम या जिन लोगों का नाम निकल आए वह पूरा माल या उसका तय हुआ हिस्सा ले-ले, इसलिए उसके शरअन जुआ और हराम होने में कोई शक नहीं किया जा सकता कि इसमें टिकट के पैसे के बर्बाद होने की संभावना या लाखों के फ़ायदे की संभावना है जो मात्र संयोग से ही होगा यही जुअे की हक़ीक़त और रूह है।

रिश्वत

रिश्वत हिन्दुस्तानी समाज-व-मुआशरे की ऐसी लानत या बीमारी है जिसके अंत के लिए हुकूमत के नियम और इसके दंड संहिता अपर्याप्त नज़र आते हैं, जहां देखो इस" देव परी आकृति के सौंदर्य का दर्शन हो जाता है, कोई ऐसी हुकूमत की कोठी या कचहरी और दफ़्तर नहीं है जहां के ज़िम्मेदार अधिकारी अपने पदों से नाजायज़ फ़ायदा और रिश्वतों से अपने" अधिकार"के इच्छुक न होते हों, यह हिन्दुस्तानी अवाम के इन्साफ़ हासिल करने की राह में सबसे बड़ी रुकावट है, इससे न जाने कितने लोगों के अधिकारों का हनन होती है, और कितने लोग नाकाम-व-नामुराद होते हैं, इस लानत में ऐसे लोग गिरफ़्तार हैं जिनके ज़िम्मे शासन, व्यवस्था और न्याय एवं इन्साफ़ का काम सपुर्द किया गया है, और इसके औचित्य के लिए विभिन्न तरह के बहाने गढ़ लिए जाते हैं, कुछ लोग इसको अपना वाजिबी हक़ तसव्वुर करते हैं।

क़ुरआने हकीम में इसके हराम होने का बयान बड़े सार्थक और प्रभावशाली शैली में हुआ है।

وَلَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ وَتُدْلُوْا بِهَآ اِلَى الْحُكَّامِ لِتَاْكُلُوْا فَرِيْقًا مِّنْ اَمْوَالِ النَّاسِ بِالْاِثْمِ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ[البقرة:١٨٨، پ٢]

तर्जुमा:और आपस में एक दूसरे का माल ना-हक़ न खाओ और न हाकिमों के पास उनका मुक़द्दमा इसलिए पहूंचाओ कि लोगों का कुछ माल नाजायज़ तौर पर जान-बूझ कर खाओ।

अपनी जमात के मशहूर मुफ़स्सिरे क़ुरआन हज़रत सदरुल अफ़ाज़िल इस आयत के तफ़सीर या हाशिए में लिखते हैं कि:

इस आयत में हर अमान्य तरीके पर किसी का माल खाना हराम फ़रमाया गया चाहे लूट कर या छीन कर या चोरी से या जुऐ से या हराम तमाशों और हराम कामों या हराम चीज़ों के बदले या रिश्वत या झूठी गवाही से हो, यह सब निषिद्ध और हराम हैं, इस आयत से यह भी मालूम हुआ कि नाजायज़ फ़ायदे के लिए किसी पर मुक़द्दमा बनाना और इसको हाकिमों तक ले जाना नाजायज़-व-हराम है, इसी तरह अपने फ़ायदे की ग़रज़ से दूसरे को नुक़सान पहुंचाने के लिए हाकिमों पर प्रभाव डालना, रिश्वतें देना हराम है, जो हाकिमों तक पहुंच रखने वाले लोग हैं वह इस आयत को आँखों के सामने रखें, हदीस शरीफ़ में मुसलमानों को नुक़सान पहुंचाने वाले पर लानत आई है।

(खज़ाइनुल इरफान)

हुज़ूरﷺ ने हदीस शरीफ़ में रिश्वत ख़ोरों और रिश्वत देने वालों दोनों पर लानत फ़रमाई है।

عن عبدالله بن عمرو قال: لعن رسول الله ﷺ الراشی والمرتشی.[سنن ابو داؤد، کتاب الاقضية، باب فی کراهية الرشوة، ص ٦٧٣، مشکوۃ ج ١ ص ٣٢٦، مجلس برکات مبارک پور]

अबदुल्लाह बिन अमर रज़ी अल्लाह अन्हु ने कहा कि हुज़ूर ﷺ ने रिश्वत लेने वाले और देने वाले पर लानत फ़रमाई।

रिश्वत तो बड़ी बात है किसी के जायज़ हक़ की सिफ़ारिश पर अगर कोई शख़्स तोहफा क़बूल करे तो इसको भी हुज़ूरﷺने न सिर्फ नाजायज़ बताया बल्कि सूद का बड़ा दरवाज़ा बताया, जैसा कि अबू उमामा बाहली से मर्वी है कि:

قال من شفع لاحد شفاعة فاهدى له هدية عليها فقبلها فقد اتى بابا عظيما من ابواب الربٰو ،رواه ابو داؤد . [سنن ابو داؤد، کتاب الاجارہ، باب فی الهدية لقضاء الحاجة، ص ٦٦٦، دار الفكر بيروت]

हुज़ूर ﷺने फ़रमाया कि जिस शख़्स ने किसी की सिफ़ारिश की, दूसरे ने उसको तोहफ़ा पेश किया, उसने उसको ले लिया, तो निश्चित रूप से सूद के दरवाज़ों में से एक बड़े दरवाज़े में वह दाख़िल हो गया।

इसलिए हुज़ूरﷺने रिश्वत के दरवाज़े को बंद करने के लिए ऐसे तमाम उपहारों और तोहफों को हाकिमों के लिए नाजायज़ क़रार दिया जो उनके ओहदे की बिना पर पेश किए जाते हैं, दूसरे शब्दों में हाकिमों को उनके अपने पद के माध्यम से फ़ायदा हासिल करने से रोक दिया, क्योंकि इससे भी रिश्वत के बढ़ावे की संभावना थी, हज़रत अबू हमीद साइदी से मर्वी है कि:

عن أبي حميد الساعدي -رضي الله عنه- قال: استعمل النبيﷺ- رجلا من الأزد، يقال له: ابن اللُّتْبِيَّةِ علٰى الصدقةِ، فلما قدم، قال: هذا لكم، وهٰذا اهدى لى، فخطب النبى ﷺ فحمد الله و اثنىٰ عليه ، ثم قال: «أما بعد: فإني أستعمل رجالا منكم على امور مما وَلاَّنِي اللهُ، فيأتي احدكم فيقول:هٰذا وهٰذا هديةاهديت لى فهلا جلس فى بيت ابيه وفى بيت امهٖ فينظر ايهدى له ام لا والذى نفسى بيده لاياخذ احد منه شيئاً الا جاء بهٖ يوم القيامة يحمله علٰى رقبتهٖ الخ[مشکوٰۃ شریف ج١ ص ١٥٦ مجلس برکات مبارک پور]

तर्जुमा: हुज़ूरﷺने उज़्द कबीले के एक आदमी को (जिनका नाम इब्नुल लतीबिया था) सदक़ा के वसूल करने का कर्मचारी नियुक्त फ़रमाया, फिर जब वह वापस आए तो उन्होंने कहा :इतना माल आपके लिए है, और मेरे लिए बतौर तोहफ़ा पेश किया गया है, हुज़ूर ﷺ ने ख़ुत्बा इरशाद फ़रमाते हुए अल्लाह की हमद-व-सताइश की, फिर आपने फ़रमाया कि अल्लाह तआला ने जिन चीज़ों का मुझको मालिक बनाया है, उनमें से बहुत से चीजों पर तुम में से कुछ लोगों को कर्मी नियुक्त करता हूँ, एक शख़्स मेरे पास आकर कहता है यह आपके लिए है, और यह उपहार है, जो मुझे पेश किया गया है, क्यों नहीं वह अपने माँ बाप के घर बैठा रहता, फिर देखता कि इस को उपहार पेश किया जाता है या नहीं, क़सम है उस ज़ात की जिसके कब्ज़-ए-क़ुदरत में मेरी जान है वह जो चीज़ भी लेगा उसको क़यामत के दिन अपनी गर्दन पर लादे हुए लाएगा।

इस हदीस से अइम्मा ए किराम हाकिमों के लिए नाजायज़ क़रार देते हैं कि वह किसी शख़्स से तोहफा क़बूल करें, हाँ अगर कोई हाकिम क़रीबी रिश्तेदार हो या क़ाज़ी के पद पर नियुक्त होने से पहले परस्पर तोहफों की अदला-बदली होती रही हो तो ये दूसरी बात है, इसके जायज़ होनें में कलाम नहीं किया जा सकता, लेकिन इन दोनों सूरतों के अलावा में अगर वह तोहफा क़बूल करता है तो गोया वह अपने ओहदे से फ़ायदा हासिल करने वाला है, जो रिश्वत का क़रीबी रास्ता है, या न्याय संगत फ़ैसला की राह में सबसे बड़ी रुकावट का ये सबब बन सकता है, रिश्वत चाहे माली या ज़हनी हो दोनों तरह की रिश्वतें इस्लाम की निगाह में अत्यन्त अप्रिय हैं, इसी वजह से हाकिमों को शरीयत इस्लामी मुहतात रास्ता इख़्तियार करने का निर्देश देती है , और हाकिमों के ख़ुश करने के ऐसे तरीक़ों को पसंद की निगाह से नहीं देखती है जिनमें किसी तरह उनका फ़ायदा ध्यान में रखते हुए हो, जैसा

कि फ़ारूक़ी दौर की एक मशहूर घटना बड़ी शिक्षाप्रद है, जिसको इमाम मालिक रहमहु ल्लाहो अलैहि ने अपनी मशहूर किताब ''मो'ता'' में ज़िक्र किया है कि:

मदीना मुनव्वरा से एक लश्कर इराक़ की तरफ़ रवाना हुआ, इसमें फ़ारूक़े आज़म के दो साहबज़ादे हज़रत अब्दुल्लाह-और-उबैदुल्लाह रज़ी अल्लाह अन्हुमा शरीक रहे, वह वापस होते हुए बस्रा के हाकिम अबू मूसा अशअरी के पास आए, उन्होंने चेहरे पर बड़ी मुस्कान के साथ इन दोनों का स्वागत 'मरहबन अहलन-व-सहलन' के शब्दों से किया, फिर कहा कि अगर मेरे लिए मुम्किन होता तो तुम दोनों को किसी तरह ज़रूर फ़ायदा पहुँचाता, फिर कुछ सोच कर फ़रमाया कि मैं ज़रूर फ़ायदा पहुंचा सकता हूँ, वह ये कि मेरे पास बैत-उल-माल (सरकारी ख़ज़ाने) का धन है, जिसको में अमीरुल मोमनीन फ़ारूक़े आज़म के पास भेजना चाहता हूँ, वह धन तुम दोनों को क़र्ज़ के तौर पर दे रहा हूँ, यहां से इराक़ का सामान ख़रीद लो, फिर मदीना मुनव्वरा जाकर बेच दो, असल सरमाया तुम दोनों अमीरुल मोमनीन को दे देना और जो कुछ नफ़ा हासिल हो वह तुम्हारा होगा, इस सुझाव को अब्दुल्लाह और उबैदुल्लाह रज़ी अल्लाह अन्हुमा ने पसंद किया और बैत-उल-माल का वह धन क़र्ज़ के तौर पर लिया, और इससे काफ़ी सामान ख़रीदा, और हज़रत फ़ारूक़ आज़म के पास अबू मूसा अशअरी ने यह ख़त लिखा कि आप अपने बच्चों से बैत-उल-माल का धन वसूल कर ले, जब ये दोनों हज़रात मदीना मुनव्वरा वापस आकर तिजारत का माल फ़रोख़्त किए तो उनको नफ़ा हासिल हुआ, जिसको अपने पास रख लिया और असल रक़म उमर बिन ख़त्ताब रज़ी अल्लाह अन्हु को पेश किया और अबू मूसा अशअरी वाली बात उनको बताई , फ़ारूक़ आज़म ने फ़रमाया क्या तमाम फ़ौजियों को क़र्ज़ दिया था जैसा कि तुम दोनों को दिया था, साहिबज़ादगान ने

नकारात्मक में जवाब दिया, तो उन्होंने फ़रमाया कि तुम दोनों अमीरुल मोमनीन के यानी मेरे (बेटे हो, इसलिए तुमको क़र्ज़ दिया गया, असल माल मिल गया है, मुनाफ़ा भी बैत-उल-माल में जमा कर दो, हज़रत अब्दुल्लाह तो ख़ामोश रहे मगर हज़रत उबैदुल्लाह ने यह अर्ज़ किया कि :ऐ अमीरुल मोमनीन, आपके लिए यह बात उचित नहीं, मान लें अगर माल गुम हो जाता या नष्ट हो जाता तो हम पर इसका ज़मान लाज़िम होता, फ़ारूक़े आज़म ने उनका यह तर्क स्वीकार नहीं किया और निर्देशित किया कि माल अदा कर दो, अब्दुल्लाह फिर ख़ामोश रहे और उबैदुल्लाह ने अपना पहला वाला तर्क दुहराया, फ़ारूक़े आज़म की मजलिस में एक शख़्स मौजूद था, उसने कहा कि ऐ अमीरुल मोमनीन इस मामला को आप इस तरह रफ़ा दफ़ा कर सकते हैं कि इस को मुज़ारबत बना दें, चुनांचे फ़ारूक़ आज़म ने इसको मुज़ारबत बना दिया, फिर तमाम मूल धन और मूल मुनाफा बैत-उल-माल के लिए वसूल किया और मूल मुनाफा में दोनों फ़र्ज़न्द भागीदारी हुए। (मोता इमाम मालिक पेज २८५)

हज़रत इमाम मालिक रज़ी अल्लाह तआला अनहु के रिवायत किये हुए इस असर से निम्नलिखित बातें साबित हुईं।

क -फ़ारूक़ी दौर में मुज़ारबत का रिवाज था, और शरअन मुज़ारबत जायज़ है, इसमें भागीदारी भी हो सकती है।

ख -अगर कोई मा तहत अपने हाकिम को ख़ुश करने की कोशिश करे तो उसको चाहिए कि इन्साफ़ के तक़ाज़ों को पूरा करे और सिर्फ ख़ुश हो कर अदल-व-इन्साफ़ के ख़िलाफ़ कोई काम ना करे।

ग-बेटे के साथ अच्छा व्यवहार करना बाप को ख़ुश करने के बराबर है, या दिल-व-दिमाग़ को प्रभावित करने का बेहतरीन तरीक़ा है, अगर कोई बाप ऊँचे पद पर हो तो उसको एहतियात का रास्ता

इख़्तियार करनी चाहिए, क्योंकि बेटे के साथ अच्छा व्यवहार कभी "ज़हनी रिश्वत हो सकती है, जो इन्साफ़ के सही रास्ते से हटा दे।

हदीसों और फ़िक़ही जुज़ईआत (प्रसंगों) से ये बात साबित हो चुकी है कि रिश्वत की तरफ़ पहुंचाने वाले रास्ते निहायत ख़ुफ़िया और पोशीदा भी होते हैं, उन सबसे बचना लाज़िम है।

लेकिन यहां एक सवाल ज़हन पर उभर के सामने आता है कि ऐसा समाज जिसमें रिश्वत का दौर दौरा हो और अपने जायज़ हक़ को हासिल करने के लिए रिश्वत के बग़ैर काम न चल रहा हो, तो क्या हर मुसलमान पर लाज़िम है कि रिश्वत न दे और अपने हक़ से दस्त-बरदार हो जाए, क्या इस्लामी शरीयत अपने हक़ के हुसूल के लिए भी रिश्वत के दरवाज़े को सख़्ती के साथ बंद करती है?या मजबूरी की सूरत में, इसमें कुछ जवाज़ का पहलू है, मुहक़्क़िक़ अलल-इत्लाक़ हज़रत-ए-शैख़ अब्दुलहक़ मुहद्दिस देहलवी अपनी किताब अशिअतिल लमआत में फ़रमाते हैं:

اما اگر براے اثبات حق ودفع ظلم از نفس بد ہندلا باس بہ است، ہم چنیں اگر گیرندہ سعی کند در رسیدن حق بصاحب حق یا دفع ظلم از وے۔[اشعۃ اللمعات ج:۳،ص: ۳۲۶]

लेकिन रिश्वत जब कि अपने हक़ को हासिल करने के लिए दे दिया या अपनी आप से ज़ुल्म को दूर करने के लिए दे तो इसमें कोई बुराई नहीं, यूँही जब कोई शख़्स रिश्वत इसलिए ले कि किसी हक़ वाले को उसके हक़ के पहुंचाने में कोशिश कर रहा है या उससे ज़ुल्म को दूर कर रहा है तो इसमें कोई हर्ज नहीं है।

इससे मालूम हुआ कि उज़्रे माक़ूल यानी उचित बहाना के कारण रिश्वत लेना देना मुबाह है, लेकिन इस स्थान पर यह बिन्दु ज़हन में रहना चाहिए कि रिश्वत लेने की इबाहत सिर्फ ऐसे लोगों के लिए है जो क़ाज़ी और हाकिम न हों, और जो लोग सत्ताधारी हों कि रिश्वत के बग़ैर दूसरे

का हक़ दिला सकते हों तो उनके लिए किसी हालत में रिश्वत लेना जायज़ नहीं है, जैसा कि हज़रत शेख़ मुहद्दिस देहलवी फ़रमाते हैं:

اما گفتہ اند کہ ایں در غیر قضاۃ وولاۃ است، زیراکہ سعی در اصابت حق واثبات آں ودفع ظلم از مظلوم واجب است برایشاں پس روانباشد اجرت گرفتن برآں۔

[اشعۃ اللمعات ج۳، ص ۳۲۶]

उलेमाए इस्लाम ने कहा है कि ये हुक्म क़ाज़ियों और हाकिमों के अलावा के लिए है, इसलिए कि हक़दार को उसका हक़ पहुंचाने के लिए कोशिश करना और मज़लूम से ज़ुल्म को दूर करना उनके ऊपर वाजिब है, तो इस पर मेहनताना लेना जायज़ नहीं होगा।

ख़यानत (विश्वासघात)

जब कोई शख़्स अपने धन-दौलत, सोना, चांदी, ज़ेवरात की सुरक्षा करने से ख़ुद अक्षम होता है, और उसको ये अंदेशा होता है कि यह क़ीमती चीज़ें अगर मेरे पास रहीं तो संभव है कि खो जाएं तो वह दूसरे के पास उसको ईमानदार समझ कर उससे सुरक्षा का वचन लेकर अमानत रख देता है, अमीन के ऊपर अनिवार्य है कि उन चीजों की सुरक्षा में कोई कसर उठा न रखे, उनमें कमी बेशी न करे, ख़ुर्द बुर्द करने से बाज़ रहे, दूसरे शब्दों में ख़यानत जैसे बड़े अपराध से अपने को महफ़ूज़ रखे क़ुरआन हकीम में अमीन को अल्लाह से डरने का हुक्म देकर इस जुर्म अज़ीम से रोका गया है।

فَإِنْ أَمِنَ بَعْضُكُم بَعْضًا فَلْيُؤَدِّ الَّذِي اؤْتُمِنَ أَمَانَتَهُ وَلْيَتَّقِ اللهَ رَبَّهُ ۗ وَلَا تَكْتُمُوا الشَّهَادَةَ ۚ وَمَن يَكْتُمْهَا فَإِنَّهُ آثِمٌ قَلْبُهُ ۗ وَاللهُ بِمَا تَعْمَلُونَ عَلِيمٌ۔

[البقرۃ، پ۳، آیت ۲۸۳]

तर्जुमा:अगर तुममें एक दूसरे पर भरोसा हो तो वह जिसे उसने अमीन (भरोसेमंद) समझा था अपनी अमानत अदा कर दे और अल्लाह से डरे जो उसका रब है और गवाही ना छुपावो, जो गवाही छुपाएगा, तो

अंदर से उस का दिल गुनहगार है, और अल्लाह तुम्हारे कामों को जानता है।

एक दूसरी आयत में ख़ुदा ए क़ुद्दूस ने अपने रसूल अकरम ﷺ की तरफ़ अगरचे कलाम का रुख फेरा है, लेकिन दर असल मुस्लिम उम्मा के मार्ग दर्शन और रहनुमाई के लिए है कि अमन की हालत में ख़यानत जायज़ नहीं है, जंग की हालत में भी, जब कि बहुत सी बातें मुबाह हो जाती हैं, इसमें भी यह बेईमानी मुबाह नहीं हो सकती, जैसा कि इरशाद रब्बानी है:

وَمَا كَانَ لِنَبِيٍّ أَنْ يَغُلَّ وَمَنْ يَغْلُلْ يَأْتِ بِمَا غَلَّ يَوْمَ الْقِيَامَةِ ثُمَّ تُوَفَّى كُلُّ نَفْسٍ مَا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ـ [آل عمران:١٦١،پ٤]

तर्जुमा: और किसी नबी पर यह गुमान नहीं हो सकता कि वह कुछ छुपाए रखे (यानी गनीमत के धन में ख़यानत करे) और जो छुपाए रखेगा वह क़ियामत के दिन अपनी छुपाई हुई चीज़ को लेकर आएगा, फिर हर जान को उसकी कमाई भर पूर दी जाएगी और उन पर ज़ुल्म नहीं होगा।

हुज़ूर अकरम ﷺ ने ख़यानत को इतना बड़ा अपराध क़रार दिया कि यह मोमिन की गरिमा से दूर है कि खयानत उससे हो और यह बताया कि इस अपराध के दोषी इस्लाम के छिपे हुए दुश्मन और विरोधी होते हैं, यानी यह नफ़ाक़ का लक्षण है, आपने फ़रमाया:

اربع من كن فيه كان منافقا خالصاً و من كانت فيه خصلة منهن كانت فيه خصلة من النفاق حتى يدعها اذا اوتمن خان و اذا حدث كذب و اذا عاهد غدر و اذا خاصم فجر. [صحيح البخاری باب علامة المنافق ج 1 ص 10، قدیمی کتب خانه کراچی].

चार बातें ऐसी हैं कि जिस आदमी में वह पाई जाएं वह विशुद्ध मुनाफ़िक़ होगा, और जिस शख़्स के अंदर उनमें से एक गुण पाया जाये,

तो उसमें नफ़ाक़ का एक हिस्सा है, यहां तक कि इन बातों को वह छोड़ दे, और वह चीज़ें ये हैं कि १- जब उसे अमीन बनाया जाये तो वह ख़यानत करे। २- और गुफ़्तगु-व-बातचीत में झूट बोले।३- और समझौता करके उसका उल्लंघन करे। ४- लड़ाई झगड़े में गाली गलौज बके।

इस हदीस शरीफ़ से स्पष्ट है कि ख़यानत करने वाला अगरचे दायरा ए इस्लाम से बाहर हो कर मुनाफ़िक़ीन की मंडली में दाख़िल नहीं होगा जो इस्लाम के छिपे हुए दुश्मन हैं, और जिनके संबंधित क़ुरआने हकीम में निर्देश हुआ कि मुनाफ़िक़ीन जहन्नम के सबसे निचले स्तर में होंगे, फिर भी यही क्या कम गुनाह है कि किसी शख़्स में नफ़ाक़ के लक्षण पाए जाएं और वह परिपूर्ण ईमान के दर्जे पर सुसज्जित न हो, ईमान-ए-कामिल का तक़ाज़ा यह है कि अमानत में ख़यानत के जुर्म का अपराधी न हो और जिस तरह उसने बड़े हृदय के साथ अमानत की रक्षा की ज़िम्मेदारी अज्र-व-सवाब की नीयत से क़बूल की है इसी तरह ईमानदारी-व-बहादुरी के साथ उसकी हिफ़ाज़त और सुरक्षा करे, फ़क़्हा ए इस्लाम ने अमानत के जो आदेश बयान किए हैं, उनमें इस बात की स्पष्टता है कि अमानत के माल में तग़य्युर-व-तबद्दुल एक किस्म की ख़यानत है, इससे बचना ज़रूरी है, अगरचे अमीन के इस काम से उसकी क़ीमत और मालियत न घटे।

मुज़ारबत और उसकी अमान्य शर्तें

कुछ लोगों के पास पूँजी और दौलत की बहुतायत होती है, और वो व्यवसाय और कारोबार की योग्यता नहीं रखते, न ही उनको उसका अनुभव होता है, और कुछ लोग ऐसे होते हैं जिनके पास पूँजी और दौलत नहीं होती, मगर वो कारोबार की योग्यता और क़ाबिलीयत रखते हैं, इसलिए सभ्य जीवन में इस्लामी शरीयत ने यह जायज़ क़रार दिया कि कोई शख़्स अपना सरमाया दूसरे को देकर इससे समझौता करे

कि तुम मेरे रुपये से तिजारत करो, हम दोनों नफ़ा में शरीक रहेंगे, अल्लामा बुरहानुद्दीन मरग़ीनानी फ़रमाते हैं

بعث النبی ﷺ والناس یباشرونه فقرّرهم علیه و تعاملت به الصحابة. [هدایه ج ۳ص ۲٦۲، مکتبه رحمانیه لاهور]

सरकार अलैहिस-सलाम तशरीफ लाए, लोग एक दूसरे के साथ मुज़ारबत करते थे जिसको आपने बरक़रार रखा और सहाब-ए-किराम रिज़वानुल्लाहे अलैहिम के दरमयान इसका रवाज रहा।

शमसुल अइम्मा इमाम सरख़सी क़ासिम बिन मुहम्मद की रिवायत ज़िक्र करते हुए मुज़ारबत के जवाज़ का सबूत पेश करते हैं:

عن قاسم بن محمد قال: کان لنا مال فی ید عائشة رضی الله عنها و کانت تدفع مضاربةً فبارك الله لنا فیه سعیها و کان عمر رضی الله عنه یدفع مال الیتیم مضاربةً. [المبسوط ج۲۲ ص ۱۸ دار المعرفة بیروت]

क़ासिम बिन मुहम्मद ने कहा कि हमारा माल हज़रत आयशा के पास था और वह उसको मुज़ारबत में देती थीं, अल्लाह तआला ने हज़रत आयशा की कोशिश से इसमें बरकत अता फ़रमाई और हज़रत उमर यतीम के माल को मुज़ारबत पर देते थे।

बहर हाल मुज़ारबत के जवाज़ में संदेह नहीं किया जा सकता, क्योंकि अक़्ल-व-नक़्ल दोनों का प्रमाण पाया जाता है, इसमें एक पक्ष पूँजी लगाता है और दूसरा उस पूँजी से कारोबार करता है और समझौता यह होता है कि मसलन मुनाफ़ा में आधे-आधे के दोनों भागीदारी रहेंगे या जो भी दोनों की रजामंदी से तै हो जाएगी मसलन कारोबार करने वाले को एक चौथाई नफ़ा दिया जाये और बाक़ी मुनाफ़ा पूँजी लगाने वाले को मिले।

लेकिन मौजूदा दौर में भागीदारी और मुज़ारबत में ऐसी शर्तें लगाई जाती हैं जिनसे मुज़ारबत या तो फ़ासिद (अनियमित) या बातिल (अमान्य) हो जाती है, पूँजीपति अपनी दौलत के सहारे अपने मुज़ारिब

(पार्टनर) को ऐसी शर्तें मानने के लिए मजबूर करता है जिससे मुज़ारबत की आकृति या हक़ीक़त बदल जाती है और शरई क़बाहत की हद में यह समझौता दाख़िल हो जाता है, कारोबार करने वाले पर एक किस्म का ज़ुल्म और अत्याचार होता है, इसलिए इस्लामी कानून के विशेषज्ञों ने उन बातों का ज़िक्र किया है जिनसे मुज़ारबत आमान्य हो जाती है उनमें से कुछ का वर्णन संक्षिप्त में यहां किया जा रहा है।

क- अगर मुतय्यन नफ़ा की इस तरह शर्त लगा दी कि मासिक पच्चास रुपये या सौ रुपये हमको मिलते रहें तो यह मुज़ारबत नहीं है बल्कि एक किस्म का रिबा (सूद) है जो अमान्य और हराम है, इसलिए कि हो सकता है पच्चास ही रुपये या सौ रुपये का नफ़ा इस कारोबार में हो तो बेचारा वह क्या पाएगा जिसने अपनी मेहनत, योग्यता और अपनी बुद्धि और तजुर्बे को खर्च करके यह नफ़ा कमाया था।

ख-आधे या चौथाई लाभ का जो समझौता हुआ है उस पर बढ़ातरी की किसी निश्चित राशि की शर्त लगाना मुज़ारबत को अमान्य और बातिल कर देगा, मसलन एक पूँजीपति या धनवान ने किसी दूसरे को दस हज़ार रुपये कारोबार करने के लिए दिए और यह समझौता किया कि मुनाफ़ा में हम दोनों आधे-आधे भागीदारी रहें लेकिन यह भी शर्त लगा दी कि आधे के अलावा मुझको पच्चास रुपये और मिलना चाहिए इससे भी मुज़ारबत बातिल हो जाएगी और कारोबार करने वाले को उजरत ए मिस्ल मिलेगी

ग- कुछ मालदार लोग अपनी पूँजी किसी ग़रीब को देकर यह कहते हैं कि मुझको एक हज़ार रुपये माहाना देते रहो, बाक़ी मुझको तुम्हारे नफ़ा नुक़्सान से कोई ग़रज़ नहीं है, अगर तिजारत में तुमको नफ़ा हो तो वो तुम्हारा रहेगा या नुक़्सान हो तो तुम्हारे ज़िम्मे आएगा, मुझको सिर्फ एक हज़ार रुपये मासिक मिलना चाहिए और मेरा मूल धन यानी असल रक़म तुम्हारे ज़िम्मे हर हालत में लाज़िम रहेगी, दर-हक़ीक़त ये

मुज़ारबत नहीं है बल्कि अक़्द बातिल (अमान्य लेन-देन) है जो शरअ़न नाजायज़-व-हराम है, एक कारोबारी के लिए यही नुक़्सान क्या कम है कि उसने अपनी मेहनत, अपनी दौड़धूप, अपनी बुद्धि और योग्यता सब कुछ लगाया लेकिन उसको कुछ हासिल न हुआ, अब अगर उसके ऊपर नुक़्सान-और-ख़सारे का बोझ डाला जाये तो ये सख्त ज़ुल्म होगा, इसलिए मुज़ारबत के बुनियादी उसूलों में ये दाख़िल है कि अगर कारोबार में ख़सारा हो जाएगा तो ये सिर्फ़ माल के मालिक के ज़िम्मे आएगा और जो शख़्स उस से सरमाया लेकर कारोबार कर रहा है उस से वह मुक्त होगा, क्योंकि वह बहुत बड़ा नुक़्सान उठा चुका है कि इतनी सारी मेहनत के बावजूद उसके हाथ कुछ ना आया।

शिरकत (साझेदारी) और उसके अमान्यता की शक्लें

ये बात शक और संदेह से ऊपर है कि दो या दो से ज़्यादा लोग किसी कारोबार में साझेदारी करें तो यह जायज़ है लेकिन नये दौर में बड़ी बड़ी कंपनियों की स्थापना होती है और उसमें सैकड़ों लोग अपनी दौलत जमा करके भागीदार होते हैं, उनकी जो शर्तें और उसूल मुक़र्रर किए जाते हैं वो शरीयत इस्लामी की निगाह में बिल्कुल अमान्य हैं, जैसे बैंक, लाईफ़ इंशोरंस, मिलों और कारख़ानों की कंपनियां होती हैं जो व्यवसायिक कारोबार करती हैं, उनमें जो शख़्स रुपया जमा करता है इसको मुतय्यन नफ़ा उसके सरमाये का पाँच फ़ीसद या छः फ़ीसद या दस फ़ीसद दिया जाता है, चाहे ऐसी कंपनीयां ख़सारे में चलें या नफ़ा में, हर हालत में इसमें रुपया जमा करने वालों को नफ़ा मिलता रहेगा, इस किस्म की कंपनियों की स्थापना और उनमें शरीक होना जायज़ नहीं है और न ऐसा व्यापार ही दरुस्त है, तनवीर उल-अबसार में है:

الشركة عبارة عن عقد بين المتشاركين فى الاصل والربح

[تنو ير الابصار ج ٣ ص ٣٣٣، الدر المختار كتاب الشركة ص ٣٦٢، دار الكتب العلمية بيروت].

शिरकत (साझादारी) एक ऐसा समझौता है जिसमें भागीदार लोग असल और नफ़ा दोनों में भागीदार रहें।

तनवीर उल-अबसार और उसकी शरह दुर्रे मुख़्तार में है:

شرطها ای شرکة العقد عدم مایقطعها کشرط دراهم مسماة لاحد هما ،لانه قد لا یربح غیر المسمّٰی و حکمها الشرکة فی الربح. [الدر المختار ج ٣ ص ٣٣٧]

साझादारी (पार्टनरशिप) की शर्त यह है कि तमाम वो चीज़ें नही होनी चाहिऐं जो पार्टनरशिप को ख़त्म कर दें, मसलन दोनों में से एक के लिए मुतय्यन दिरहम की शर्त लगाना, इसलिए कि कभी मुतय्यन के अलावा नफ़ा नहीं होता है, हालांकि इसका हुक्म नफ़ा में शिरकत है।

अलबत्ता अगर कंपनियां क़ायम की जाएं या मुसलमान ऐसे बैंक क़ायम करें कि वो बैंक या कंपनियां इस्लामी उसूलों पर क़ायम हूँ तो ज़रूर उसके "शेयर" को ख़रीदा जा सकता है, यानी उसमें शिरकत की जा सकती है, इसका सबूत हज़रत साइब रज़ी अल्लाह अन्नहु की इस रिवायत से है:

عن السائب ان النبی ﷺ شارکه قبل الاسلام فی التجارة، فلما کان یوم الفتح جاءه ،فقال علیه السلام: مرحباً باخی و شریکی، کان لایداریٔ ولا یماری، یا سائب !قد کنت تعمل اعمالاً فی الجاهلیة لا تقبل منك و هی الیوم تقبل منك.[فتح القدیر کتاب الشرکة ج ٦ ص ١٤٣.١٤٤]

हज़रत साइब से मर्वी है कि हुज़ूर अकरम ﷺ ने क़बल इस्लाम व्यापार में उनसे शिरकत की थी, मक्का विजय के दिन जब वह हाज़िर दरबार हुए तो आपने इरशाद फ़रमाया: ख़ुश-आमदीद मेरे भाई और मेरे शरीक (साझादार) मेरे साथ व्यापार में न तुम रुकावट डालते थे और न झगड़ते थे, ऐ साइब ! दौरे जाहिलियत में तुम्हारे आमाल मक़बूल नहीं

होते थे आज के दिन तुम्हारे आमाल अल्लाह की बारगाह में क़बूल हो रहे हैं।

ये हदीस पाक स्पष्ट तौर से इशारा कर रही है कि शिरकत (साझेदारी) का कारोबार ना सिर्फ जायज़ है बल्कि हुज़ूर अकरमﷺ की सुन्नते करीमा है, लेकिन फ़ोक़हा ए किराम ने इसके बारे में कुछ ऐसे नियम निर्धारित किए हैं जिनसे किसी पक्ष की हक़तलफ़ी न हो सके, इसलिए अगर ऐसी कंपनी स्थापित की जाये जिसमें पचासों आदमी भागीदारी हों तो खर्चों को अलग करने के बाद जो मुनाफ़ा हासिल हो उनमें वो लोग अपनी पूँजी के अनुपात भागीदारी हों और इसी अनुपात से ख़सारे में भी भागीदारी हों तो ऐसी कंपनी की स्थापना के जायज़ होनो में शक नहीं किया जा सकता, लेकिन मौजूदा दौर में शेयर की जितनी संस्थाएं की जाती हैं उनमें ज़्यादा तर शेयर होल्डर इस बात के ख़ाहिशमंद होते हैं कि हमारा मूल धन हर हालत में सुरक्षित रहे, चाहे कंपनी को फायदा हो या नुक़्सान, इसी वजह से जब कोई कंपनी क़ायम की जाती है और उसके शेयर बेचे जाते हैं (इस गुफ़्तगु का संबंध शेयर बाज़ारी से नहीं है) तो हिस्सा ख़रीदने वाला पहले से यह संतुष्टि हासिल कर लेता है कि हमारे असल सरमाया में कमी तो नहीं आएगी? उसके लिए वो निश्चित लाभ की शर्त लगाता है, यही वह ज़हनीयत या स्वार्थ है जहां से वो इस्लामी उसूल-व-क़वानीन से टकराता है, जिस से कारोबार शरई बुराई की सीमा में प्रवेश कर जाता है, वर्ना अगर मुसलमान इस्लामी उसूल के दायरे में रह कर भागीदारी की संस्थाए स्थापित करते और इससे मिलों और फ़ैक्ट्रयों को तरक्की देते तो इससे मुसलमानों की आर्थिक हालम में बड़ा ज़बरदस्त इन्क़लाब पैदा होता और मुसलमानों की आर्थिक हालत के सुधारने में बड़ी मदद मिलती, इसलिए कि हुज़ूरﷺ जब तशरीफ लाए तो लोग भागीदारी का कारोबार

करते थे, आपने न सिर्फ उसको बरक़रार रखा बल्कि उसकी हौसला-अफ़ज़ाई की:

शिरकत फ़ासदा (अनियमत भागीदारी) के कुछ मसाइल

शिरकत में अगर एक ही का माल हो या एक ही की चीज़ हो तो जो कुछ लाभ अर्जित होगा वो माल के मालिक को मिलेगा और दूसरे को इस काम की मजदूरी मिलेगी, मसलन एक शख़्स ने अपना जानवर (या अपनी टैक्सी, जीप, आटो रिक्शा वग़ैरा) दूसरे को दिया कि इसको किराए पर चलावो और किराए की आमदनी में आधे-आधे के हम भागीदार होंगे, यह शिरकत फ़ासिद है, कुल आमदनी मालिक को मिलेगी और मजदूर को आम तौर से इस किस्म के कामों के लिए जो मज़दूरी मिलती है वही दी जाएगी जिसको उजरते मिसल कहा जाता है।(अलदुर्रुलमुख़्तार ३ पे 0३५०, बहार ए शरीयत, हिस्सा,10 पे 0५१५ मकतबा अलमदीना, कराची)

अगर एक शख़्स ने अपना जानवर(या दूसरे परिवाहन के साधन जैसे टैक्सी वग़ैरा) दूसरे को दिया कि तुम इस पर अपना सामान लाद कर फेरी करो, मुनाफ़ा में हम दोनों शरीक रहेंगे, ये शिरकत भी फ़ासिद है, लाभ का मालिक फेरी करने वाला होगा, जानवर के मालिक को उजरत मिसूल मिलेगी।

अगर पल्लदारों ने आपस में काम में भागीदारी या शिरकत यूं की कि कोई बोरे में गल्ला भरेगा और कोई उठा कर दूसरे की पीठ पर रखेगा और कोई मालिक के घर पहुंचाएगा और जो कुछ मज़दूरी मिलेगी सब बराबर बराबर बांट लेंगें तो ये शिरकत भी फ़ासिद है।

(आलमगीरी , जिल्द: ४ पेज: ५१, बहार ए शरीयत, हिस्सा 10 पेज ५१६, मकतबा अलमदीना)

अगर किसी शख़्स ने अपनी गाय दूसरे को देकर शिरकत का इस तौर पर समझौता किया कि दूसरा आदमी उस गाय को चारा खिलाए, पाले पोसे और जो बच्चा पैदा हो उसमें वो आधा-आधा बराबर के भागीदार होंगे तो ये शिरकत भी फ़ासिद है, बच्चा गाय के मालिक का

होगा और दूसरे शख़्स को इस के चारा खिलाने और देख-भाल का मजदूरी मिलेगी। (अलदुर्रुलमुख़्तार-व-बहारे शरीयत जिल्द १० पेज ५१६, मकतबा अलमदीना)

साझेदार को ये इख़्तियार नहीं है कि अपने साझेदार की इजाज़त के बग़ैर उसकी तरफ़ से ज़कात अदा कर दे, अगर ज़कात अदा करेगा तो इस को हरजाना देना पड़ेगा और ज़कात भी अदा न होगी। (अलदुर्रुलमुख़्तार जिल्द ३ पेज ३५१, बहारे शरीयत जिल्द १०, पेज ५१८ मकतबा अलमदीना)

एक खेत साझा में है, दूसरे साझादार की इजाज़त के बग़ैर कुछ बोया, अब दूसरा साझादार कहता है कि आधा बीज मैं देना चाहता हूँ ताकि पैदावार साझा में हो जाए, अगर बीज खेत के जमने के बाद दिया है तो जायज़ है और अगर पहले दिया है तो नाजायज़ है। (अलदुर्रुलमुख़्तार जिल्द ३, पेज ३५६ / बहारे शरीयत जिल्द १०, पेज ५२४ मकतबा अलमदीना)

कोई साझेदार दूसरे साझेदार की अनुमति के बग़ैर साझे के माल को रेहन (गिरवी) नहीं रख सकता, अगर गिरवी पर रखेगा तो यह नाजायज़ होगा। (बहार शरीयत, जिल्द:१, पेज: ५०६, मकतबा अलमदीना)

हिन्दुस्तान में बाप के मरने के बाद उसके तमाम बेटे विरसा पर क़ाबिज़ हो जाते हैं, चल और अचल संपत्ति शरई तौर पर बांटी नहीं जाती, बल्कि साझी रहती है, लेन-देन व्यापार और खेती बारी यहां तक कि खाना पीना कभी मुद्दतों एक साथ रहता है, यह शिरकत ए मिल्क है, इस सूरत में जो कुछ व्यापार और खेती के ज़रीये इज़ाफ़ा करेंगें सब में सब बराबर के साझेदार होंगे, अगरचे किसी ने ज़्यादा काम किया हो किसी ने कम, कोई कारोबार में महारत रखता हो कोई नातजुर्बाकार हो, अगर इन साझेदारों में से कुछ ने कोई ख़ास चीज़ अपने लिए ख़रीदी तो ये चीज़ उसी की होगी लेकिन बक़ीया साझेदार को उनके हिस्से का तावान देना होगा। (बहारे शरीयत जिल्द: १०, पेज: ४९६, मकतबा अलमदीना)

इजारा-ए-फ़ासदा(अवैध किरायादारी/मजदूरी)के कुछ मसाइल

मज़दूरी उजरत पर काम करवाना या करना शरीअत में जायज़ है, यहां तक कि इसमें मुसलमान और काफ़िर की कोई क़ैद नहीं है, अगर कोई मुसलमान मज़दूर किसी काफ़िर के यहां मज़दूरी या मुलाज़मत करे तो इसमें शरीअत के अनुसार कोई बुराई नहीं पाई जाती, यूँही कोई मुसलमान अपने मकान को किराए पर किसी काफ़िर को दे तो ये भी शरअन जायज़ है, लेकिन ये ज़रूरी है कि किरायादारी में उन शर्तों का लिहाज़ रखा जाए जिनको शरीयते इस्लामिया ने अधिकार हनन से रोकने और इन्साफ़ के लिए निर्धारित किए हैं, अब अगर उनकी पाबंदी न की जाये तो इससे फ़साद पैदा होता है, इसलिए उचित मालूम होता है कि अवैध किरायादारी के चंद मसाइल इस मौक़ा पर ज़िक्र कर दिए जाएं।

1-अगर किसी शख़्स ने गाय या भैंस ख़रीद कर दूसरे को इस शर्त पर दिया कि इस को खिलाए पिलाए, देख-भाल करे और जो कुछ दूध होगा दोनों में आधा-आधा तक़सीम हो जाएगा, कुल दूध मालिक के लिए होगा और दूसरे को उसके काम की मजदूरी मिलेगी और उसने जो अपने पास से खिलाया पिलाया है उसकी क़ीमत मालिक को देनी पड़ेगी, अगर दूसरे शख़्स ने दूध इस्तेमाल किया है तो मालिक को इतना ही दूध वापस दे। (आलमगीरी जिल्द:३ पेज ५२४ / बहारे शरीयत, जिल्द: १४, पेज: १५१, मकतबा अलमदीना)

2- देहातों में जब खेत कटता है तो बालियां टूट कर गिर जाती हैं, काश्तकार इन बालियों को चुनवाता है, उसकी मज़दूरी इसी में देता है, बल्कि कभी ऐसा होता है कि खेत काटने वाले को उसी से मज़दूरी दी जाती है ये नाजायज़ है। (बहारे शरीयत हिस्सा:१४ पेज , १५१ मकतबा अलमदीना)

3-अगर किसी शख़्स ने कपड़ा बुनने के लिए सूत दिया और यह कह दिया कि आधा कपड़ा मजदूरी में ले लेना या गल्ला उठा कर

लाओ उसी में से दो सेर मज़दूरी मिलेगी या चक्की मशीन वाले को आटा पीसने के लिए दिया और उसी आटे से मजदूरी देने का मुआहिदा किया तो ये सब मजदूरियां भी नाजायज़ हैं।

(बहारे शरीयत चहारदहुम , पे०: १५०, मकतबा अलमदीना)

4- किसी आदमी ने मकान या अपनी दुकान किराए पर इस शर्त पर दी कि इसकी मरम्मत या मकान का टैक्स वग़ैरा किरायादार के ज़िम्मे होंगे तो ये इजारा भी फ़ासिद है क्योंकि इन चीज़ों का संबंध मालिक मकान से है, किरायादार के ज़िम्मे ये शर्त लगाना किरायादारी के ख़िलाफ़ है। (अलदुर्रुलमुख़्तार किताब अल इजारा, बाब इजारिल फासिदा, जिल्द: ५ पेज: २९)

5- कुछ लोग गाय , बकरी वग़ैरा को बटाई पर देते हैं कि जो बच्चे पैदा होंगे दोनों आधा-आधा लेंगे, ये नाजायज़ है, बच्चे मालिक ही के होंगे और दूसरे को उजरत मिसल (उचित मजदूरी) मिलेगी।

(बहारे शरीयत १४ पेज १५२, मकतबा अलमदीना)

6- क़ुरआने हकीम की तिलावत करने वालों को मुर्दे के ईसाल-ए-सवाब के लिए उजरत पर रखना नाजायज़ है, तीजा वग़ैरा के मौक़ा पर उजरत पर क़ुरआने हकीम पढ़वाना नाजायज़ है, उजरत देने वाला और लेने वाला दोनों गुनहगार हैं, इसी तरह बहुत से लोग चालीस रोज़ तक मय्यत की क़ब्र के पास या अपने मकान पर किसी हाफ़िज़-ए-क़ुरआन से चालीस रोज़ तक उजरत पर मय्यत के ईसाल-ए-सवाब के लिए क़ुरआन शरीफ़ पढ़वाते हैं, ये भी नाजायज़ है, इस सूरत में ईसाल-ए-सवाब अर्थहीन बात है, इसलिए कि जब पढ़ने वाले ने पैसों की ख़ातिर पढ़ा तो इस को सवाब ही नहीं मिलेगा, फिर ईसाल-ए-सवाब क्या होगा, उसको तो उसका बदला में दुनिया ही मिल गया, इसमें कोई शक नही कि ईसाल-ए-सवाब जायज़ बल्कि मुस्तहसन (पसंदीदा) काम है, मगर उजरत पर क़ुरआन-ए-मजीद या कलमा-ए-तय्यबा पढ़वाना ईसाल-ए-सवाब नहीं है, अलबत्ता पढ़ने वालों को अल्लाह के लिए पढ़ना चाहिए और ईसाल-ए-सवाब करना चाहिए।

(बहारे शरीयत चहारदहुम स १४७, मकतबा अलमदीना)

7- ख़त्म पढ़ने के लिए उजरत पर रखना नाजायज़ है, मसलन कोई आयत-ए-करीमा का ख़त्म कराता है, कोई ख़्वाजगान पढ़वाता है, कोई कलिमा तय्यबा का ख़त्म कराता है, ये सब काम उजरत पर नाजायज़ हैं।

(बहार शरीयत, चहारदहुम, पेज: १४८, मकतबा अलमदीना)

8- अगर किसी शख़्स ने निश्चित समय तक के लिए अपने सामान को किराया पर दिया, मसलन शामियाना, बर्तन वग़ैरा जो किराया पर चलते हैं उनको तीन यौम के लिए किराया पर दिया और यह शर्त लगा दी कि उनकी वापसी की ज़िम्मेदारी किराया पर लेने वाले की होगी और ये सामान ख़ाली होने के बाद वापिस न हुए तो किराया पर लेने वाले शख़्स के ज़िम्मे सिर्फ तीन दिन का किराया अदा करना होगा और ऐसी शर्त लगाना नाजायज़ है, यानी यह शर्त फ़ासिद है, इसी तरह अगर किसी शख़्स से प्रतिदिन एक निर्धारित मात्रा पर अपने सामान को किराया पर दिया, मसलन ये सामान जब तक तुम व्यस्त रखोगे प्रतिदिन तुमको दस रुपये किराए देने होंगे, किराया पर ले जाने वाले ने दस दिन के अंदर उन तमाम सामानों को ख़ाली कर दिया, फिर अतिरिक्त पाँच दिन तक ये सामान उसके यहां पड़े रहे, तो उसके ज़िम्मे सिर्फ दस दिन का किराया होगा, अगरचे सामान के मालिक ने वापसी की शर्त के साथ किराए पर दिया हो, यही हुक्म उन तमाम बिल्डिंग मटेरियल का है जो किराया पर चलते हैं, मसलन बाँस, बिल्लियां, पटरे वग़ैरा किराए पर दिए गए, जैसाकि आजकल लकड़ियों के व्यापारी करते हैं और ये शर्त लगा दी कि जब तक तुम वापस नहीं करोगे उस वक़्त तक तुमको बराबर किराया अदा करना पड़ेगा अगरचे ये सामान ज़रूरत में इस्तेमाल होने के बाद ख़ाली हो जाएं तो यह शर्त फ़ासिद है जिसका ऐतबार न होगा और किराया पर लेने वाले के ज़िम्मे उतने ही दिनों तक का किराया लाज़िम होगा जितने दिनों तक अपने यहां इन सामानों को इस्तमाल करता रहा। (आलमगीरी-व-बहारशरीयत चहारदहुम१५५, मकतबा अलमदीना)

अध्याय:6

सदक़ा और सूद में विरोधाभास है

प्रथम अध्याय से हमारे सम्मानित पाठकों पर यह बात स्पष्ट हो गई कि सूद बदतरीन गुनाह कबीरा है, (सबसे घृणित महा पाप) इससे ज़ुल्म-व-तशद्दुद का दौर दौरा होता है, यह क्रुरता और निष्ठुरता की भावना को उभारता है, इससे कंजूसी और तंगदिली पैदा होती है, इसके विपरीत सदक़ात-व-ख़ैरात से व्यवहार की शिष्टता, अच्छा बरताव, उदारता एवं दरिया दिली, मज़लूम की सहायता, निर्बल व नादार की मदद और सहयोग, ग़रीब श्रमिक पर दया-एवं-प्यार के अच्छे स्वभाव पैदा होते हैं, इसीलिए क़ुरआने हकीम में सूरा-ए-बक़रा की आयात में जहां विस्तार से सूद के हराम होने का बयान हुआ है वहीं सदक़ात व ख़ैरात की तरफ़ शौक़ भी दिलाया गया है, ताकि यह बात लोगों पर स्पष्ट हो जाए कि सदक़ा और सूद के दरमयान पूर्ण विरोधाभास है, इसलिए अगर अंधेरे के समझने के लिए रोशनी की ज़रूरत है, अगर गर्मी बग़ैर ठंडक के नहीं समझी जा सकती तो सूद की बुराई और निकृष्टता का सही बोध उसी वक़्त पैदा हो सकता है जबकि ज़कात-व-सदक़ात से आत्मा की स्वच्छता और तज़की-ए-नफ़्स का एहसास पैदा हो जाएगा, इसलिए आईए एक नज़र इस्लाम के" निज़ामे ज़कात-व-सदक़ात" पर डालते चलें ताकि इन्सानी दिलों में यह बात रच बस जाए कि जो समाज-व-मुआशरा अपने लोगों के साथ बिना किसी बदले के एक दाना ख़र्च नहीं करना चाहता है वह कितने संकुचित विचार, कितने ओछापन, कितनी तंगदिली और कितनी कम हिम्मती में गिरफ़्तार है और वो मुआशरा जो अपने बेसहारा लोगों की मदद-और-सहायता अत्यंत निष्कपटता और बेग़र्ज़ी के साथ कर रहा है वो कितना विशाल हृदय, कितना बलंद निगाह और कितना हौसलामंद है, दोनों में ज़मीन-व-आसमान का फ़र्क़ है।

चूँकि इस्लाम इन्सान को हर चरण में हैवानियत के बजाय फरिश्तों के गुण से परिपूर्ण बनाना चाहता है इसलिए क़ुरआने हकीम में नमाज़ जैसी अहम इबादत के साथ-साथ बीसों आयतों में ज़कात का वर्णन हुआ है, इबादत-ए-जिस्मानी के साथ इस इबादत माली का ज़िक्र उसकी अहमियत-व-अज़मत की वज़ाहत के लिए किया गया है और ये अक़ीदा और विश्वास ज़हनों में बैठाना था कि जिस तरह नमाज़ का अज्र-व-सवाब और उसका ज़ाहिरी और बातिनी फ़ायदा तुम्हारी ही तरफ़ लौट कर आता है या तुम्हीं को मिलता है इसी तरह जो कुछ तुम अपनी हलाल कमाई से ख़ुदा की राह में खर्च करोगे लौटने के एतबार से इससे तुमको बड़ा फ़ायदा पहुंचेगा और तुमको यह तसव्वुर नहीं करना चाहिए कि जो कुछ अपने जैसे इन्सानों पर ख़र्च करते हो इसमें तुम्हारा फायदा नहीं है बल्कि दूसरे ही लोगों का फ़ायदा है, वाक़िया तो यह है जो कुछ राह-ए-हक़ में खर्च किया जाता है उसका बदला इतना मिलेगा कि उसके अंदाज़ें से ये कमज़ोर इन्सान क़ासिर है।

وَمَا تُنفِقُوا مِنْ خَيْرٍ يُوَفَّ إِلَيْكُمْ وَأَنتُمْ لَا تُظْلَمُونَ۔ البقرة ع۷۳ آیت ۱۷۲

तर्जुमा: और जो माल तुम ख़र्च करोगे वह तुम्हें पूरा मिलेगा और तुम नुक़्सान नहीं दिए जाओगे।

लेकिन इन्सान इतना लालची स्वभाव है या जल्दबाज़ है कि वो जल्द से जल्द अपने ख़र्च का फ़ायदा चाहता है और ऐसे मुनाफ़ा की तरफ़ उसकी स्वभाविक प्रवृत्ति नहीं होती है जो उसको देर में मिलने वाला हो, लेकिन क़ुरआन शरीफ़ इन्सान के दृष्टिकोण को बदल देना चाहता है, वह कहता है कि वह व्यापार क्या फायदेमंद है जिसमें नफ़ा थोड़ा सा मिले और वह भी थोड़ी देर के लिए, फिर मूल धन और नफ़ा दोनों बर्बाद हो जाएं, बल्कि ऐसा व्यापार करना चाहिए जिसमें नुक़्सान का अंदेशा कभी न हो, जैसा कि ख़ुदा ए क़ुद्दूस फ़रमाता है:

وَ اَنْفَقُوْا مِمَّا رَزَقْنٰهُمْ سِرًّا وَّ عَلَانِيَةً يَّرْجُوْنَ تِجَارَةً لَّنْ تَبُوْرَ، لِيُوَفِّيَهُمْ اُجُوْرَهُمْ وَ يَزِيْدَهُمْ مِّنْ فَضْلِهٖ ـ اِنَّهٗ غَفُوْرٌ شَكُوْرٌ ـ فاطر ع ٤ آيت ٣٠.٢٩

तर्जुमा: और हमारे दिए से जो कुछ हमारी राह में ख़र्च करते हैं पोशीदा और ज़ाहिर, वो ऐसी तिजारत के उम्मीदवार हैं जिसमें हरगिज़ ख़सारा नहीं है, ताकि उनके सवाब उन्हें भरपूर दे और अपने फ़ज़्ल से और ज़्यादा अता करे, बे-शक वह बख़्शने वाला क़दर फ़रमाने वाला है।

इस आयते मुबारका में बताया गया कि सदक़ात-व-ख़ैरात खुल्लम-खुल्ला भी दिए जा सकते हैं और गुप्त तौर पर भी, लेकिन अगर नेक काम किया जाये और शोहरत और सुप्रसिद्धि की ग़रज़ से न किया जाये तो इससे बेहतर कौन सी बात हो सकती है।

إِن تُبْدُوا الصَّدَقَاتِ فَنِعِمَّا هِيَ ۖ وَإِن تُخْفُوهَا وَتُؤْتُوهَا الْفُقَرَاءَ فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ ـ [البقرة ع۷ ۳آيت ۲۷۱]

तर्जुमा: अगर ख़ैरात अलानिया दो तो क्या ही अच्छी बात है और अगर छुपा कर फ़क़ीरों को दो तो ये तुम्हारे लिए सबसे बेहतर है।

क़ुरआने हकीम की इस आयत-ए-करीमा में खुल्लम-खुल्ला और पोशीदा तौर पर सदक़ात के देने का इख़्तियार दिया गया है, इससे यह नहीं समझना चाहिए कि तमाम सदक़ात चाहे नाफ़िला हों या ग़ैर नाफ़िला उसके न देने में सज़ा का हकदार नहीं होगा, बल्कि वाक़िया यह है कि जो शख़्स सदक़ात वाजिबा को नहीं देगा वह सख़्त सज़ा का हकदार होगा।

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِينَ يَبْخَلُونَ بِمَا آتَاهُمُ اللّٰهُ مِن فَضْلِهِ هُوَ خَيْرًا لَّهُم ۖ بَلْ هُوَ شَرٌّ لَّهُمْ ۖ سَيُطَوَّقُونَ مَا بَخِلُوا بِهِ يَوْمَ الْقِيَامَةِ ۗ [آل عمران ع۱۸ آيت ۱۸۰]

तर्जुमा: और जो लोग बुख़ल करते हैं उस चीज़ में जो अल्लाह ने उन्हें अपने फ़ज़्ल से दी है हरगिज़ उसे अपने लिए अच्छा न समझें

बल्कि वह उनके लिए बुरा है, अनक़रीब वह जिसमें बुख़्ल किया था क़ियामत दिन उनके गले का तौक़ होगा।

यानी कुछ लोग अल्लाह की राह में अपने सरमाया और दौलत को ख़र्च नहीं करते और ज़कात की अदाएगी में कमी करते हैं, उनको सख़्त अज़ाब की धमकी दी गई कि यही माल रोज़-ए-महशर उनके गले में अज़ाब का तौक़ बन जाएगा।

एक हदीसे पाक में इस आयत-ए-करीमा की तफ़सीर ख़ुद हुज़ूर ﷺ ने इन अलफ़ाज़ में फ़रमाई:

مَن مَنَعَ زَكوٰةَ مَالِهٖ يصير حيّةً ذَكَراً اَقرَعَ لَهٗ نابانِ فَيطوقُ فِى عُنقِهٖ وَ يَنهَشهٗ و يَدفَعُه اِلىٰ النَّارِ [مدارك التنزيل ج ١ ص ٣١٦ دار الكلم الطيب بيروت]

तर्जुमा: जिसने अपने माल की ज़कात अदा नहीं की तो वो माल (क़यामत के दिन) एक ऐसे साँप में बदल जाएगा जो गंजा होगा और उसके दो दाँत होंगे, उसकी गर्दन में ये साँप तौक़ बन जाएगा, फिर वह उसको नोचेगा और धक्के देकर जहन्नुम तक पहुंचा देगा।

सूरा-ए-तौबा की एक आयत-ए-करीमा में इरशाद फ़रमाया गया कि:

وَالَّذِينَ يَكْنِزُونَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنفِقُونَهَا فِى سَبِيلِ اللهِ فَبَشِّرْهُم بِعَذَابٍ أَلِيمٍ يَوْمَ يُحْمَىٰ عَلَيْهَا فِى نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوَىٰ بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوبُهُمْ وَظُهُورُهُمْ هَٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِأَنفُسِكُمْ فَذُوقُوا مَا كُنتُمْ تَكْنِزُونَ [التوبة ع ٥ آيت ٣٤-٣٥]

तर्जुमा: और वो लोग जो सोना चांदी को जोड़ कर रखते हैं और उसे अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते उन्हें दर्दनाक अज़ाब की ख़ुश-ख़बरी सुना दो, जिस दिन वह जहन्नुम की आग में तपाया जाएगा फिर उससे उनकी पेशानियों, पहलुओं और पीठों को दाग़ा जाएगा(और यह कहा जाएगा) ये वही चीज़ है जो तुम अपनी ज़ातों के लिए जमा करते थे तो अपने जमा किये हुए माल का मज़ा तुम चखो।

इन आयाते मुबारका में सख़्त धमकी के साथ माल जमा करने की मनाही की गई है, जिसका अर्थ यही है कि अगर अल्लाह की अता से तुम्हारे पास दौलत-व-सरमाया है तो तुमको यह तसव्वुर नहीं करना चाहिए कि इसमें किसी दूसरे का हक़ नहीं है और न इस ख़ामख़याली में व्यस्त होना चाहिए कि यह माल-व-दौलत, अपनी मेहनत-व-मशक़्क़त और अपनी दौड़ धूप से हासिल किया है, इसलिए इसमें किसी दूसरे का हिस्सा नहीं है बल्कि हमेशा एक मुसलमान के ज़हन में यह बात बैठी रहनी चाहिए कि उसकी कमाई से बहुत से लोगों के हुक़ूक़ और अधिकार संबंधित हो जाते हैं, इसकी सराहत सूरा-ए-निसा की आयत-ए-करीमा में की गई है:

وَبِالْوَالِدَيْنِ إِحْسَانًا وَبِذِى الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسَاكِينِ وَالْجَارِ ذِى الْقُرْبَىٰ وَالْجَارِ الْجُنُبِ وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْبِ وَابْنِ السَّبِيلِ وَمَا مَلَكَتْ أَيْمَانُكُمْ۔ [النساء ع٦، آية٣٦]

तर्जुमा: और माँ बाप के साथ भलाई करो और रिश्तेदारों, यतीमों, मुहताजों और पास के पड़ोसी और दूर के पड़ोसी और करवट के साथ, मुसाफ़िर अपने ग़ुलाम और बांदी के साथ भी(यानी इन सब के साथ अच्दा व्यवहार करो, ज़रूरत पर उनकी मदद करो, अपना माल उनके ऊपर खर्च करो।)

इस आयत-ए-करीमा में कई किस्म के लोगों के साथ अच्छे व्यवहार का हुक्म हुआ है, इससे यह नहीं समझना चाहिए कि इन सब पर ज़कात ही का माल ख़र्च किया जाए, क्योंकि सूरा-ए-तौबा की एक आयत-ए-करीमा में ज़कात के मसारिफ़ (प्राप्तकर्ता) को गिना दिया गया है।

إِنَّمَا الصَّدَقَاتُ لِلْفُقَرَاءِ وَالْمَسَاكِينِ وَالْعَامِلِينَ عَلَيْهَا وَالْمُؤَلَّفَةِ قُلُوبُهُمْ وَفِي الرِّقَابِ وَالْغَارِمِينَ وَفِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَابْنِ السَّبِيلِ۔ [التوبة ع٨، آية٦٠]

तर्जुमा: ज़कात तो उन्हीं लोगों के लिए है (यानी)मुहताजों, निरे नादारों और जो उसे वसूल कर लाएंगे और जिनके दिलों को इस्लाम से उलफ़त दी जाये और गर्दनें छुड़ाने में और क़र्ज़दारों को और अल्लाह की राह में और मुसाफ़िरों को।

इस आयत-ए-करीमा से साबित हुआ कि सूरा-ए-निसा की आयत ३६ में जो अच्छे व्यवहार और हुस्न-ए-सुलूक का हुक्म हुआ है उससे मुराद यह है कि उन सब पर ज़कात के अलावा दूसरे माल से उनकी सहायता होनी चाहिए।

सूरा-ए-तौबा की एक दूसरी आयत-ए-करीमा में ज़कात की हिक्मत बालिग़ा को बयान किया गया है, इरशादे रब्बानी है:

خُذْ مِنْ أَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمْ وَتُزَكِّيهِم بِهَا وَصَلِّ عَلَيْهِمْ ۖ إِنَّ صَلَاتَكَ سَكَنٌ لَّهُمْ ۗ وَاللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ۔ [التوبہ ع ١٣، آیة ١٠٣]

तर्जुमा: ऐ महबूब उनके माल में से ज़कात वसूल करो जिससे तुम उन्हें सुथरा और पाकीज़ा कर दो और उनके हक़ में दुआए खैर कर दो, बे-शक तुम्हारी दुआ उनके दिलों का चैन है और अल्लाह सुनता और जानता है।

ज़ाहिर है कि मुसलमान अगर ज़कात न अदा करे तो इससे वो नजिस-व-नापाक नहीं होता न उसके दिल में नजासत-व-आलूदगी पाई जाती है, इसलिए आयत-ए-करीमा का खुला हुआ मफ़हूम यह है कि ज़कात के अदा करने से संगदिली, कंजूसी, बेरहमी, कमज़र्फ़ी जैसे दुर्भावनाओं से वह साफ-सुथरा हो जाता है और आत्मा का शुद्धिकरण, तहारते नफ्स और रुजू इला अल-हक़ की तरफ़ स्वभाविक रुझान बढ़ जाता है, लेकिन उसके लिए यह शर्त लाज़िमी है कि दिखावे और रिया से मुक्त हो कर सिर्फ रज़ा –ए-इलाही के लिए ज़कात अदा की जाये।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تُبْطِلُوا صَدَقَاتِكُم بِالْمَنِّ وَالْأَذَىٰ كَالَّذِي يُنفِقُ مَالَهُ رِئَاءَ النَّاسِ وَلَا يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ ۖ فَمَثَلُهُ كَمَثَلِ صَفْوَانٍ عَلَيْهِ

تُرَابٌ فَأَصَابَهُ وَابِلٌ فَتَرَكَهُ صَلْدًا ؕ لَّا يَقْدِرُونَ عَلَىٰ شَيْءٍ مِّمَّا كَسَبُوا ؕ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرِينَ۔ [البقرة: ٢٦٤]

तर्जुमा: ऐ ईमान वालो एहसान जता कर और तकलीफ देकर अपने सदक़े को बातिल न करो, उस शख़्स की तरह जो अपना माल लोगों के दिखावे के लिए ख़र्च करता है और अल्लाह और क़यामत के दिन पर ईमान नहीं रखता तो उसकी अनोखी हालत ऐसी है जैसे एक चट्टान हो, उस पर मिट्टी पड़ी हुई हो, अब उस पर ज़ोर का पानी पड़ा, जिसने उसे निरा पत्थर बना कर छोड़ा (ऐसे लोग) अपनी कमाई से किसी चीज़ पर क़ाबू नहीं पाएँगे और अल्लाह काफ़िरों को राह नहीं देता।

इस आयते मुबारका से ख़ुलूस और निस्वार्थता की उच्च भावना को उभारा गया कि जो कुछ तुम ख़र्च करो सिर्फ रज़ा-ए-इलाही के लिए ख़र्च करो और जिस शख़्स को अपने सदक़े का माल दो उसको एहसान जताकर या तकलीफ पहुंचा कर अपने सदक़े को बर्बाद न करो, क्योंकि जब कोई शख़्स किसी दूसरे पर अपने सदक़े का माल ख़र्च करता है फिर उस पर एहसान जताता या उसको तकलीफ देता है तो ऐसा मुहसिन और दानी उस शख़्स की तरह है जो किसी दूसरे को ख़ुश करने के लिए अपना उपहार या तोहफ़ा पेश करे या उसकी शानदार मेहमान नवाज़ी करे फिर अपनी बद-ख़लक़ियों या तुनक-मिज़ाजी से दिल को ठेस पहुंचा दे, गोया एक तरफ़ वह ख़ुश करता है और दूसरी जानिब उसको लाठी मारता है, क्या कोई शरीफ़ आदमी ऐसा कर सकता है कि मेहमान नवाजी भी करे और मेहमान की पिटाई भी, इसीलिए इस आयत-ए-करीमा में ये भी फ़रमाया गया कि जिस तरह वो दिखावा करने वाली जो ख़ुदा ए क़ुद्दूस और आख़िरत के दिन पर ईमान नहीं रखता जब अपना माल ख़र्च करता है तो अल्लाह की ख़ुशनुदी और आख़िरत के दिन में बदला पाने के लिए नहीं ख़र्च करता है बल्कि

अपनी सख़ावत के इज़हार और दिखावे के लिए ख़र्च करता है, इसलिए वह व्यर्थ चला जाता है, इसी तरह एहसान जताने वाले और तकलीफ पहुंचाने वाले का किया कराया सब बेकार हो जाता है, ख़ुलासा ये है कि अगर किसी मुसलमान के पास दौलत-व-सरमाया हो तो उसको ज़रूर नेक कामों में ख़र्च करना चाहिए और उस दौलत को सिर्फ अपने आप तक सीमित नहीं रखना चाहिए बल्कि उस से दूसरों को भी हिस्सा देना चाहिए।

ऊपर की कुछ आयाते करीमा पर एक नज़र डालने से ज़ाहिर होता है कि अपने ख़र्च को 'ज़कात' की अदाइगी तक सीमित नहीं रखना चाहिए बल्कि दूसरे सदक़ात में भी अपने माल को खर्च करना चाहिए, ये सदक़ा ए वाजिबा तो हर मुसलमान साहिबे निसाब पर लाज़िम है, इसकी अदाइगी में कमी के सबब से बड़े दर्दनाक अज़ाब का सज़ावार हो सकता है, इसलिए कि जितनी धमकी की आयतें "खर्च न करने पर आई हैं उनसे मुराद ज़कात की अदाइगी न करने पर अज़ाब का हकदार होना है, लेकिन सिदक़ा-ए-नाफ़िला या ग़ैर वाजिबा एक किस्म की भलाई और एहसान है, उनके अदा न करने पर ख़ुदा की रहमत-व-रबूबियत से धमकी है कि अपने बंदे को सज़ा का हकदार क़रार दे, अलबत्ता ज़रूर उस जज़्बे को उभारा गया है कि एक मुसलमान की शान ये है कि अपने जैसे मुसलमान के साथ हुस्न-ए-सुलूक और अच्छा बरताव करे।

बहरहाल सदक़ात की दो किस्में हैं :१- सदक़ात-ए-वाजिबा २- सदक़ात-ए-ग़ैर वाजिबा। सदक़ात-ए-वाजिबा को अदा न करने पर बंदे को सज़ा का मुस्तहिक़ क़रार दिया गया है, और सदक़ात-ए-ग़ैर वाजिबा या दूसरे शब्दो में सदक़ात-ए-नाफ़िला को खर्च न करने पर बंदा सज़ा का मुस्तहिक़ नहीं है।

इस मौक़ा पर मुनासिब मालूम होता है कि हुज़ूर अकरमﷺ की अहादीस में सदक़ात व ख़ैरात की जो महानता और फ़ज़ीलत बयान की गई है उनका भी वर्णन कुछ विस्तार के साथ हो जाए, ताकि उन आयाते इलाही की तफ़सीर ख़ुद मुअ़ल्लिमे क़ुरआन के कलाम बलाग़त निज़ाम से हो जाए।

फ़ज़ाइले सदक़ात

1

عَنْ أَبِي سَعِيدٍ، عَنِ النَّبِيِّ صلى الله عليه وسلم قَالَ " أَيُّمَا مُسْلِمٍ كَسَا مُسْلِمًا ثَوْبًا عَلَى عُرْيٍ كَسَاهُ اللهُ مِنْ خُضْرِ الْجَنَّةِ وَأَيُّمَا مُسْلِمٍ أَطْعَمَ مُسْلِمًا عَلَى جُوعٍ أَطْعَمَهُ اللهُ مِنْ ثِمَارِ الْجَنَّةِ وَأَيُّمَا مُسْلِمٍ سَقَى مُسْلِمًا عَلَى ظَمَإٍ سَقَاهُ اللهُ مِنَ الرَّحِيقِ الْمَخْتُومِ "[سنن ابی داؤد کتاب الزکاۃ باب فی فضل سقی الماء ص: 315، دارالفکر بیروت، رقم1682]

तर्जुमा: अबू सईद के बयान के मुताबिक़ सरकार ने इरशाद फ़रमाया जिस मुसलमान ने किसी दूसरे मुसलमान को उसकी नंगे होने में लिबास पहनाया तो अल्लाह उसको जन्नती लिबास से नवाज़ेगा, जिस मुसलमान ने किसी मुसलमान को उसकी भूक की हालत में खाना खिलाया तो अल्लाह उसको जन्नत के फलों से खिलाएगा और जिस मुसलमान ने किसी मुसलमान को उसकी प्यास में पानी पिलाया तो अल्लाह तआला उसको जन्नत के ख़ालिस शराब-ए-तुहूर से सैराब फ़रमाएगा।

इन्सान की बुनियादी जरूरतों में खाना, कपड़ा और पानी है , इन चीज़ों के बग़ैर उसकी ज़िंदगी अजीरन हो सकती है, बल्कि कभी-कभी उसकी ज़िंदगी मौत के घाट पहुंच सकती है, इसीलिए फ़ोक़हा ए किराम ने फ़रमाया है कि कभी-कभी खाना पीना वाजिब हो जाता है, इस कारण हुज़ूर अकरमﷺ ने अपने अनुयायियों की दया भावना को उभारा है कि

तुम्हारी इस्लामी बंधुत्व का तगादा यह है कि अपने किसी भाई को बिना कपड़े न रहने दो, अगर वह भूका है तो उसको खाना खिला कर अल्लाह के फ़ज़्ल और दया के पात्र बन जाओ , अगर वह प्यासा है तो उसकी प्यास बुझा कर शराब-ए-तुहूर के लायक़ हो जाओ, गोया हुज़ूर अकरमﷺमुस्लिमा उम्मा को ये सदुपदेश देना चाहते हैं कि तुम जो कुछ नेकी करोगे उसके बदले और सवाब से महरूम नहीं रहोगे बल्कि जन्नत में तुमको इससे कहीं बेहतर चीज़ें दी जाएँगी, आपने इस हदीस में ये नहीं फ़रमाया कि दुनिया ही में तुमको उसका सिला मिलता रहेगा, क्यों कि दुनिया का कोई बदला, कोई मुआवज़ा आख़िरत के बदला और सवाब से कोई निस्बत नहीं रखता, यहां जितनी भी नेअमत मिले वो सब फ़ानी और ग़ैर बाक़ी हैं, बाकी रहने वाली राहत-व-सुरूर तो जन्नत की नेअमतों में है।

2

عن ابن مسعود –رضي الله عنه– قال: قال رسول الله –صلى الله عليه وسلم–: «لا حَسَدَ إلا في اثنتين: رجل آتاه الله مالا، فسَلَّطَه على هَلَكَتِهِ في الحَقِّ، ورجل آتاه الله حِكْمَةً، فهو يقضي بها ويُعَلِّمَها[صحيح البخاری باب انفاق المال فی حقه ج 1 ص ، 189رقم1409 ، قدیمی کتب خانه کراچی]

तर्जुमा: हज़रत इब्ने मसऊद ने हुज़ूर अकरमﷺको फ़रमाते हुए सुना"हसद सिर्फ दो आदमियों से किया जा सकता है :एक ऐसा शख़्स जिसको अल्लाह तआला ने माल दिया फिर उसको राह-ए-हक़ में बे दरेग़ ख़र्च करने का हौसला अता फ़रमाया, दूसरा वह शख़्स जिसको अल्लाह तआला ने इल्म-व-दानिश से नवाज़ा तो उस से वह फ़ैसला करता है और उसकी तालीम देता है।

हसद एक बुरी बात है, क्योंकि यह दूसरे की नेअमत के अवनति की कामना का नाम है, इसके अंदर एक तत्व यह भी शामिल है कि उस

नेअमत की ख़्वाहिश अपने लिए करे और इन्सान की हर ख़्वाहिश पूरी हो जाए, ये असंभव है, इसलिए ईर्ष्या की भावना से ख़्वाह-मख़ाह के लिए ईर्ष्या करने वाला एक दर्दनाक अज़ाब में गिरफ़्तार रहता है, जब यह भावना हद से बढ़ जाती है तो ईर्ष्या किये जाने वाले की सारी खूबियां ईर्ष्या करने वाले की निगाह में बुराईयों की शक्ल में नज़र आती हैं, उसकी ख़ूबी-व-कमाल के बयान से उस बदनसीब को दिली तकलीफ पहुंचती है, अगर उसके अच्छे स्वभाव और सज्जनता का बयान हो तो ये तुच्छ अपनी ईर्ष्या और जलन की आग से जल उठता है, इसलिए ज़ाहिर है कि ऐसी बुरी चीज़ की प्रसंशा ज़बाने नबुव्वत से नहीं हो सकती, फिर इस हदीस पाक का क्या मफ़हूम है? शारहीन-ए-हदीस फ़रमाते हैं कि इस हदीस पाक में अगरचे लफ़्ज़ हसद का इस्तेमाल किया गया है मगर वो अपने प्रचलित अर्थ में नहीं है, बल्कि इससे 'रश्क' मुराद लिया गया है, अब हदीस का मफ़हूम ये है कि अगरचे दुनिया में विभिन्न प्रकार के साहिबे कमाल और निपुण पाए जाते हैं, जिनकी ज़ाहिरी हालत को देखकर रश्क किया जा सकता है, कोई साहित्य और भाषा विज्ञान का माहिर है , कोई शायरी और कविता की कला में अपनी निपुणता का प्रदर्शन करता है, कोई सुलेखकला में ऊंचे स्था पर विराजमान है, कोई किसी हुनर में अति उत्तम नज़र आता है, मगर ये सब इस लायक़ नहीं हैं कि एक बुलंद नज़र इन्सान उसको ख़ातिर में लाए, यानी उनसे रश्क करे, हाँ सिर्फ दो किस्म के इन्सान ऐसे हैं जो इस काबिल हैं कि उन पर रश्क किया जाये, एक ऐसा मालदार जो अपनी दौलत को बे दरेग़ राह-ए-हक़ में खर्च कर रहा हो, दूसरा वह शख़्स जो इलम और ज्ञान से सुसज्जित किया गया हो और अपने इल्म के अनुसार अमल करके हक़ फ़ैसला सादिर करता हो, और ज्ञान के प्रचार में अपने क़ीमती समय खर्च करता हो, यानी मालदार और आलिम इस लायक़ हैं कि उनसे रश्क किया जाये।

3-

وعن أبي هريرة قال: قال رسول الله ﷺ: سَبْعَةٌ يُظِلُّهُمُ اللهُ في ظِلِّهِ يَوْمَ لا ظِلَّ إِلَّا ظِلُّهُ: إمامٌ عادِلٌ، وشابٌّ نَشَأَ في عِبادَةِ اللهِ تَعالى، وَرَجُلٌ قَلْبُهُ مُعَلَّقٌ في المَسَاجِدِ، وَرَجُلانِ تَحَابًّا في اللهِ: اجتَمَعا عَلَيهِ، وتَفَرَّقا عَلَيهِ، وَرَجُلٌ دَعَتْهُ امْرَأَةٌ ذَاتُ مَنْصِبٍ، وَجَمالٍ فَقالَ: إِنِّي أَخافُ اللهَ، ورَجُلٌ تَصَدَّقَ بِصَدَقَةٍ فأَخْفَاها، حتَّى لا تَعْلَمَ شِمالُهُ مَا تُنْفِقُ يَمِينُهُ، ورَجُلٌ ذَكَرَ اللهَ خالِيًا فَفَاضَتْ عَيْنَاهُ متفقٌ عَلَيْهِ[صحيح البخارى باب الصدقة باليمين ج١ ص ١٩١، قديمى كتب خانه كراچى]

तर्जुमा: हज़रत अबूहुरैरा की रिवायत के मुताबिक़ सरकार ने फ़रमाया कि सात किस्म के इन्सान ऐसे हैं कि अल्लाह तबारक-व-तआला उनको अपनी रहमत के छाया में रखेगा जिस दिन अल्लाह के साया-ए-रहमत के सिवा कोई साया ना होगा,(१) न्यायप्रिय हाकिम (२)ऐसा जवान जिसका विकास अल्लाह की इबादत में होती रही (३)एक ऐसा व्यक्ति जिसका दिल मस्जिद में लगा रहे (४)दो ऐसे आदमी जिन्होंने एक दूसरे से अल्लाह के लिए मुहब्बत की हो और अल्लाह ही की मुहब्बत में इकट्ठा होते हों और जुदा होते हों (५)एक ऐसा शख़्स जिसको किसी औरत ने बुरी नीयत से जो हुस्न-व-जमाल और हसब-व-नसब वाली थी अपने पास बुलाया तो उसने कहा कि मैं अल्लाह से डरता हूँ (६)ऐसा आदमी जो सदक़ा छुपा कर दे यहां तक कि उसका बायां हाथ न जान सके कि दायाँ हाथ क्या ख़र्च कर रहा है (७)एक ऐसा व्यक्ति जो अकेले में अल्लाह को याद करे तो ख़शीयत इलाही (अल्लाह के डर)से उसकी आँखें अश्क-बार हो जाएं।

इस हदीस पाक में सात किस्म के इन्सानों की फ़ज़ीलत बयान की गई है कि वो क़ियामत के दिन रब ज़ुलजलाल के क़हर-व-जलाल के

जाहिर होने के वक़्त उसके साया-ए-रहमत में रहेंगे उनमें सदक़ा देने वाले को भी शामिल फ़रमाया गया, इसलिए अगर किसी शख़्स की यह तमन्ना-व-ख़्वाहिश हो कि ख़ुदा ए पाक के जलाल के वक़्त क़यामत की धूप से अपने को महफ़ूज़ रखे तो उसको अच्छी नीयत के साथ सदक़ा करना चाहिए।

4-

عَنِ الْحَسَنِ ، قَالَ : قَالَ رَسُولُ اللّٰہِ صَلَّى اللّٰہُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ : حَصِّنُوا أَمْوَالَكُمْ بِالزَّكَاةِ ، وَدَاوُوا مَرْضَاكُمْ بِالصَّدَقَةِ ،رواہ ابو داؤد۔[فتاوی رضویہ ج۴ص ۴۳۴ مکتبہ رضویہ کراچی]

तर्जुमा: हज़रत हसन से मर्वी है कि सरकार ने फ़रमाया कि अपने मालों की ज़कात अदा करके उनकी सुरक्षा करो और सदक़ा देकर अपने मरीज़ों का ईलाज करो।

इस हदीस पाक से दो अहम बातें मालूम हुई एक यह कि अगर कोई शख़्स अपने माल की ज़कात अदा करता रहे तो उसका माल इस तरह सुरक्षित हो जाएगा कि वह गोया एक मज़बूत क़िला के अंदर रखा हुआ है जो किसी तरह से बर्बाद नहीं हो सकता, न चोर उसको चुरा सकता है न किसी दूसरे सबब से उसको कोई ख़तरा हो सकता है, यानी वो अल्लाह की हिफ़ाज़त और रक्षा में रहेगा कि वह उसके बर्बाद होने की तमाम राहों को बंद फरमा देगा, दूसरे ये कि अगर कोई शख़्स मरीज़ हो और दवा ईलाज से ठीक होने की संभावनाऐं मंद पड़ गई हों तो उसकी तरफ़ से उसके अभिभावक को सदक़ा करना चाहिए, इससे सच्ची निरोगता प्रदान करने वाले की तरफ़ से शिफ़ायाबी की उम्मीदें लगाई जा सकती हैं।

5-

عن أبي موسى الأشعري ،عن النبي ﷺ قال: على كل مسلم صدقة،فقالوا:یانبی اللہ !فمن لم يجد ؟قال: يعمل بيده فينفع

نفسه ويتصدق ،قال: أرأيت إن لم يستطع؟ قال: يعين ذا الحاجة الملهوف قال: أرأيت إن لم يستطع، قال: يأمر بالمعروف أو الخير. قال: أرأيت إن لم يفعل؟ قال: يمسك عن الشر، فإنها صدقة-[بخاری شریف،ج ا،کتاب الزکوۃ،رقم الحدیث ۱۴۴۵]

तर्जुमा: हज़रत अबू मूसा अशअरी की रिवायत के मुताबिक़ सरकार ने फ़रमाया कि हर मुसलमान पर सदक़ा लाज़िम है, सहाब-ए-किराम ने अर्ज़ किया कि ऐ अल्लाह के रसूल जो सदक़ा करने के लिए कुछ न पाए फिर वह कैसे सदक़ा करे ?तो सरकार ने फ़रमाया कि अपने हाथ से काम करके यानी कमा कर ख़ुद अपनी ज़ात को फ़ायदा पहुंचाए और सदक़ा करे, इस पर अर्ज़ किया गया कि अगर ये भी न हो यानी काम करने की ताकत न रखता हो तो फिर क्या करे ?आप ﷺ ने फ़रमाया कि किसी मुहताज, मदद के तलबगार की मदद करे, लोगों ने कहा कि अगर ये भी संभव न हो तो? तो आपने फ़रमाया कि अच्छा काम करे और बुराईयों से अपनी ज़ात को दूर रखे यही उसकी तरफ से सदक़ा है।

सदक़ा का अर्थ सामान्यत: यह ख़्याल किया जाता है कि किसी निर्धन और नादार को अपने माल का कुछ हिस्सा दे दे, लेकिन हुज़ूर ﷺ ने इस के मतलब में बड़ी व्यापकता पैदा कर दी, यहां तक कि अगर कोई शख़्स किसी मज़लूम की मदद कर दे और ज़ालिम की ज़ालिमाना हरकतों से पीड़ित को सुरक्षित कर दे तो इसको भी सदक़ा में दाख़िल फ़रमाया, बल्कि इससे आगे बढ़कर आपने नेक काम करने और अपनी ज़ात को बुराईयों से सुरक्षित रखने को भी सदक़े के मफ़हूम में शामिल फ़रमाया, क्या अब किसी के लिए यह गुंजाइश रह गई कि वह सदक़ा से भाग सके? क्या किसी इन्सान के अंदर इतनी भी ताक़त नहीं है कि वह अच्छा काम करे? यानी अपनी ज़बान से किसी को नेकी का हुक्म दे? और किसी को बुराई से रोके? और ख़ुद अपनी ज़ात को बुराईयों से महफ़ूज़ रखे? निसंदेह हर व्यक्ति के अंदर इतनी बात की ताक़त है कि

वह बुराई न करे, फिर वह सदक़ा के सवाब का ज़रूर हक़दार होगा, ख़ुलासा ये है कि सदक़े के अर्थ में इतनी व्यापकता है कि अब किसी को ये कहने का हक़ नहीं रह गया कि मैं कैसे सदक़ा करूँ? जबकि मैं निर्धन और गरीब हूँ।

5-

عن ابی ذر قال :انتهیت الیٰ النبی ﷺ و هو جالس فی ظل الكعبة، فلما رآنی قال :هم الاخسرون و رب الكعبة، فقلتُ : فِدَاكَ اَبِی و اُمی مَن هُم ،قالَ :هُمُ الاكثرونَ، الا مَن قال: هكذا وهكذا من بينِ اَيدِيهِ وَ مِن خَلفِهٖ وَ عَن يَمينهٖ و عن شمالهٖ و قليل ماهم ۔]مشكوٰۃ شريف ج١ ص ١۶۴ مجلس بركات مبارک پور[

तर्जुमा :हज़रत अबूज़र ग़ेफ़ारी ने कहा कि मैं सरकार दो-आलम ﷺकी ख़िदमते अक़्दस में हाज़िर हुआ और आप काबा शरीफ़ के साये में बैठे हुए थे, फिर जब मुझको देखा तो आपने फ़रमाया कि काबा के रब की क़सम वो लोग बहुत नुक़्सान उठाने वाले हैं, मैंने अर्ज़ की आप पर मेरे माँ बाप फ़िदा हों, वो कौन लोग हैं? तो आपने फ़रमाया वो वह लोग हैं जिन के पास माल-व-दौलत की बहुतायत है सिवाए जो ऐसा ऐसा करे यानी अपने सामने पीछे, दाएं, बाएं, अपने माल को लुटाए, हाँ ऐसे लोग बहुत थोड़े हैं।

इस हदीस से साबित हुआ कि अल्लाह तआला ने अपने जिस बंदे को धन-दौलत से ख़ूब ख़ूब नवाज़ा है अगर उसने अच्छे काम में अपना माल खर्च न किया तो अंतत: वह नाकाम और असफल होगा और आख़िरत में उसको बड़े दुर्भाग्य का सामना करना पड़ेगा।

सच्चे, अमानतदार हुज़ूर अकरम ﷺ के इन इर्शादात-ए-आलीया से सदक़ा की अहमियत का अंदाज़ा किया जा सकता है और उसकी फ़ज़ीलत और श्रेष्ठता को महसूस करके अपने मजबूर-व-लाचार भाई

की दस्तगीरी से इन्सानियत और भलमनसाहत का ऊँचा स्थान हासिल किया जा सकता है और जब इस तरह समाज-व-मुआशरे में मानवता का जोश पैदा हो जाएगा तो फिर कैसे संभव है कि उसके लोग बे-यार-व-मददगार हो कर संगदिली और बेरहमी का शिकार हो जाएं यानी उनकी ज़रूरतें, हाजतें पूरी न हों और उनको दूसरे के सामने हाथ फैलाना पड़े कि वह दूसरा उसको क़र्ज़ दे और उससे ज़्यादा रक़म ''सूद'' वसूल करे, यानी अगर पूर्ण रूप से सदक़ात-व-ख़ैरात की दया भावना उभर कर सामने आ जाए तो ख़ुद ब ख़ुद सूद की लानत से रिहाई हासिल हो जाएगी, यही वजह है कि नबी-ए-करीम ﷺ ने अगर एक तरफ़ सूद की निंदा और उसका हराम होना निहायत बलीग़ और प्रभावशाली शब्दों में बयान फ़रमाया तो दूसरी तरफ़ अपने अनुयायियों को विभिन्न शैली से सदक़ात-व-ख़ैरात का शौक़ दिलाया और ज़कात का निज़ाम क़ायम करने का हुक्म (दौलत के पुजारियों के धन के हवस से मुसलमानों को सुरक्षित करने के लिए)दिया।

ज़कात प्रबंधन का हुक्म

عن ابن عباس -رضي الله عنهما-: أن رسول الله -صلى الله عليه وسلم- لما بعث معاذا إلى اليمن فقال: "إنك تأتي قوما أهل الكتاب، فليكن أولَ ما تدعوهم إليه شهادة أن لا إله إلا الله" -وفي رواية: "إلى أن يوحدوا الله-، فإن هم أطاعوك لذلك فأعلمهم أن الله افترض عليهم خمس صلوات في كل يوم وليلة، فإن هم أطاعوك لذلك فأعلمهم أن الله افترض عليهم صدقة تؤخذ من أغنيائهم فَتُرَدُّ على فقرائهم، فإن هم أطاعوك لذلك فإياك وكَرَائِمَ أموالِهِم، واتق دعوة المظلوم فإنه ليس بينها وبين الله حجاب)." صحیح البخاری باب وجوب الزکاۃ ج١ص١٨٧، رقم١٤٩٦، قدیمی کتب خانہ کراچی) (صحیح مسلم ج ١ ، باب الدعاءالی الشهادتین و شرائع الاسلام،رقم ١٩]

तर्जुमा: हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास से रिवायत है कि हुज़ूर ﷺ ने मआज़ बिन जबल को यमन का हाकिम बना कर भेजा तो आपने फ़रमाया तुम ऐसी क़ौम के पास जा रहे हो जो अहल-ए-किताब है, पहले उनको इस बात की गवाही की तरफ़ बुलाओ कि अल्लाह के सिवा कोई पूजनीय नहीं है और मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं ﷺफिर अगर वो इस बात को मान लें तो उनको बताओ कि अल्लाह तआला ने दिन रात में उन पर पाँच नमाज़ें फ़र्ज़ की हैं, अगर वो इसका भी पालन करलीं तो उनको बताओ कि अल्लाह ने उन पर ज़कात फ़र्ज़ की है जो उनके मालदारों से वसूल की जाएगी और उनके मुहताजों पर लौटा दी जाएगी और, अगर इस बात की भी फ़र्मांबरदारी कर लें तो तुम उनके श्रेष्ठ धन कों वसूल करने से बचना और मज़लूम की बद्दुआ से डरते रहना क्योंकि उसके दरमयान और अल्लाह के दरमयान कोई पर्दा नहीं है।

इस फ़रमाने रसूल से निम्न बातों पर रोशनी पड़ती है:

क- इस्लामी अहकाम-व-अक़ाइद (निर्देशों और आस्थाओं) के प्रचार व प्रसार में आहिस्तगी की रणनीति अपनानी चाहिए, शरीयत इस्लामी के फ़राइज़-व-ज़िम्मेदारीयों को एक साथ नहीं पेश करना चाहिए, एक साथ तमाम इस्लामी निर्देशों को नौ मुस्लिमों या जाहिलों पर पेश करके उनको उलझन में नहीं डालना चाहिए।

ख- ज़कात की वसूली मुसलमानों का व्यक्तिगत काम नहीं है बल्कि ये एक सामूहिक काम है जिसकी ज़िम्मेदारी इस्लामी रियासत के ऊपर है और हाकिम-ए-वक़्त पर लाज़िम है कि ज़कात की वसूली के लिए एक व्यवस्था स्थापित करे फिर ज़कात के हक़दारों पर उसको बाँट दे, ऐसा नहीं होना चाहीए कि ग़रीब निर्धन या जो ज़कात के हक़दार हैं ख़ुद उसकी वसूली करें बल्कि इस्लामी रियासत का मुखिया कर्मचारियों की नियुक्ति करके वसूली करवाए और वह ग़रीबों और

नादारों पर विभाजित करे क्योंकि वही मुहताजों की जरूरतों के पूरी करने का ज़िम्मेदार है।

ग- ज़कात की वसूली में संतुलित और मध्यम मार्ग पकड़ना चाहिए, ज़ोर ज़बरदस्ती से अच्छी अच्छी चीज़ों को ज़कात या उश्र में लेना जायज़ नहीं है, बल्कि औसत दर्जे की चीज़ों को ज़कात में लेना चाहिए, मसलन कोई कर्मचारी या अधिकारी किसानों से उश्र वसूल कर रहा हो तो उसके लिए जायज़ नहीं है कि उम्दा किस्म का गेहूँ ले-ले और ख़राब किस्म का गेहूँ किसानों के लिए छोड़ दे।

وَعَنْ أَبِي هُريرةَ قالَ: لَمَّا تُوُفِي رَسُولُ اللهَّ ﷺ، وَكانَ أَبُو بَكْر، وَكَفَرَ مَنْ كَفَرَ مِنَ العربِ، فَقَالَ عُمرُ : كَيفَ تُقَاتِلُ النَّاسَ وَقدْ قَالَ رسُولُ اللهَّ ﷺ: أُمِرتُ أَنْ أُقاتِلَ النَّاسَ حتَّى يَقُولُوا لاَ إِلهَ إِلاَّ اللهَّ فَمَنْ قَالهَا، فقَدْ عَصَمَ مِني مَالَهُ وَنَفْسَهُ إِلاَّ بِحَقِّه، وَحِسَابُهُ عَلى اللهَّ؟ فَقَالَ أَبُو بَكْر: واللهَّ لأُقَاتِلَنَّ مَنْ فَرَّقَ بَيْنَ الصَّلاةِ والزَّكاةِ، فإِن الزَّكَاةَ حَقُّ المَالِ. واللهَّ لَو مَنعُوني عِقَالاً كانَوا يُؤَدونَهُ إِلى رَسُولِ اللهَّ ﷺ لَقَاتَلْتُهُمْ عَلَى منعِه، قَالَ عُمرُ : فَوَاللهَّ مَا هُو إِلاَّ أَن رَأَيتُ اللهَّ قَدْ شَرَحَ صَدْرَ أَبِي بَكْرٍ للقِتَالِ، فَعَرفْتُ أَنَّهُ الحَقُّ. مُتفقٌ عَلَيْهِ[بخارى شريف ج١، كتاب الزكوة، رقم١٣٩٩

صحيح مسلم، كتاب الايمان، ج ١، رقم ٢٨]

तर्जुमा: हज़रत अबू हुरैरा ने बताया कि जब सरकार दो-आलम ﷺ वफ़ात पा गए और अबू बकर उनके ख़लीफ़ा हुए और अरब में से कुछ लोगों ने कुफ़्र की राह इख़तियार की यानी इस्लाम से मुर्तद हो गए, तो हज़रत अबू बकर ऐसे मुर्तदों से युद्ध के लिए तैयार हो गए, इस पर हज़रत उमर ने कहा कि आप कैसे युद्ध करेंगे, हालांकि रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया है कि लोगों से मुझको जंग का हुक्म दिया गया है, यहां

तक कि ला-इलाह इल-लल्लाह कहें, फिर जिस शख़्स ने उसे कह लिया उसका माल उसकी ज़ात मुझसे महफ़ूज़ हो गई, मगर ये कि शरई हक़ उसके ऊपर वाजिब हो जाए और उसका हिसाब अल्लाह के यहां होगा, तो हज़रत अबू बकर सिद्दीक़ ने फ़रमाया कि बख़ुदा ज़रूर ऐसे लोगों से क़िताल करूँगा जिन्होंने नमाज़ और ज़कात के दरमयान फ़र्क़ किया है, क्योंकि ज़कात माल का हक़ है, बख़ुदा अगर उन्होंने बकरी के ऐसे बच्चे को रोक लिया जिसे वो ज़कात में सरकार को देते थे तो उसके रोक लेने पर भी मैं उनसे जिहाद करूँगा, फ़ारूक़ आज़म ने कहा कि इस बात के लिए बख़ुदा अबू बकर के सीने को अल्लाह तआला ने खोल दिया और मुझे भी ज्ञान हासिल हो गया कि ये बात हक़ है।

इस हदीस पाक से यह बात प्रमाणित हो गई कि अगर कोई शख़्स इनकार करके इस्लामी रियासत को ज़कात अदा न करे तो वह इस्लाम का मुनकिर हो गया, ऐसे लोगों से जिहाद करना इस्लामी रियासत का कर्तव्य हो जाता है, क्योंकि उनकी जान माल अब महफ़ूज़ नहीं रह गए, इसी से यह बात भी साबित हो गई कि इस्लामी हुकूमत पर लाज़िम है कि ज़कात की व्यवस्था स्थापित करे क्योंकि ज़कात-व-उश्र वग़ैरा को हासिल करने का काम इस्लामी हुकूमत ही के ज़िम्मे है, अगरचे व्यक्तिगत तौर पर ज़कात के अदा करने से उसके फ़रीज़े से अदा होने में कलाम नहीं किया जा सकता फिर भी वो महान उद्देश्य जो ज़कात-व-उश्र की वसूली से हासिल हो सकते हैं व्यक्तिगत तौर पर अदा करने से हासिल न होंगे।

इन तमाम तशरीहात-व-तफ़सीलात से दो बातें खुल कर सामने आयीं:

हर मुसलमान साहिब इस्तिताअत को राह-ए-ख़ुदा में अपना माल खर्च करना चाहिए।

सदक़ात-व-ख़ैरात, ज़कात-व-उश्र वाजिबात-ए- मालिया व ग़ैर वाजिबात को वसूलने की व्यवस्था स्थापित करना चाहिए और उनको उन खर्चों में इस्लामी रियासत ख़र्च करे जिनकी व्याख्या क़ुरआने हकीम में की गई है और जिनके जज़ईआत (प्रसंगों) की तफ़सीलात फ़िक़्ह इस्लामी की किताबों में मौजूद है।

लेकिन अफ़सोस का मुक़ाम यह है कि व्यक्तिगत तौर से ज़कात-व-सदक़ात वग़ैरा की अदाइगी होती है मगर कोई सामूहिक व्यवस्था करने की कोशिश नहीं की जाती न कोई बैत-उल-माल क़ायम किया जाता है जिसमें ज़कात की रक़म दी जाये, अगरचे इस्लामी हुकूमत भारत में नहीं पाई जाती है फिर भी मुसलमान व्यवस्थित हो कर अगर उसकी व्यवस्था करें तो इसकी राह में ग़ैर मुस्लिम हुकूमतें रुकावट नहीं डालेंगी।

दुनिया में ख़ुदा जाने कितनी कल्याणकारी संस्थाएं काम कर रही हैं, कहीं विकलांगों की मदद के लिए संगठन स्थापित हैं, कहीं यतीमों की शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए पूर्ण व्यवस्था के साथ संस्थाएं काम कर रही हैं कहीं बीमारों और मरीज़ों के ईलाज मुआलजा के लिए अस्पताल क़ायम कर दिए गए हैं, कहीं जंग के ज़ख़्मियों और बीमारों की देख-भाल के लिए प्रबंध किया गया है, दंगा पीड़ित या आसमानी आफ़तों में जो लोग घिर गए हों उनकी राहत पहुंचाने के लिए कमेटियां क़ायम कर दी गई हैं, ये सब काम वो लोग कर रहे हैं जिनका इस्लाम से दूर का भी संबंध नहीं है बल्कि वाक़िया ये है कि ये लोग इस्लाम के मुख़ालिफ़ों और इस के मुआनिदों की टोली में शामिल हैं, उनका दावा ये है कि हम लोग इन्सानियत की ख़िदमत करते हैं, लेकिन इतनी बात प्रमाणित है कि उनकी नज़र में मौत के बाद ज़िंदगी नहीं होती, न ये सब ख़ौफ़-ए-ख़ुदा और ख़ौफ़ आख़िरत रखते हैं, जिससे उनकी नीयतों में इख़लास

पैदा हो जाएगी, बल्कि ये लोग जो कुछ भी करते हैं सिर्फ नाम-व-नमूद और दुनिया में अपनी यादगार क़ायम करने के लिए करते हैं।

इन तमाम कल्याण कारी को मुसलमानों को करना चाहिए था, क्योंकि अल्लाह और उसके रसूल के फ़रमान के मुताबिक़ हर मालदार मुसलमान पर न सिर्फ ये लाज़िम है कि अपने माल का एक हिस्सा ख़ैर के कामों में खर्च करे बल्कि उसके हक़ में यह भी बेहतर है कि सदक़ात-व-ख़ैरात से अपने मुसलमान भाई की मदद करे, इसलिए ज़रूरी है कि मुसलमान निज़ाम-ए-ज़कात-व-ख़ैरात बरपा करें ताकि ग़रीबों की ख़ातिर-ख़्वाह मदद हो सके और लाचारों और मजबूरों की ज़िंदगी को हलाकत से बचाने के लिए कोई पर्याप्त इंतिज़ाम हो सके, अगर मुसलमान सिर्फ इतना काम करते कि ज़कात का निज़ाम उसकी ठोस बुनियादों पर स्थापित करते तो सूदी कारोबार या लेन-देन की जड़ ख़ुद ही कट जाती, सूद चाहे व्यवसायिक कामों के लिए लिया जाये या खेती की जरूरतों के लिए इन सबकी बुनियाद यही है कि इस तेज़ रफ़्तार तरक़्क़ी के दौर में सूद लिए दिए बग़ैर मुसलमानों की ज़रूरतें कैसे पूरी हों, पूर्ण विश्वास और पूरे खुले मन के साथ निवेदन करता हूँ कि अगर सही ढंग से ज़कात व सदक़ात और उश्र वग़ैरा की व्यवस्था कर दी जाए और मुस्लिम जमात का हर व्यक्ति अपनी क़ौमी ज़रूरत का एहसास रखे तो मुसलमानों को दुनिया के सूदी संस्थाओं पर निगाह डालने की आवश्यकता नहीं होगी, उनकी सारी ज़रूरतें उनके क़ौमी इदारे या बैत-उल-माल से पूरी हो जाएंगी, हाँ इस व्यवस्था का प्रबंध करने के लिए बड़े दिल गुर्दे की ज़रूरत है, मुख़लिस कारकुनों की फ़ौज से बड़े इन्क़िलाब की राहें खोली जा सकती हैं, हमको हर जगह पर खराब व्यवस्था से टक्कर लेनी पड़ेगी और अपनी जाँबाज़ी और जाँ-सिपारी से हमको ये साबित करना होगा कि हम दुनिया की ज़िंदगी को कोई

हैसियत नहीं देते, हम कम-नज़र नहीं बल्कि बुलंद निगाह रखते हैं, हमारी निगाह में सिर्फ आख़िरत की ज़िंदगी क़दर-व-क़ीमत रखती है।

बहर हाल अब मुनासिब समझता हूँ कि कुछ फ़िक़ही निर्देश और प्रसंग ज़कात से संबंधित पेश कर दिए जाएं ताकि हमारे सम्मनित पाठक की निगाह में ये बात रहे कि जो कुछ ज़कात की अदाइगी हो रही है या जिस अंदाज़ से हो रही है वो सही ढंग से हो।

मसाइले ज़कात

इस्लाम में ज़कात अल्लाह की रज़ा की नीयत से किसी मुसलमान फ़क़ीर को अपने माल में से निर्धारित हिस्सा के मालिक बना देने का नाम है, लेकिन ज़कात की रक़म हाशमी को नहीं दी जा सकती, न शौहर अपनी बीवी को, न बीवी अपने शौहर को, न कोई शख़्स अपनी औलाद यानी बेटा, बेटी, पोता, पोती वग़ैरा को दे सकता है, बल्कि उनकी मदद और सहायता अपने निजी माल से करना होगी।

(रद्दुलमुख़्तार जिल्द:३ पेज: १७०-१७१ दारो आलिमिलकुतुब)

ज़कात की अदाइगी में मालिक बनाना शर्त है, इसका मतलब ये है कि जिसको ज़कात अदा की जाये उसको मालिक बना कर उसको उस पर क़ब्ज़ा दे दिया जाये। (अलदुर्रुल मुख़्तार किताब अलज़कात जिल्द: २, पेज: ९)

अगर कोई माल गुम हो जाए या नदी में डूब जाए या किसी के पास बतौर अमानत वह माल रखा हुआ था और वो अंजान आदमी था, याद नहीं आ रहा है कि वो कौन शख़्स था या किसी शख़्स के ज़िम्मे क़र्ज़ था और कर्ज़दार देने से इनकार कर रहा है और उसके पास कोई गवाह भी नहीं है और उन तमाम सूरतों में माल मिल जाये तो पिछले वर्षों की ज़कात वाजिब ना होगी। (तनवीरुल-अबसार जिल्द: २ पेज: ९ , रद्दुलमुहतार, जिल्द: ३ पेज: १८३ , दारो आलिमिल कुतुब)

अगर किसी मुसलमान आदमी पर क़र्ज़ हो और वो इस क़र्ज़ का इक़रार कर रहा हो मगर अदा में देरी कर रहा है या वो नादार हो गया है या क़ाज़ी के यहां उसके दीवालिया होने का फ़ैसला हो चुका है या वो

नकार रहा है मगर क़र्ज़ख़्वाह के पास गवाह मौजूद हैं तो इन तमाम सूरतों में जब माल मिल जाये तो गुज़रे हुये वर्षों की भी ज़कात वाजिब होगी। (हवाला साबिक़ , पेज: १८४)

अगर कोई शख़्स साहिबे निसाब हो लेकिन उसके ऊपर इतना क़र्ज़ है कि क़र्ज़ की अदाइगी के बाद निसाब बाक़ी नहीं रहेगा तो उसके ऊपर ज़कात वाजिब नहीं है। (ऐज़न)

ज़कात उस माल में वाजिब होती है जो निसाब को पहुंच जाए और हाजते असलीया से ज़ायद हो, हाजत असलीया उस हाजत को कहते हैं जिसकी तरफ़ आदमी ज़िंदगी बसर करने में मुहताज हो यानी हाजत असलीया वाली चीज़ों में चाहे वो कितनी क़ीमती हों ज़कात वाजिब नहीं है, जैसे रहने के मकान, चाहे कितने ही क़ीमती-व-आलीशान और करोड़ों की मालियत के हों, जाड़े और गर्मी में पहनने के कपड़े , घर के सामान मेज़, कुर्सी वग़ैरा, सवारी के जानवर, जंग के हथियार, कलाकारों और पेशावरों के औज़ार, अह्ले इल्म की ज़रूरत की किताबें, खाने के गल्ले ये सब ज़रूरत असलीया में शामिल हैं, उनमें ज़कात वाजिब नहीं।

(रद्दुलमुहतार, जिल्द: ३ पेज: १८३ , दारो आलिमिल कुतुब)

अह्ले इल्म के लिए लाखों रुपये की किताबें हाजते असलीया में दाख़िल हैं और ग़ैर आलम के पास भी किताबें हों तो उनमें भी ज़कात वाजिब न होगी जब तक कि व्यापार के लिए ना हों, फ़र्क़ इतना है कि अह्ले इल्म के पास इन किताबों के इलावा अगर कोई माल बक़दर निसाब न हो तो उसको ज़कात जायज़ है और ग़ैर अह्ले इल्म के लिए नाजायज़ है जबकि उसके पास दो सौ दिरहम की क़ीमत की किताबें हों।

(रद्दुलमुहतार जिल्द: ३ पेज १८७, मतबा साबिक़)

मोती और जवाहर पर ज़कात वाजिब नहीं है, अगरचे लाखों की मालियत के हों, हाँ अगर व्यापार की नीयत से हों तो ज़कात वाजिब हो जाएगी, दुर्रे मुख़्तार और तनवीर उल-अबसार में है:

لا زکوٰۃ فی اللآلی والجواھر و ان ساوت الفاً اتفاقاً الا ان تکون للتجارۃ والاصل ان ماعداالحجرین والسوائم انما یزکی بنیۃ التجارۃ[تنویرالابصار ج۲ ص ۱۴]

मोती और जवाहर में ज़कात नहीं, अगरचे वो हज़ारों की मालियत के हों, इस पर इमामों की सहमति है, मगर ये कि व्यापार के लिए हों, क़ायदा कुल्लिया ये है कि सोना चांदी और सवाइम के अलावा में सिर्फ व्यापार की नीयत से ज़कात दी जाएगी।

व्यापार के माल या सोना चांदी को साल के बीच में अपनी जिन्स या ग़ैर जिन्स से बदल लिया तो इस वजह से साल गुज़रने में कमी ना होगी, यानी होलान-ए- हौल का शुमार तबदीली के पहले वाले वक़्त से होगा, मसलन किसी शख़्स के पास सौ तौला चांदी थी, दरमयान साल में छः महीना गुज़रने के बाद इस चांदी को सोने से बदल लिया, अब अगर ये कहे कि इस सोने पर जब साल गुज़रेगा तो ज़कात वाजिब होगी तो उसकी बात तस्लीम नहीं की जाएगी और साल गुज़रने का हिसाब छः माह पहले से होगा, यानी इस माल पर जैसे ही मज़ीद छः माह और गुज़रेंगे ज़कात वाजिब हो जाएगी। (फतावा आलमगीरी जिल्द:१ पेज: ९०)

अगर कोई शख़्स साल भर तक ख़ैरात करता रहा, अब उसने ये नीयत कर ली कि जो कुछ दिया है वो ज़कात है तो ज़कात अदा न होगी। (फतावा आलमगीरी जिल्द: १ पेज: ८७)

ज़कात के अदा करते वक़्त या अपने माल से अलग करते वक़्त नीयत शर्त है, नीयत के अर्थ ये हैं कि अगर उस से पूछा जाये कि ये कैसा माल है तो वह बिना सोचे बता सके कि ये ज़कात का माल है। (ऐज़न)

माल को ज़कात की नीयत अलग कर देने से कोई शख़्स भार-मुक्त न होगा जब तक कि उसकी अदाइगी न हो जाएगी, कल्पना कीजिए कि किसी शख़्स ने अपने माल से ज़कात के माल को अलग

कर दिया और वो माले ज़कात किसी तरह नष्ट गया, तो ज़कात निरस्त न होगी, बल्कि दुबारा उसके ऊपर ज़कात अदा करना वाजिब होगा और अगर मर गया तो इसमें विरासत भी जारी होगी, यानी किसी शख़्स ने अगर अपने माल से ज़कात के माल को पृथक कर दिया और ज़कात अदा न की और इंतिक़ाल हो गया तो उसमें भी विरासत जारी रहेगी। (अलदुर्रुलमुख़्तार जिल्द: ३ पेज: १९१, दारो आलमिलकुतुब, सऊदिया)

ज़कात का रुपया मुर्दे की कफन-दफन या मस्जिद की तामीर में खर्च नहीं किया जा सकता अलबत्ता अगर ऐसी ज़रूरत पेश आ जाए तो ज़कात के रुपये का मालिक किसी फ़क़ीर को बना दे वह अपनी तरफ़ से उन नेक कामों में खर्च करे तो दोनों को सवाब मिलेगा। (अलदुरुलमुख़्तार,जिल्द:२ पेज:६२)

ज़कात देने में इसकी ज़रूरत नहीं है कि फ़क़ीर को ज़कात कह कर दे, बल्कि सिर्फ़ नीयत काफ़ी है, यहाँ तक कि अगर हिब्बा या क़र्ज़ कह कर दे और नीयत ज़कात की हो तो अदा हो जाएगी। (फतावा आलमगीरी जिल्द:१ पेज:१८९, दारुलकुतुब अलइल्मिया, बेरूत)

इसी तरह नज़राना या उपहार या पान खाने के लिए या बच्चों के मिठाई खाने के लिए या ईदी के नाम से ज़कात दी तो ज़कात अदा हो जाएगी, कुछ ज़रूरतमंद ज़कात का रुपया लेना नहीं चाहते, अगर उन्हें ज़कात कह कर दिया जायेगा तो वो लेने से इन्कार कर देंगे इसलिए उनको देते वक़्त ज़कात का लफ़्ज़ बोलना नहीं चाहिए। (बिहार शरीयत पंजुम पेज ८९६ , मकतबा अलमदीना)

अगर (मसलन कोई शख़्स एक हज़ार रुपये का मालिक है और उसने दो हज़ार की ज़कात दे दी और नीयत ये है कि एक हज़ार और हासिल हो गया तो ये उसकी ज़कात है वर्ना आइन्दा साल के हिसाब में जोड़ लिया जाएगा तो ये जायज़ है। (फतावा आलमगीरी ज:१ पे: १९४, दारुलकुतुब अलइल्मिया बेरूत)

अगर किसी व्यक्ति ने अपनी पूँजी व्यापार में लगाया तो साल पूरा होने पर इस असल सरमाया की जो चीज़ें ख़रीदी हैं उनकी क़ीमत लगा

कर और जो मुनाफ़ा हासिल हुए उन सब पर ज़कात वाजिब है।(फतावा रिज़विया जिल्द: ४ पेज: ४२७ मकतबा रिज़विया कराची)

खेत की पैदावार पर ज़कात नहीं है, उश्र है, इसके सिवा अगरचे साल के मुकम्मल होने पर कितना ही गल्ला बच रहे ज़कात वाजिब नहीं है, ज़कात सिर्फ तीन मालों पर वाजिब होती है: सोना चांदी और वो माल जो व्यापार की नीयत से ख़रीदा गया हो या चराई वाले जानवर पर ज़कात वाजिब होती है।(फतावा रिज़विया जिल्द: ४ पेज: ४५०)

ख़ालिस सुन्नी इदारे में ज़कात का माल इस शर्त पर दिया जा सकता है कि मदरसे का अगुवा या प्रबंधक उस माल को अलग रखे और ख़ास फ़क़ीर को मालिक बनाने वाले खर्चों में खर्च करे , मुदर्रिसीन या दूसरे कर्मचारियों की तनख़्वाह इससे नहीं दी जा सकती, न मदरसे की तामीर या मरम्मत वग़ैरा में खर्च हो सकती है, न यही हो सकता है कि जिन छात्रों को मदरसे से खाना दिया जाता है उस रुपये से खाना पका कर उनको खिलाया जाये, अलबत्ता यह किया जा सकता है कि जिन छात्रों को खाना दिया जाता है उनको नक़द ज़कात की नीयत देकर मालिक बना दें, फिर वो अपने खाने के लिए वापस दे दें या जिन छात्रों का वज़ीफ़ा मुक़र्रर हो सिर्फ सहायता के तौर पर उनके वज़ीफ़े में दे दें या किताबें ख़रीद कर छात्रों को उनका मालिक बना दें तो ज़कात अदा हो जाएगी, एक सूरत ये भी हो सकती है कि ज़कात के जितने रुपये मदरसे के मुहतमिम को वसूल हों ज़कात की नीयत से किसी हाजतमंद को मालिक बना दें, वह अपनी तरफ़ से मदरसे को दे दे तो तनख़्वाह मुदर्रिसीन-व-मुलाज़मीन वग़ैरा मदरसों के तमाम खर्चों में खर्च किया जा सकता है। (फतावा रिज़विया जिल्द: ४, पेज: ४६८-४६९ मतबा साबिक़)

अगर किसी शख़्स पर ज़कात वाजिब हुई और उसने कई सालों तक ज़कात अदा न की, अब ज़कात अदा करना चाहता है तो उसकी अदाइगी का तरीक़ा यह है कि पहले साल अव्वल की ज़कात अदा करे, अब उसके बाद दो सूरतों अनुमानित हो सकती हैं:(१)इस माल में

दूसरे साल में इज़ाफ़ा हुआ है (२)इस माल में दूसरे साल में इज़ाफ़ा नहीं हुआ है, पहली सूरत में इज़ाफ़ा वाली रक़म को बाक़ी बचें असल माल से मिला कर ज़कात अदा करे, दूसरी सूरत में सिर्फ बाक़ी माल की ज़कात अदा करे, इसी तरह हर साल की ज़कात अदा कर दे, मसलन किसी के पास सौ तोला चांदी थी तो पहले साल की ज़कात ढाई प्रतिशत निकाले, अब उसके पास साढ़े सतानवे तौला चांदी रह गई, अब देखे कि इस पर इज़ाफ़ा हुआ है कि नहीं, अगर ज़्यादती हुई तो इस ज़्यादती और साढ़े सतानवे तौला चांदी की ज़कात दूसरे साल की अदा करे और अगर इज़ाफ़ा नहीं हुआ है तो सिर्फ सतानवे तौला चांदी की ज़कात निकाले, इसी तरह ज़कात अदा करे, चाहे दस साल गुज़र गए हों या बीस साल इसमें कोई संसोधन नहीं होगा।(माख़ूज़ अज़ फतावा रिज़विया जिल्द: ४ पेज: ४२४ मतबा साबिक़)

अगर कोई शख़्स ज़कात का हक़दार है और उसको ज़कात का माल दिया गया यानी मालिक बना दिया गया, उसको मुकम्मल तौर से इख़्तियार है कि जहां चाहे खर्च करे, बशर्ते कि बुरे कामों में खर्च न करे, यहां तक कि अगर वह चाहे कि किसी मस्जिद में दे दे तो उसको ख़र्च करने का हक़ है, हालांकि बराह-ए-रास्त ज़कात का माल मस्जिद में खर्च करना जायज़ नहीं। (माख़ूज़ अज़ फतावा रिज़विया जिल्द: ४ पेज: ४७५ मतबा साबिक़)

याद-दाश्त
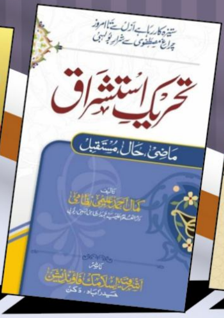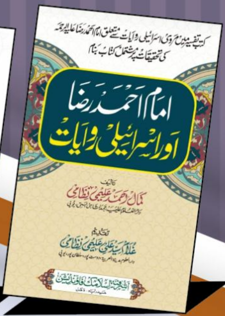
मुसन्निफ की दीगर किताबें